प्राप्त नहीं होती है। जिस विनयवान् अन्य वर्णके पुरुषको ब्राह्मण शासन करता है, उससे समुद्र पर्य्यन्त जगत् नम्र होता है। जैसे हाथियोंके युद्धमें महावत (हाथीवान्) के बिना योद्धाका बल घट जाता है, तैसेही ब्राह्मणसे रहित क्षत्रियका बल हीन हो जाता है, ब्राह्मणकी उपमारहित विद्या और क्षत्रियका असामान्य बल, यह दोनों यदि मिलकर कार्य्य करें, तो लोकमें आनन्द होता है। जैसे वायुको सङ्ग लेकर अग्नि बड़े भारी काष्ठ आदिके समूहकोभी भस्म करदेता है, तैसेही ब्राह्मणकी सहायतासे क्षत्रिय बड़े शत्रुकोभी नाशकर देता है, बुद्धिमान् क्षत्रिय, बिना प्राप्त हुई वस्तुकी प्राप्ति और प्राप्त हुईकी वृद्धिके अर्थ अपनी बुद्धिको ब्राह्मणहीमें लगावे, हे युधिष्ठिर! तुम अप्राप्त वस्तुकी प्राप्ति और प्राप्तिकी वृद्धि तथा तीर्थोंके यथार्थ स्थापनके निमित्त, यशस्वी, वेद जाननेवाले, पण्डित, बहुश्रुत, ब्राह्मणहीको अपने यहां बसाओ, तुम्हारी वृत्ति ब्राह्मणोंमें सदा बहुत ही उत्तम है, अतएव तुम्हारा यश सब लोकोंमें प्रसिद्ध है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब बकदाल्भ्य मुनिने युधिष्ठिरकी ऐसी प्रशंसा करी, तो सब मुनिलोग पुनः प्रसन्न होकर बकदाल्भ्यकी प्रशंसा करने लगे। द्वैपायन (व्यास) नारद, जामदग्नि पृथुश्रवा, इन्द्रद्युम्न, भालुक, कृतचेता, सहस्रपात, कर्णश्रवा, मुञ्ज, लवणाश्व, काश्यप, हारीत, स्थूणाकर्ण, अग्निवेश, शौनक, कृतवाक्, असुवाक्, बृहदश्व, विभावसु, ऊर्द्धरेता, वृषामित्र, सुहोत्र, और होत्रवाहन, इत्यादिको लेकर दूसरे अनेक व्रतधारी ब्राह्मणलोग महाराज युधिष्ठिरकी वैसेही पूजा करने लगे, जैसे इन्द्रकी ऋषिलोग करते हैं।

२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, वनवासी शोक और दुःखसे भरे हुए पाण्डव संध्यासमय द्रौपदी समेत बैठकर वार्त्तालाप करने लगे। अनन्तर सुन्दरी, पण्डिता पतिव्रता, पाण्डवोंकी प्यारी, द्रौपदी धर्म्मराजसे ऐसा कहने लगी। द्रौपदि बोली, उस पापी, निर्लज्ज, दुरात्मा, धृतराष्ट्रके पुत्रको, हमारे दुःख पानेसे निश्चय कुछभी दुःख नहीं है। हे राजन्! जिस दुष्टने मेरे समेत आपको वनवास देकर हरिण चर्म्म उढ़ाकर कुछभी दुःख नहीं पाया, जिसने धर्म्म परायण आपको रूखीबात सुनायी, जो पापी, दुरात्मा सुखके योग्य, दुःखके अयोग्य, आपको इस दुर्दशामें डालकर आप बन्धुओंके सहित सुख भोगता है; निश्चय उस दुर्म्मति, दुष्कर्म्मीका हृदय लोहेका है। हे भारत! जब आप हरिण चर्म्म धारण करके वनको चले थे, उस समय दुर्य्योधन, कर्ण दुरात्मा शकुनी और उस उग्र दुष्ट, दुःशासन, इन्हीं पापियोंके नेत्रसे आंसू नहीं गिरी थीं। हे कुरुसत्तम! और जितने कौरव थे, वे सब दुःखसे भरकर रोने लगे थे। हे महाराज! आपके पहिले पलङ्गको स्मरणकर और इस शयनस्थानको देखकर मैं सुखके योग्य और दुःखके अयोग्य आपकोही सोचती हूं। वह हाथीदांतका बना हुआ, सभाके मध्यमें शोभित, रत्नोंसे जड़ा हुआ, आपका सिंहासन स्मरण करके और यह कुशाके आसनको देखकर मुझे शोक घेरे लेता है, हे महाराज! मैंने जिस आपको सभाके मध्यमें सहस्रों राजोंसे वेष्टित देखा था, आज उन्हीं आपको एकले और दुःखी देखकर कहिये तो मेरे हृदयको कैसे शान्ति हो सकती है। हे भारत! जिस मैंने आपको चन्दनसे लिप्त-शरीर तथा सूर्य्य समान तेजयुक्त देखा है, सो मैं आज धूल, और मैलेभरे शरीरवाले आपको देखकर मूर्च्छित हुई जाती हूं। हे राजेन्द्र! जिस मैंने आपको उत्तम निर्म्मल रेशमके वस्त्रधारण किये देखा

था, सो मैं आज आपको चर्म्म ओढ़े देखती हूं, हे महाराज! जो सोनेके बर्त्तनमें रखकर सहस्रों ब्राह्मणोंको सब कामनायुक्त (यथेच्छा) उत्तम संस्कार किया हुआ, अन्न आपके घरसे मिलता था, जो ब्रह्मचारी और घरमें रहनेवाले यतियोंको उत्तम गुणयुक्त भोजन दिया था, जो सब कामको प्राप्त करके सहस्रों ब्राह्मण पहिले घरमें पूजे जाते थे, हे राजन्! हे नाथ! वह सब अब न देखनेसे मेरे हृदयकी क्या शान्ति होगी! हे महाराज! जिन आपके भाइयोंको कुण्डलधारी युवा सूप लोग परम उत्तम संस्कार किये सुस्वादु अन्न भोजन कराते थे, उनहीं सबको अब वनमें फल, मूल, और मांस खाकर जीते देखती हूं। हे नरनाथ! इन दुःखोंके अयोग्य तुम्हारे भाइयोंकी यह दशा देखकर मेरा मन शान्त नहीं होता है। हे महाराज! इन भीमसेनको दुःखित और वनवासी देखकर इनके दुःखका ध्यान करके क्या आपको यह काल प्राप्त होनेपरभी क्रोध नहीं बढ़ता? यह भीमसेन एकलाही युद्धमें धृतराष्ट्रके सब पुत्रोंको नाश करनेकी शक्ति रखते हैं, यह केवल आपकी प्रतिज्ञाकी पालनेके निमित्त सब सह रहे हैं। जो दो बाहुवाले अर्जुन सहस्र बाहुवाले अर्जुन कृतवीर्य्य हैहयके तुल्य हैं, जो बाणोंको शीघ्र चलाने और शत्रुके मारनेमें यमराजके समान हैं, जिनके शस्त्रके प्रतापसे सब राजालोग लघु बनकर आपके यज्ञमें ब्राह्मणोंके समीप आये थे, देव और दानवोंसे पूजित नरसिंह अर्जुनको चिन्तायुक्त देखकर, हे महाराज! आपको क्रोध क्यों नहीं आता? दुःख सहनेके अयोग्य, और सुखभोगनेके योग्य कुन्तीनन्दनोंको वनमें आये हुए देखके आपको क्रोध नहीं आता, इसीसे मुझे सन्देह होता है। जिसने एकही रथसे देवता मनुष्य और सर्पोंको जीता, उसको वनवासी देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? जिन्होंने अद्भुत रूपवाली सवारी, हाथी और घोड़ोंसे आच्छादित होकर बलपूर्व्वक राजोंसे धन लिया था; जो एकहीबार पांचसौ बाण छोड़ते हैं उन अर्जुनको वनवासी देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? श्यामवर्णवाले, उद्यमी, युवा और युद्धमें तलवार ढाल चलानेवालोंमें श्रेष्ठ नकुलको वनमें देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? हे युधिष्ठिर! मनोहर रूपवाले शूर वीर माद्रीपुत्र सहदेवको वनवासी देखके आप क्यों क्षमा करते हैं? नकुल सहदेव जो दुःख भोगनेके योग्य नहीं हैं, उन दोनोंको दुःखी देखकर आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? हे राजन्! राजा द्रुपदके कुलमें उत्पन्न हुई, महात्मा पाण्डुकी पुत्रवधू, धृष्टद्युम्नकी बहिन, और अनुकूल रहनेवाली मुझ वीरपत्नीको वनमें फिरती देखके आप क्यों क्षमा करते हैं? हे श्रेष्ठ! निश्चय होता है, कि यथार्थमें तुमको क्रोधही नहीं है। इसीसे तुम्हारा मन अपने भाइयोंको और मुझे देखके पीड़ित नहीं होता है। क्षत्रिय शब्दका यही अर्थ है, कि जिसमें क्रोध हो वही क्षत्रिय है और जिसमें क्रोध न हो वह क्षत्रिय नहीं है, अब मैं तुममें उसका विपरीत भाव देखती हूं! हे कुन्तीनन्दन! जो क्षत्रिय समय पाकर क्रोध नहीं करता है, सबप्राणी उसकी सदा निन्दा करते हैं। इस कारणसे तुमको शत्रुओं पर कदापि क्षमा न करनी चाहिये, इसमें सन्देह नहीं है, कि शत्रु लोग क्रोधसेही मारे जायंगे। ऐसेही जो क्षत्रिय क्षमा योग्य समयमें शान्त नहीं रहता है, वह सब प्राणियोंका अप्रिय होजाता है और उसके यहलोक और परलोक दोनों नाश हो जाते हैं।

२७ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, इस विषयमें इस पुराने इतिहासका लोग उदाहरण दिया करते हैं, जिसमें प्रह्लाद और विरोचनके पुत्र बलिका सम्वाद वर्णित है। महाबुद्धिमान् धर्म्म-तत्वों को जाननेवाले सुरोंके स्वामी प्रह्लादसे उनके पौत्र बलिने पूंछा, कि हे तात! मुझे इनमें बड़ा सन्देह है, कि क्षमा उत्तम है, वा क्रोध उत्तम है? मैं आपसे पूछता हूं, आप यथार्थ कहिये। हे धर्म्मज्ञ! जो इनमें उत्तम हो, उसे आप संशय-रहित होके कहिये; जैसी आज्ञा होगी वैसाही मैं करूंगा। ऐसा प्रश्न करनेवाले, बलिसे निश्चय-पूर्व्वक जाननेवाले पितामह प्रह्लाद यों वर्णन करने लगे। प्रह्लाद बोले, न सदा क्रोधही उत्तम है, और न सदा क्षमाही श्रेष्ठ है। हे प्यारे! इनको तुम सन्देह-रहित होके समझ लो; हे तात! जो सदा क्षमा करता है, उसे बहुत दुःख भोगने पड़ते हैं; उसके सेवक उसका अनादर करते हैं, शत्रुलोग उससे उदासीन रहते हैं। हे पुत्र! क्षमावाले मनुष्यको कोई प्राणी प्रणाम नहीं करता है; इस कारणसे सदा क्षमा करना पण्डितोंके वास्तेभी मना है। क्षमाशील मनुष्यके सेवक निन्दा करके बहुतसे दोषोंको धारण करते हैं, मन्दबुद्धि सेवकलोग क्षमाशीलका धन छीनना चाहते हैं। सवारी, वस्त्र आभूषण, शय्या, आसन, खानेपीनेकी सम्पूर्ण सामग्री अधिकारी लोग सब ले लेते हैं। क्षमाशीलके अधिकारी लोग इच्छाचारी, वैप बना रहते हैं, और स्वामीकी आज्ञानुसार कोई-वस्तु नहीं देते हैं। सेवकलोग क्षमाशीलको मालिकके समान आदर नहीं करते हैं; अनादर करनाभी बुरा है। क्षमा करनेवालेको सेवक दूत, पुत्र, तथा और लोगभी गाली देते हैं। क्षमावालेकी स्त्री उसको निन्दा करती है और स्वेच्छाचारिणी हो जाती है, और नित्यही स्वामीकी सेवाको छोड़कर उत्सवोंमें लगी रहती है। यदि स्त्रियोंको स्वामी कुछभी दण्ड न दे, तो स्त्री दुष्ट होकर कुकर्म्म करने लगती हैं, हे विरोचननन्दन! इन दोषोंके सिवाय और भी बहुतसे दोष क्षमाशील लोगोंको भोगने पड़ते हैं। आगे क्रोधी लोगोंके दोषोंको समझो। उचित स्थानमें नित्यही रजोगुणसे आवृत और क्रोधसे पूरित होकर नित्यही अपने आधीन पुरुषोंको जो दण्ड देता है, सो क्रोधके वशमें होनेसे अपने मित्रोंका विरोधी बनता है, और जगत्‌में मित्रोंसे द्वेषको प्राप्त होता है, अर्थात्, मित्रलोग उससे द्वेष रखने लगते हैं; मित्रोंके द्वेषसे धनका नाश होता है; तब उस पुरुषको सब लोग धिक्कार देने लगते हैं; तब अनादर दुःख द्वेष और मोहको प्राप्त होते हैं। अनन्तर उसके शत्रुभी उत्पन्न होते हैं; जो क्रोधके वशमें होकर अन्यायसे मनुष्योंको दण्ड देता है, सो शीघ्रही ऐश्वर्य्य, मित्र और प्राणोंकोभी नष्ट करता है। जो अपने उपकारी और चोरोंको बलसे दण्ड देता है, उससे लोकके पुरुष ऐसा डरते हैं, जैसा बिलमें बैठे हुए सांपसे, और जिससे जगत्‌के लोग घबड़ाते हैं, उसका कल्याण कैसे हो सक्ता है? यह निश्चय है, कि वहोलोग समय देखकर उसको हानि अवश्य करते हैं; अतएव सदा क्रोधहीमें नहीं रहना चाहिये और न नित्य साधु होकर रहना उचित है। जैसा समय हो वैसाही तेज वा शान्त स्वभाव रखना चाहिये। जो समय पाकर शान्त और समय पाकर तेज होता है, वह इस लोक और परलोकमें सुखको प्राप्त करता है। पण्डित लोगोंने जो क्षमाके समय कहे हैं; जिनको पुरुषोंको कदापि न छोड़ना चाहिये, उनको हम विस्तार-सहित कहते हैं तुम सुनो। जिसने पहिले कोई उपकार किया हो और पश्चात् भारी अपराधभी किया हो, उसका वह अपराध पूर्व्व उपकारके बदले क्षमाकर देना चाहिये। जो मुर्ख निर्बुद्धि

होनेके कारण कोई अपराध करे, तो वहभी क्षमा करने योग्य है, क्योंकि सबलोगोंका पण्डित होना सुलभ नहीं है। जो दुष्टात्मा जानकर थोड़ा अपराधभी करे और कहे कि मैंने विना जाने किया है, उस पापीको अवश्य मारडालना चाहिये। यदि एकही अपराधको बहुतसे पुरुष मिलकर करें, तो उन सबहीको क्षमाकर देना चाहिये। यदि उनमेंसे किसी एकपर थोड़ाभी दूसरा अपराध पाया जाय, तो उसे दण्ड देना उचित है। यदि बिना जाने, कोई पुरुष किसी अपराधको करे, तो उसकी परीक्षा उत्तमरूपसे करके क्षमा करना चाहिये, क्योंकि क्षमाही से साधु और असाधु दोनों मारे जाते हैं; क्षमासे कुछ सिद्धि नहीं होती, अतएव अत्यन्त तेज होनाही मृदु-भाव है। देशकाल, अपना बल और दुर्ब्बलता देखकर सबकार्य्य करना उचित है, क्योंकि अदेश और असमयमें कोई कार्य्य नहीं होता; अतएव देश और कालको देखो और ऐसा भी कहा है, कि लोकके भयसेभी अपराधको क्षमा करना चाहिये। इस प्रकारसे क्षमाके समय कहे हैं। इन सबोंसे भिन्न एक तेजका काल कहा है; सो हे महाराज! लोभी, निरन्तर अपराध करनेवाले धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे आपका तेज काल प्राप्त हुआ है, मेरी बुद्धिमें अब कौर-वोंके ऊपर क्षमा करनेका समय नहीं है; इस तेजकालमें आप उन पर तेजपात कीजिये। अत्यन्त कोमल राजाका अनादर होता है, और अत्यन्त तेज राजासे पुरुष घबड़ाते हैं; जो समयके अनुसार कोमल और तेज होजाता है, वही राजा होनेके योग्य है।

२८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सुन्दरि! क्रोधही पुरुष-का नाश कर देता है, और फिर क्रोधहीसे वृद्धि होती है। हे महापण्डिते! तुम निश्चय जानो कि क्रोधही हानि और लाभका मूल है। जो पुरुष क्रोधको नाश करता है, उसका कल्याण होता है। हे शुभे! जो पुरुष सदाही क्रोधके वशमें रहता है उसके नाशका कारण वही परम क्रोध ही जाता है। क्रोधही प्रजाके नाशका मूल है, सो ऐसे लोक नाशक क्रोधको मेरे समान पुरुष कैसे कर सक्ता है? क्रोधी पुरुष कठिन बात बोलता है, और माननीय पुरुषोंका भी निरादर कर देता है; क्रोधी नहीं जान सक्ता, कि यह बात कहनेके योग्य है या नहीं। कोई ऐसा काम नहीं है, जिसे क्रोधी न कर सके! कोई ऐसी बात नहीं है, जिसे क्रोधी न कह सके; क्रोधी अवध्यकोभी मार सक्ता है; और बध्य की पूजा करसक्ता है; क्रोधी अपने जीवनको भी नष्ट कर सक्ता है। यही सब दोष देख कर, इस लोक और परलोकमें उत्तम कल्याणकी इच्छा करनेवाले महात्माओंने क्रोधको जीता है। हे द्रौपदि! पाण्डतासे त्यागने योग्य उस क्रोधको हमारे समान पुरुष कैसे कर सकता है? यही विचार कर हमें क्रोध नहीं बढ़ता। जो क्रोधीके ऊपर क्रोध नहीं करता, वह अपनेको और दूसरेको महाभयसे बचाता है, अतएव वह दोनोंका वैद्य है। यदि दुर्ब्बल मूर्ख बलवान क्रोधीके ऊपर क्रोध करे, तो अपने शरीरका नाश करता है। हे द्रौपदि! जो अनात्माजित् अपनी आत्माका नाश करता है, उसका स्वर्गवास नाश होता है, अतएव दुर्ब्बलको उचित है, कि अपने क्रोधको वशमें रखे। जो विद्वान बलवान होने परभी क्लेश सहता है, और क्लेश देनेवालेको क्लेश नहीं देता, वह स्वर्गमें आनन्द करता है; अतएव जाननेवाले दुर्ब्बल वा बलवान पुरुषको क्षमाही करनी उचित है। हे कृष्णे! क्रोधसे विजय करना, दोनों लोकोंमें प्रिय है; झूठसे सत्य अच्छा है और निर्लज्जतासे लज्जा अच्छी है। उस बहुत दोषोंसे भरे हुए साधुनिन्दित क्रोधको दुर्य्योधनके

मारनेके निमित्त मेरे समान पुरुष कैसे कर सकता है? जिसको दीर्घदर्शी पण्डित लोग तेजस्वी कहते हैं, निश्चय करके क्रोध उसके हृदयमें नहीं रहता। जो उत्पन्न क्रोधको अपनी बुद्धिसे नाश करता है तत्वदर्शी बिद्वान-लोग उसीको तेजस्वी कहते हैं; हे सुश्रोणि! क्रोधी पुरुष कार्य्यको ठोक नहीं जान सकता; क्रोधीपुरुष अकर्त्तव्य और मर्य्यादाकोभी नहीजान सक्ता है। क्रोधी पुरुष अबध्यको भी मार डालता है; मान्य पुरुषोंको भी दुःख देता है; अतएव उत्तम पुरुषको उचित है, कि क्रोधको दूरही रखे। कार्य्यमें कुशलता, शत्रुओंका हानि-चिन्तन, शत्रुओंके जीतनेकी शक्ति, यह जो तेजके गुण हैं; सो क्रोधी नहीं प्राप्त हो सकते। हे महाप्राज्ञे! जो पुरुष क्रोधको छोड़ता है, उसका तेज भली भांति बढ़ता है। तेजस्वी पुरुषका क्रोध समय-पर सहने योग्य नहीं होता। मूर्खलोग क्रोध-हीका तेज कहते हैं और मनुष्यमें रजोगुण लोकके नाशार्थही दिया गया है, अतएव उत्तमा-चरण करनेवाले पुरुषको क्रोध छोड़ देना चाहिये। क्रोधी पुरुष अपने उत्तम धर्म्मसे नष्ट हो जाता है। हे आनन्दिते! यदि मूर्खलोग उत्तम कामोंको नांघ जाय, तो क्या हमारे समान पुरुषभी वैसेहो करें? यदि मनुष्योंमें पृथिवीके समान क्षमा करनेवाले पुरुष न हों, तो सान्धिहो न हो; क्योंकि क्रोध विग्रहका मूल है। दुःखी पुरुष गुरुकोभी दुःख दे और गुरुको मारनेपरभी गुरुको मारे इस प्रकार अधर्म्म फैलनेसे लोकका नाश होसक्ता है। गाली देनेपर दूसरेको गाली दे, पीटनेसे पीटे, मारनेसे मारे, पिताको पुत्र, पुत्रको पिता, पतिको स्त्री और स्त्रीको पति क्रोधके वशमें होकर मारडाले। हे कृष्णे! इस प्रकार लोकमें क्रोध फैलनेसे संसारमें जन्म होना बन्द हो सक्ता है। हे शुभानने! जन्मका मूल मिलही है। हे द्रौपदि! इस प्रकारका क्रोध होनेसे प्रजा शीघ्रही नष्ट हो सक्ती है, अतएव क्रोध प्रजाके नाशका मूल है, और दुःखका कारण है, पृथिवीके समान क्षमावान पुरुष लोकमें दीखते हैं, अतएव प्रजाका जन्म और कल्याण होता है, हे सुशोभने! पुरुषको उचित है कि जगतमें क्षमा करता रहे, क्योंकि क्षमाहीसे जगतमें जन्म और कल्याण होता है। जो पुरुष गाली सुनकर मार खाकर क्रोधी होनेपरभी बलवान् पुरुषको क्षमा करता है, जो पण्डित उत्तम पुरुष प्रभाववान होकर भी क्रोधको अपने वशमें रखता है, उसको अक्षय स्वर्ग मिलता है। जो मन्द-बुद्धि क्रोधके वशमें रहता है, सो इस लोक और परलोकमेंभी नष्ट होता है। हे कृष्णे! क्षमा-वान् महात्मा काश्यपने क्षमावान पुरुषोंकी जो कथा कही है, उसका उदाहरण पण्डितलोग इसी स्थान पर देते हैं। क्षमाही धर्म्म है, क्षमाही यज्ञ है, क्षमाही वेद है और क्षमाही सुननेका फल है। जो पुरुष इसको अच्छी प्रकार जानता है वही सब क्षमा करनेमें समर्थ है। क्षमाही ब्रह्म है, क्षमा सत्य है, क्षमाही घी और क्षमाही होगी; क्षमा जय है, क्षमाही पवित्रता है, और क्षमाहीसे जगत् स्थिर है। जो लोक वेद जाननेवाले ब्रह्मवेत्ता और तपस्वियोंको मिलते हैं, क्षमावान पुरुषभी उनही लोकोंको प्राप्त करता है। अग्निहोत्र कर्म्म करनेवाले पुरुषोंके दूसरे लोक हैं; परन्तु क्षमावान पुरुषोंको परम पूजायुक्त ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। तेजस्वी पुरुषोंका तेज क्षमाही है। तपस्वियोंको ब्रह्म क्षमाही है। सत्यवान् पुरुषोंको क्षमाही योग्य है। क्षमाही इन्द्रि-योंको वश करनेका फल है।

हे कृष्णे! ऐसी क्षमाको हमारे समान पुरुष किस प्रकार छोड़ सकता है? जिस क्षमामें ब्रह्म, सत्य, यज्ञ और लोक प्रतिष्ठित हैं। अतएव जाननेवाले पुरुषको सदा क्षमाही करना उचित है। जब पुरुष क्षमा करता है, तब उनको ब्रह्म प्राप्त होता है। क्षमावानके

निमित्त यह लोक और परलोक सुखदायक है। इस लोकमें क्षमावान पुरुषको सम्मान और परलोकमें उत्तम गति प्राप्त होती है। जिस पुरुषकी क्षमाको क्रोध नाश कर देता है, उसको उत्तम लोक नहीं प्राप्त होते ; इस हेतु क्षमा उत्तम वस्तु है। हे द्रौपदि! क्षमावान पुरुषोंकी यह कथा काश्यप मुनिने कही है, तुम यह सुनकर शान्त हो और क्रोध मत करो। क्षमा करनेसे शान्तनुपुत्र हमारे दादा भीष्म और देवकीपुत्र श्रीकृष्ण प्रशंसा करेंगे ; गुरु द्रोणाचार्य्य, विदुर, कृपाचार्य्य, सञ्जय क्षमा ही की प्रशंसा करेंगे। सोमदत्त युयुत्सु, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा और हमारे पितामह व्यासदेव क्षमाही की वर्णन करते हैं! इन सबके कहनेसे युद्धको उद्यत राजा धृतराष्ट्र शान्त होकर हमको राज्य देंगे, ऐसा हमारी बुद्धिमें निश्चय होता है। यदि न देंगे तो लोभसे नष्ट होजायेंगे। हे सुन्दरि! मैं जैसा पहले निश्चय किया करता था, सोई भरतकुल नाशका यह दारुण समय प्राप्त हुआ है। दुर्य्योधन क्षमा-करनेमें असमर्थ है ; अतएव राज्यके योग्य नहीं है। मैं राज्यके योग्य हूं, अतएव क्षमा करना भी मुझको उचित है ;—यही धर्म्मज्ञोंका चरित्र है और यही सनातन धर्म्म है। मैं तत्त्वविचार करके क्षमा और लज्जाको धारण करता हूं।

२८ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, हे महाराज! मैं उस परमेश्वर और प्रारब्धको नमस्कार करती हूं, जिसने बाप दादासे प्राप्त राज्यको प्राप्तिमें आपकी बुद्धिको उलट दिया है। कर्म्मसे पृथक उत्तम, मध्यम और नीचयोनि अलग प्राप्त होती हैं, अतएव कर्म्मही निश्चल है। लोभसे मोक्षकी इच्छा होती है। जगत्में धर्म्म निर्लज्जता, क्षमा साधुता या दुष्ट कर्म्मसे कदापि लक्ष्मीको प्राप्त नहीं कर सकता ; अतएव कर्म्महो नित्य है। हे भरतवंशावतंश! देखिये आप और आपके महातेजस्वी भाई-लोग जिस दुःखके योग्य नहीं थे, उस कठिन दुःखको प्राप्त हुए हैं। हे भारत! मैं जानती हूं कि राज्यके समयमें और इस समय भी धर्म्मसे प्रिय आपको और कुछ नहीं है, आप जीवनसे भी धर्म्मको अधिक मानते हैं ; इसको देवता, ब्राह्मण और गुरुलोग भी जानते हैं, कि आपका राज्य और जीवन धर्म्महीके निमित्त हैं। मुझे यह निश्चय है कि आप भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, और मुझको भी त्याग सकते हैं ; परन्तु धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे। मैंने आर्य्य पुरुषोंके मुखसे यह सुना था कि धर्म्मरक्षक राजाकी धर्म्मही रक्षा करता है, परन्तु जान पड़ता है, कि वह धर्म्म आपकी रक्षा नहीं करता। हे पुरुषसिंह! आपकी बुद्धि सदैव धर्म्ममें इस प्रकार रहती है, जैसे छाया पुरुषके पीछे फिरा करती है। हे महाराज! सब पृथ्वीका राज्य प्राप्त होने पर भी आपने कभी अपने समान पुरुषोंका अपमान नहीं किया, न कभी आपको नीच पुरुषोंकी तरह अभिमान कदापि उत्पन्न हुआ। हे महाराज! आपने निरन्तरही स्वाधा और पूजासे ब्राह्मण, देवता और पितरोंकी तृप्ति की हैं। हे भारत! आप मोक्षकी इच्छा रखनेवाले सन्न्यासी और गृहस्थ ब्राह्मणोंको सदा इच्छानुसार तृप्त करते रहे हैं। हे महाराज! जो मैं दासियों समेत सोनेके पात्रमें ब्राह्मणोंको भोजन कराती थी, सो आज वनवासियोंसे लोहेके पात्र प्राप्त करती हूं, आपके पास कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जो ब्राह्मण लोगोंको दीजाय। हे राजन्! यह जो आपके घरमें शान्तिके निमित्त बलि-वैश्वदेव कर्म्म होता है, इसमें ब्राह्मण और अतिथियोंको देकर जो बचता है, उसीको खाकर आप जीते हैं। काम्य और नैमित्तिक पशु-सहित यज्ञ और औरभी कर्म्म राज्य नष्ट

होनेपर, चारोभाइयोंके सहित इस महावनमें वास करके भी आप करते हैं, इससे जान पड़ता है, कि धर्मको आपने अभीतक नहीं छोड़ा। हे महाराज! मुझको एकसन्देह है, कि आपने अश्वमेध, राजसूय, और गोसव पुण्डरीक आदि महायज्ञ करके ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा दी है, और जुएमें विपरीत बुद्धि धारण करके राज्य, धन, भाई और मुझेभी हारा है! हे कोमल सीधे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! सत्यवादी! आपकी बुद्धि किस प्रकार जुएमें लगी थी? हे महाराज! मुझको अत्यन्त शोक होता है, और मनको ग्लानि आती है, जब आपको और अपनेको इस दुःखमें पड़े हुए देखती हूं। ईश्वरके वशमें लोक स्थित हैं, अपने वशमें नहीं। ऐसे स्थान-पर इस पुराने इतिहासका उदाहरण देते हैं। पहले कर्मके बीजका आश्रय लेकर ईश्वरही सुख, दुःख, प्रिय और अप्रिय फलका विधान करते हैं। हे नरवीर! हे राजन्! जिस प्रकार कठपुतली नचानेवाले पुरुषके वशमें रहती है, वैसेही यह जगत्भी ईश्वरके वशमें रहता है। हे भारत! ईश्वर आकाशके समान सबमें व्याप्त होकर कल्याण और पापके फलको यथायोग्य देते हैं। जैसे पक्षी डोरमें बंधकर अवश हो जाता है, वैसेही जगत्भी अपना और दूसरेका स्वामी नहीं है। जैसे नाकमें रस्सी डालनेसे बैल बेवश होजाता है, जैसे पानीकी धारामें आकर वृक्ष अपने समूहसे टूटकर बहने लगता है, और उसका बहनाभी उसके वशमें नहीं है, यह सब परमेश्वरकी आज्ञासे होता है; मनुष्य अपने अधीन होकर कदापि किसी समयमें कोई कार्य्य नहीं करता है। यह मूर्ख जीव अपने सुखका स्वामी नहीं है, ईश्वरहीकी प्रेरणासे स्वर्ग और नरकको प्राप्त करता है। हे भारत! जिस प्रकारसे तिनकेका अग्रभाग बलवान वायुके वशमें होकर हिलता है, वैसेही समस्त प्राणी लोगभी ईश्वरके वशमें रहते हैं। ईश्वर उत्तम और नीच कर्म्म करते हुए जगत्में व्यापक होकर घूमते हैं, परन्तु किसीको दिखाई नहीं देते। यह शरीर परमेश्वरका स्थान होनेपरभी हेतुमात्र है, इसीके द्वारा ईश्वर शुभ और अशुभ कर्म्म कराते हैं, देखो, परमेश्वरकी कैसी माया है! कि एक प्राणी दूसरे प्राणीको मायासे मोहित होकर नष्ट करता है। जैसे सूर्य्यकी किरण सब ओर फैलती है, वैसेही प्राणीलोगभी सर्व्वत्र फैले हैं, परन्तु तत्वदर्शी मुनियोंने जैसा उपदेश किया है, यह लोग उससे उलटाही आचरण करते हैं। मनुष्यलोग जिन जिन कामोंको दूसरे प्रकार मानते हैं, ईश्वर उनही कामोंको दूसरे प्रकारसे करते हैं, और कभी नहीं भी करते। जिस प्रकारसे चेतना-रहित, चेष्टाशून्य काष्ठको काष्ठसे, पत्थरको पत्थरसे और लोहेको लोहेसे काट देते हैं, हे युधिष्ठिर! उस प्रकारसे वह सबका प्रपितामह आपही उत्पन्न होनेवाले भगवान् ब्रह्मा प्राणियोंको प्राणियोंसे नष्ट करते हैं। जिसप्रकारसे बालक खिलौनोंको बनाकर खेलता है, वैसेही परमेश्वर भी समस्त प्राणियोंका अपनी इच्छानुसार संयोग और वियोग कराके खेलते हैं। हे राजन्! जिस प्रकारसे सामान्य पुरुष क्रोधके वशमें होके आचरण करते हैं, अथवा जैसे माता और पिता आचरण करते हैं, वैसे सब प्राणियोंमें ब्रह्मा आचरण नहीं करता। क्योंकि देखते हैं कि उत्तम आचरणयुक्त लज्जावान पुरुष खानेसे भी दुःखी और चिन्तासे पीड़ित रहते हैं, और दुष्टलोग आनन्द करते हैं;—देखिये आपको यह आपत्ति और दुर्य्योधनको सुख हो रहा है। हे कुन्तीनन्दन! यही देखकर मैं विषम-दर्शी ब्रह्माकी निन्दा करती हूं! आर्य्य शास्त्रको छोड़नेवाले, क्रूर, अधर्म्मी और लोभी धृतराष्ट्रपुत्रको लक्ष्मी देकर ब्रह्मा क्या फल पावेंगे? यदि किया हुआ कर्म्म कर्त्ताको छोड़ और किसीको प्राप्त नहीं होता, तो पाप

कर्म्मका फल ईश्वरहीको होता होगा, क्योंकि वही सबका प्रेरक है। यदि किये हुए कर्म्मका पाप कर्ताको नहीं प्राप्त होता, तो इसमें बलही कारण होगा, अतएव मुझे दुर्बलोंका बड़ा शोच है।

३० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे याज्ञसेनि! तुमने जो उत्तम विचित्र और कोमल वचन कहा, सो हमने सुना. परन्तु यह सब वेदके विरुद्ध होनेसे नास्तिकोंका वाक्य है। हे राजपुत्री! मैं कर्म्मके फलको इच्छासे नहीं दौड़ता हूं, मेरा यही प्रण है,—देता हूं. यह वस्तु देने योग्य है, यज्ञ करता हूं और यह करने योग्य है। हे कृष्णे! मैं घरमें रहूं वा नहीं, शक्ति अनुसार यही कर्म्म करता हूं और यही पुरुषको करने योग्य है, चाहे फल हो वा न हो। हे सुश्रोणि! मैं आनेवाले कर्म्मोंको उलङ्घन करके उत्तम पुरुषोंका कर्म्म देखकर धर्म्म करता हूं. परन्तु उसके फलको इच्छा नहीं रखता। हे कृष्णे! मैंने अपने स्वभाव और मनसे धर्म्मको धारण किया है, जो पुरुष धर्म्मका व्यापार करता है अर्थात् धर्म्म करके इसके फलको इच्छा करता है, वह हीनपुरुष धर्म्मज्ञानियोंमें नीच माना जाता है। जो धर्म्मको दोहता चाहता है अर्थात् उसके फलकी इच्छा करता है और जो पापी नास्तिकतासे धर्म्म करके उसमें शङ्का करता है, वह धर्म्मके फलको नहीं प्राप्त होता। मैं ठीक वेदके प्रमाणसे कहता हूं कि तुम धर्म्ममें शङ्का मत करो, क्योंकि धर्म्म में शङ्का करनेवाले पुरुषकी नीच गति होती है। जिस दुरात्मा पापीको धर्म्ममें अथवा ऋषि प्रणीत पुस्तकोंमें शङ्का हो, वह वेदसे शूद्रके समान सब लोकोंसे और मोक्षसे नष्ट होता है। हे मनस्विनि! वेदका पढ़नेवाला, धर्म्मज्ञ, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ. राजोंमें ऋषि बालक भी क्यों न हो, परन्तु धर्म्म करनेवाले वृद्धोंमें गिना जाना चाहिये। जो पापी, मन्दबुद्धि शास्त्रको छोड़कर धर्म्ममें शङ्का करता है, वह शूद्र और चोरोंसे भी नीच गिना जाता है। देखो तुमने अपनी दृष्टिसे देखा कि, महातपस्वी महात्मा धर्म्महीसे बहुत कालतक जीते हैं। देखो व्यास, वशिष्ठ, मैत्रेय, नारद, लोमश और शुक्र आदिको लेकर औरभी अनेक महर्षि लोग धर्म्महीसे ज्ञानको प्राप्त हुए हैं। तुम इन सबको प्रत्यक्ष देखती हो, कि यह लोग दिव्य योग सहित शाप और अनुग्रहमें समर्थ देवतोंसेभी उत्तम हैं। हे पापरहिते! यही लोग प्रत्यक्ष और आगम (प्रमाणविशेष) की वृद्धिसे जगतके आदिमें करने योग्य धर्म्मको वर्णन करते हैं। हे कल्याणि! हे राणि! यही सब विचारकर तुमको उचित है, कि मूर्ख मनसे ब्रह्मा और धर्म्ममें आक्षेप और शङ्का न करो, बालक सब पण्डितोंको पागल जानता और मानता है। धर्म्ममें शङ्का करनेवाले पुरुषको उपमा भी मूर्ख बालकके अतिरिक्त और किसीसे नहीं हो सकती। मूर्ख लोग अपनेहीको प्रमाण मानके धर्म्मका अपमान करते हैं और समझते हैं, कि यह जगत् इन्द्रियोंके सुखहीके निमित्त है, और धर्म्मको कुछ नहीं मानते हैं। जो पापी, कृपण सदा धनहीको चिन्ता किया करते हैं, और धर्म्म करनेमें शङ्का करते हैं, उनका प्रायश्चित्त भी नहीं है। जो पापी काम और लोभके वशमें होकर प्रमाणको छोड़के वेद और शास्त्रको निन्दा करता है, सो नरकमें पड़ता है। हे कल्याणि। जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष शङ्कारहित होकर सदा धर्म्महो करता रहता है, सो उत्तम अन्तरहित सुखको भोगता है। जो मूर्ख वेदके प्रमाणको नांघ कर धर्म्मको नहीं पालता और शास्त्रकी मर्य्यादाको नहीं मानता, वह अनेक जन्मोंमें भी सुखको नहीं प्राप्त होता। हे भामिनि! जिसको वेदका प्रमाण और

शिष्टाचार माननीय नहीं है, उसको न इसलोक और न परलोक में सुखप्राप्त होता है। हे कृष्णे! जिस धर्म्मको महात्मा लोग करते हैं, उसमें तुम शङ्का मत करो। यह प्राचीन धर्म्म सर्व्वज्ञ सर्व्वदर्शी महात्मा ऋषियोंने कहा है, हे द्रौपदि! स्वर्ग जानेकी इच्छा करनेवाले मनुष्यको धर्म्मही एक ऐसो नाव है. जैसे समुद्र-से पार जानेवाले वनियेकी नौका। हे अनि-न्दिते! यदि धर्म्म करनेवाले पुरुषोंसे किया हुआ धर्म्म फल-रहित होता, तो यह जगत् प्रतिष्ठाशून्य अन्धकारमें डूब जाता। यदि तप, ब्रह्मचर्य्य, यज्ञ, पढ़ना, दान, साधुता यह निष्फल होता तो कोई भी मोक्षको प्राप्त न होता, सब पशुजीविकासे जोते कोईभो विद्या और धनको प्राप्त न करता; कोईभो हमसे पहिला, उनसे पहिला और पहिलेसे पहिला धर्म्म न करता। यदि धर्म्ममें वञ्चना होती, और यदि क्रिया निष्फल होती, तो ऋषि, देवता, गन्धर्व्व असुर और राक्षसलोग समर्थ होकरभी आदर सहित धर्म्मको क्यों करते? हे कृष्णे! यह सबलोग ब्रह्माको फलके देनेवाले जानकर धर्म्म करते हैं, और ऐसाही सनातन नियम है। सो धर्म्म और अधर्म्म फलसे रहित नहीं हैं, क्योंकि जगत्में विद्या और तपका फल दोखता है; इस लिये धर्म्म वा अधर्म्मको निष्फल नहीं कहा जाता। हे कृष्णे! तुम अपने जन्मका स्मरण करो और यह भी बताओ, कि प्रतापवान् धृष्टद्युम्न कैसे उत्पन्न हुए हैं। हे सुचिस्मिते! धीरपुरुष कर्म्मके फलको पाता है, और थोड़ेहीमें सन्तुष्टभो हो जाता है, इसका उदाहरण जो हमने दिया सोही बहुत है। मूर्ख, निर्बुद्धिलोग बहुत फल पाकरभी सन्तुष्ट नहीं होते, क्या उनको मरने के पश्चात् धर्म्मका कुछ कल्याण प्राप्त होगा? हे भामिनि। वेद सुननेवालोंके सत्कर्म्म और पापियोंके कुकर्म्म फलकर उदय उन्नति या विनाश देवतोंकोभो गुप्त रहता है, अर्थात् वेभी कठिनतासे जान सकते हैं। जो पुरुष यह जानते हैं, कि यह सब प्रजा, इनही विषयोंसे मोहित रहती है, उनको सहस्र कल्पोंमेंभी कल्याण लाभ नहीं होता। यह विषय देवतों करके रक्षित है और देवतोंकी माया बहुत गूढ़ है; इसको आशा रहित, शान्त, तपसे पापको जलाये हुए ब्राह्मणलोग मनको प्रसन्न-तासे देखते हैं। फल न देखनेसे धर्म्म और देवतायोंमें शङ्का नहीं करनी चाहिये। दुष्ट-तासे रहित होकर यत्न करके सदा यज्ञ और दान करना चाहिये; ब्रह्माने अपने पुत्रोंसे कहा था, कि धर्म्मका फल इसी लोकमें है। यह सनातन धर्म्म है; इसका अर्थ कश्यप ऋषिने जाना था। हे कृष्णे! यह सब जानकर तुम्हारा संशय कुहरेके समान नष्ट होना चाहिये। यह सब सत्य हैं, यह निश्चयकर तुम नास्तिक भावको त्याग दो। सब जगत्के बनानेवाले ईश्वरको गाली मत दो। उनका ध्यान करो, उनको नमस्कार करो। तुम्हारी बुद्धि नष्ट न होनी चाहिये। हे कृष्णे! जिसकी कृपा और भक्ति है, सो पुरुष मोक्षको प्राप्त करता है; तुम उस उत्तम देवताका अपमान कदापि मत करो।

३१ अध्याय समाप्त।

द्रौपदो बोली, हे कुन्तीनन्दन! मैं कदापि धर्म्मका अपमान नहीं करती हूं, और जगत्के स्वामी परमेश्वरका अपमानभो नहीं करती हूं। हे भारत! परन्तु दुःखसे व्याकुल हूं, अतएव निरर्थक बकती हूं, और पुनःभी बकूंगी, आप प्रसन्नचित्त होकर सुनिये। हे शत्रु-नाशन्! यह निश्चय है, कि जाननेवालेको कर्म्म करनाही चाहिये, क्योंकि विना कर्म्म किये स्थावरों (नहीं चलनेवालों) को छोड़कर कोईभो जीता नहीं रह सकता। हे युधिष्ठिर! जिस दिन गायका बच्चा उत्पन्न होता है, उस

दिनसे दूधपीना, यह सब कर्म्मोंके वृत्तियोंको प्राप्त होता है। हे भरतकुलसिंह जङ्गमों (चलनेवालों) में विशेषकर अपने कर्म्मके फलोंको पानेकी इच्छा इस लोक और परलोकमें करते हैं। हे भारत! सब प्राणी अपनी प्रारब्धको भोगते हैं, और कर्मके फलोंको जगत्के सामने प्रत्यक्ष भोग करते हैं। ईश्वर और धर्म्मभी कर्म्मके अनुसारही फल देता है। सब प्राणी अपने अपने प्रारब्धको भोगते हैं। देखो यह बगुला भी जलमें अपने कर्म्मका फल भोग रहा है। विना कर्म्म किये हुए किसी प्राणीकी प्रवृत्ति कहीं नहीं होती; अतएव पुरुषको उचित है, कि कर्म्म करे और उसका नाश न करे। सो तुम ग्लानि मत करो, उसी कर्म्मको करो। जो कर्म्म करता है, वह फलको पाता है; उसका कार्य्य और धनबृद्धि होती है। यदि हिमाचलमेंसे निरन्तर हिम काटा ही जाय, तो एक दिन वह भी नष्ट हो सकता है। यदि जगत्में कर्म्म न किया जाय तो सब प्रजा नष्ट हो जायं,और यदि कर्म्मका फल न हो, तो यह सब प्रजा वर्द्धित न हों। कहीं कहीं कर्म्मका फल मनुष्योंको नहीं भी दीखता है, क्योंकि लोकमें कोई भी उलटी बातका नहीं प्राप्त होता। जगत्में जो मन्त्र और औषधोंहीसे कर्म्मसिद्धिका निश्चय करते हैं, और जो नास्तिक हठवादी हैं, यह दोनो कर्म्महीसे बुद्धिको प्रधान मानते हैं। जो मूर्ख कर्म्मके भरोसे बिना यत्न किये सुखसे बैठे रहते हैं, वह वैसेही नष्ट होते हैं जैसे कच्चा घड़ा पानीमें पड़नेसे। जो हठबुद्धि समर्थ होने परभी उपाय नहीं करते, वे दुर्ब्बल अनाथके समान बहुत काल नहीं जीते। जिस किसीको अकस्मात कहींसे धन मिल जाता है, उसको लोग हठ कहते हैं, क्योंकि वह किसीका यत्न नहीं करता है। हे कुन्तीनन्दन! पुरुष जिसका नाम प्रारब्ध कहते हैं, जो देवतोंके आराधनसे होती है, निश्चय करके उसहीको दैवभी कहते हैं। जिस फलको जगत्में पुरुष अपना कर्म्म करके प्रत्यक्ष प्राप्त करता है, उसे पुरुषार्थ कहते हैं। हे पुरुषोत्तम जो कर्म बिना कारणके स्वभावहीसे होजाय उसे स्वाभाविक जानो। इस प्रकारसे हठ दैव, स्वभाव और कर्म्मसे पुरुषको जो जो फल प्राप्त होते हैं, सब पूर्व्वजन्मके फल हैं। सब प्राणियोंके ईश्वर ब्रह्मा भी उन हेतुओंसे पुरुषोंके कर्मोंको अलग करके प्राणियोंको भुगवाते हैं। इस जगत्में पुरुष जो कुछ शुभ और अशुभ कर्म्म करता है, वह सब पूर्व्व जन्मका फल है। इसका कारण देहही है। ब्रह्मा प्राणिको कर्म्मके अनुसार फल देते हैं, और वह उसको अवश होकर भोगता है। हे कुन्तीनन्दन! परमेश्वर सब प्राणियोंको उनहो कर्मोंको भुगाते हैं और यह भी अवश होकर उसहो को भोगता है, जो इसके किये हुए हैं। हे वीरपुरुष! बुद्धिपूर्व्वक पहिले मनमें निश्चय करता है, पश्चात् उसहीको कर्म्मसे करता है अतएव इसका कारण जोत हो हैं। हे पुरुषसिंह! मैं कर्मोंको गिनवानमें असमर्थ हूं, परन्तु घर और नगर अच्छा वा बुरा मिलना यह कर्म्मका फल है। बुद्धिमान पुरुषको इसकी सिद्धिका उपाय अपनी बुद्धिसे ऐसेही निश्चय करना चाहिये—जैसे तिलमें तेल, गायमें दूध और काठमें अग्नि है। पश्चात् अनेक कारणोंसे उसको सिद्धिमें पुरुषकी प्रवृत्ति होती है,परन्तु सिद्धि कर्म्मके फलके अनुसारही होती है। विशेष कर्म्ममें यह ज्ञान होता है, कि यह कुशलसे किया है, अतएव कर्त्ताकी साधुतापूर्व्वक प्राप्त हुआ है, और अमुक कर्म्म अकुशलतासे किया गया है। यदि पुरुष कर्म्मसाध्य विषयमें कारण न होता, तो उसे यज्ञ और तड़ाग आदि कर्म्मका फल कुछ न होता, और कोईका किसी गुरु शिष्य न होता। पुरुष कर्म्म

करनेमें प्रधान है, अतएव कर्म्मकी सिद्धि और नाशमें उसहीकी प्रशंसा और निन्दा होती है। सब कर्मोंकी कोई हठसे, कोई प्रारब्धसे और कोई कोई उपायसे कर्म्मकी सिद्धि बतलाते हैं, यह तीन प्रकारका भेद कहा है। कोई कोई कहते हैं यह सब ठीक नहीं है, क्योंकि हठ और दैव दोनोंही अदृश्य हैं, किन्तु जगत्में अर्थ प्राप्ति कुछ हठ और कुछ दृश्य अर्थसे होती है; इससे यह निश्चय हुआ, कि अर्थसिद्धिमें प्रारब्ध, हठ और स्वभाव तीनोंही कारण हैं। तत्वदर्शी पण्डित लोग जानते हैं, कि इन तीनोंको छोड़कर चौथा कारण और कुछ नहीं है। ईश्वरभी प्राणियोंकी इच्छाके अनुसार इष्ट वा अनिष्ट फल देता है। यदि ऐसा न हो, तो कोईभी पुरुष कृपण न हो। यदि प्रारब्ध न हो, तो पुरुष जिस जिस कामकी इच्छासे जो कर्म्म करता है वह सबही सिद्ध होने चाहिये। जो पुरुष ऊपर कहे तीनों उपायोंके द्वारा अपने कार्य्योंकी सिद्धि और असिद्धिको नहीं देखते हैं, वह लोग मरी हुई देहके समान जड़ हैं। भगवान् मनुका यह निश्चय है, कि सदाही कर्म्म करना चाहिये, क्योंकि कर्म न करनेसे पुरुष चेष्टाहीन हो जाता है। हे युधिष्ठिर! इस लोकमें कर्म्म करनेसे फलसिद्धि अवश्यही होती है, परन्तु आलसी लोग इसको नहीं मानते। हे राजेन्द्र! यदि कर्म करनेसे सिद्धि न हो, तो उसको जाने, कि यह हमारे पूर्व्वकर्म्मफलका प्रायश्चित्त था, अब इसके करनेसे हम उऋण हो गये। जो आलसी सोता रहता है, वह अवश्य दरिद्री होता है, और जो उद्योगी कर्म करता है, वह अवश्य उसके फलको प्राप्त करके सुख भोगता है। जो संशयरहित धीरलोग है, वे लग संशययुक्त लोगोंकोही अर्थ रहित जानते हैं, निःसंशय व्यक्तिको कदापि अर्थरहित नहीं समझते हैं। सो आज काल हमलोग अतिशय करके अनर्थमें पड़े हैं; इस अनर्थ निवारणकी उपाय यदि आप कुछ कर्म करते होते, तो यह अवस्था हम लोगोंको न होती। यदि आपके अनुष्ठित कर्म्मसे कार्य्यसिद्ध न हो, तो वही, भीम, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और आपको भी राज्य अप्राप्तिका सम्पूर्ण रूपसे प्रमाण कहके बोध होगा; तो राज्यकी आशा त्यागके उद्वेग रहित हो सकते हैं। जैसे अन्यान्य लोगोंका कर्म्म सफल होता दीखता है, वैसेही हम लोगोंका भी होसकता है; परन्तु बिना कर्म्म किये पहिले वह कैसे निश्चय बोध होगा? कर्म्म करनेवालाही कर्म्म करने पर उसका उचित फल जान सकता है। जैसे हलसे भूमिको जोतकर किसान बीज बोता है, और दैवको कारण समझके चुप चाप बैठा रहता है; यदि वृष्टि न हो तो किसानका क्या दोष है? इससे ज्ञात होता है, कि दूसरे कारणसे भी फलकी सिद्धि होती है। बुद्धिमान् पुरुषको उचित है, कि यह मेरा अपराध है, और यह नहीं है, यह बिचारकर आत्माको दोष न दे। हे भारत! इस कर्मके करनेमें हमको सिद्धि नहीं होगी, ऐसा समझकर पुरुषको पहिलेही कर्मसे निवृत्त नहीं होना चाहिये, क्योंकि इसमें दो कारण इसरे होते हैं, सिद्धि, असिद्धि, प्रवृत्ति और अप्रवृत्ति इत्यादि। अनेक भाव मिलकर कर्मकी सिद्धि हुआ करती है। यदि पुरुषमें गुण ही न हो, तो कर्मका फल थोड़ा अथवा नहींभी होता है, और जब आरम्भ ही न किया जाय, तो फल और गुण दोनोंही नहीं दीखते हैं। जो बुद्धिमान् पुरुष देश, काल, उपाय, मङ्गल और स्वस्तिकी कर्म सिद्धिमें शक्तिके अनुसार प्रयोग करता है, उसको सिद्धि प्राप्त होती है। इन सब कर्मोंमें पराक्रमही उपदेश करनेवाला है, अतएव पराक्रमही कर्मका कारण दीखता है। बुद्धिमान् पुरुष जहांपर अनेक गुणोंसे अपने कल्याणको देखे, तहां शान्तिहीसे कर्मसिद्धिका

उपाय करे। हे युधिष्ठिर! यदि वह कर्म शान्तिसे न सिद्ध हो, तो शत्रुके दुःख और परदेशके समयको देखता रहे, ऐसा करनेसे समुद्र और पर्व्वतको जीत सकता है, पुरुषोंकी क्या कथा है। प्रारब्धसे युक्त पुरुष सदाही शत्रुके छिद्रको देखता है, वह अपनेको और शत्रुको दोनोंहीको ऋण रहित करता है। पुरुषको उचित है, कि अपनेको कभीभी छोटा न समझे, क्योंकि अपना निरादर करनेसे कभीभी उत्तम कर्मकी सिद्धि प्राप्त नहीं है भारत! इस प्रकार यह कर्मसिद्धिकी होती। व्यवस्था कही; परन्तु इसकी सिद्धि कालके अनुसारही, होती है। हे भरतकुलसिंह! मेरे पिताने एक पण्डित ब्राह्मण को पहले समयमें घरमें रक्खा था, उसीने यह सब कहा था। जब ब्राह्मण मेरे भाइयोंको वृहस्पतिकी कही हुई नीति पढ़ाता था, तब मैंने भी घरमें अपने भाइयोंके पास बैठकर यह सब सुना था। हे युधिष्ठिर! जब मैं पिताकी गोदमें सुननेको इच्छासे बैठी थी, तब उस ब्राह्मणने सान्त्वना सहित मुझको यह सब पढ़ाया था।

३२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, द्रौपदीका यह वचन सुनकर परम क्रोधी भीमसेन क्रोधकर राजाके पास आकर ऐसा कहने लगे, सत्पुरुषोंके योग्य धर्म्मसे युक्त राज्यको प्राप्त कीजिये; धर्म्म, अर्थ और कामसे हीन होकर हम लोगोंको तपस्वियोंके समान वनमें रहना उचित नहीं। दुर्य्योधनने हमारे राज्यको धर्म, साधुता और वीरतासे नहीं लिया, केवल कपटसे लेलिया है। उस इसने हमारे राज्यको इसही प्रकारसे लिया, सिंहका भोजन सियार, बलवानका दुर्ब्बल .र देव बलिका मांस कुत्ता लेता है। गाण्डीव धनुषसे रक्षित राज्यके लेने कि शक्ति इन्द्रको भी नहीं थी, परन्तु आपके कर्त्तव्यसे हमलोगोंके जीतेही हमारा राज्य इस प्रकारसे छिन गया, जैसे लूलेका बेलफल और लंगड़ेकी गाय छिन जाती हैं। हे भारत! आपकी धर्मलाभमें निश्चय युक्त जानकर आपकी प्रीतिकी इच्छासे हमलोग इस महा दुःखको सहते हैं। हे भरतकुलसिंह! आपकी आज्ञासे अपने शरीरको वशमें करके हमलोग अपने मित्रोंको दुःखी और शत्रुओंको आनन्दित कर रहे हैं। आपकी आज्ञाके अनुसार हम लोग जो धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नहीं मारते यह हमारे पापका फल प्रत्यक्ष हो रहा है। आप अपनी इस हरिणोंके समान दुर्दशाको देखिये। हेराजन्! यह दुर्ब्बलोंकी दशा है, कदापि बलवान् इसमें नहीं पड़ते। इस दशाको कृष्णा, अर्ज्जुन, अभिमन्यु, समस्त सृञ्जय वंशी, मैं, नकुल और सहदेव कदापि अच्छी नहीं कहते। हे राजन्! आप धर्म धर्म ऐसेही बकते हुए सदा व्रतोंसे दुःखी होकर ग्लानि पाकर नपुसकोंकी जीविकामें पड़े हैं। दुष्ट असमर्थ मनुष्य लोग अपने प्रयोजनका नाश करनेवाली ग्लानिको प्राप्त करके लक्ष्मीप्राप्त करनेकी इच्छा करते हुए अपने प्रिय कार्य्योंको करते हैं। हे राजन्! आपतो तत्वदर्शी हैं और हम लोगोंके पुरुषार्थको देखनेवाले हैं, सो आप निर्लज्जता धारण करके अनर्थको ओर दृष्टि नहीं करते। धृतराष्ट्रके पुत्रलोग हम लोगोंको क्षमा करने पर असमर्थ समझते हैं; इस दुःखसे युद्धमें मरना अधिक नहीं है, क्योंकि यदि युद्धमें हमलोग धर्मके सहित सब मर जायं तो अच्छा होगा, क्योंकि मरकर उत्तम लोकोंको प्राप्त करेंगे। हे भरतर्षभ! अथवा उन सबको मारकर हम लोग समस्त पृथ्वीको प्राप्त करेंगे, तोभी हमारा कल्याणही होगा; अधिक कीर्त्तिकी रखनेवाले वैरका बदला लेनेकी इच्छायुक्त अपने धर्ममें

स्थिर हम लोगोंको सर्व्वथा युद्धही करना चाहिये ; दूसरोंके राज्य छीन लेने पर अपने निमित्त युद्ध करना भी प्रशंसाही है निन्दा नहीं ! हे राजन् ! जिसमें मित्र और अपनी हानि हो, वह धर्म्म नहीं है, क्योंकि उससे अधर्म्म बढ़ता है, हे तात ! जिस प्रकारसे मरे हुएको सुख और दुःख छोड़ देते हैं, तैसेही धर्म्ममें दुर्ब्बल नित्य अधर्म्मी पुरुषको धर्म्म और अर्थ छोड़ देते हैं ! जिसका धर्म्म धर्म्महीके लिये है, वह पण्डित नहीं किन्तु क्लेशका भागी है, और वह धर्म्म इस प्रकार नहीं जानता तैसे अन्धा सूर्य्यकी किरणको। जिसका कर्त्तव्य केवल अपनेही वास्ते है, वहभी अनर्थका पण्डित है, जैसे वनमें जीवकी रक्षा करनेवाला राजाका नौकर। जो निन्दित पुरुष अत्यन्त लोभी महालोभ करता है, और मोक्ष तथा कामको नहीं देखता है, वह ब्राह्मणके मारनेवालेके समान मारडालनेके योग्य है। जो निरन्तर कामहीको देखता है, अर्थ और धर्मपर दृष्टि नहीं देता, उसके मित्र, अर्थ और धर्म्म सब नष्ट हो जाते हैं। अर्थ उस धर्मसे हीन पुरुषका नाश होजाता है, जैसे पानी नष्ट होनेसे मछली मर जाती है। इस कारण पण्डितलोक धर्म और अर्थको नष्ट नहीं करते हैं, जैसे अरणीसे आग उत्पन्न होती है, तैसेही इससेभी काम उत्पन्न होता है। धर्मसे अर्थ और अर्थसे धर्म्म होता है, इन दोनों का ऐसाही सम्बन्ध है, जैसे मेघ और समुद्रका। धनकी प्राप्तिमें जो इच्छा होती है, वही सङ्कल्प कहाता है, इसका कुछ शरीर नहीं है। हे राजन् ! धनकी चाहवाला पुरुष बढ़नेवाले धर्म्मको चाहता है, और कामकी चाहनेवाला मनुष्य धनको चाहता है, कामके सिवाय और किसी चीजको नहीं देखता, क्योंकि कामसे दूसरा काम सिद्ध नहीं हो सकता। पण्डितोंने कहा है, कि जैसे काष्ठसे जलकर भस्मही होती है, वैसे कामसे दूसरा काम सिद्ध नहीं होता। हे राजन् ! जिस प्रकारसे बधिक पक्षियोंको पकड़कर मारता है, तैसेही अधर्म्मभी प्राणियोंका नाश करता है। जो दुर्बुद्धि काम और लोभके वशमें होकर धर्म्मकी ओर ध्यान न दे, वह इस लोक और परलोकमें सब प्राणियों करके मारने योग्य है। हे राजन् ! आप कामके संग्रहको अच्छी प्रकार जानते हैं, और इसके उत्पत्ति एवं नाशकोभी जानते हैं। हे राजन् ! उसके नाश और प्राप्तके विच्छेदसे बूढ़ा और मरनेसे जो अनर्थ होता है, सो हम लोगोंमें प्राप्त है। पांचों इन्द्रिय मन और हृदय इनको विषयोंमें चलानेसे जो आनन्द होता है, मेरी बुद्धिमें उसीको काम कहते हैं, यहभी कर्म्महीका फल है। इस प्रकारसे अर्थ धर्म्म और कामकी विचारकर पुरुषको उचित है, कि अर्थ, धर्म्म और कामोंमेंसे एकहीकी सेवा न करें, किन्तु सदैव सबको धारण करता रहै। शास्त्रकी यही विधि है, कि दिनके पहले भागमें धर्म्म, मध्यमें धन और अन्तभागमें कामको चिन्ता करना चाहिये ऐसेही सब दिन व्यवहार करना उचित है। और यहभी शास्त्रको बिधि है, कि अवस्थाके पहले भागमें काम मध्यमें धन, और अन्तमें धर्म्म करना उचित है। हे वक्ताओंमें श्रेष्ठ ! समय जाननेवाले पण्डितको उचित है, कि अर्थ, धर्म्म और कामको समयके अनुसार करें। हे महाराज कुरुनन्दन ! सुख चाहनेवाले पुरुषोंके लिये लोभ हो सबसे उत्तम पदार्थ है, बुद्धिको स्थिर करके उसहोका उपाय करना चाहिये। हे राजन् ! आप शीघ्रही मोक्षका उपाय कीजिये वा राज्य प्राप्तिमें यत्नवान हूजिये ; क्योंकि रोगीके समान जो नर केवल दुःखहीका साधन है, मैं आपके धर्म्म और चरित्रको जानता हूं ; परन्तु आपको योग्य समझकर धर्म्मसे प्रेरित होकर आपसे मित्र लोग ऐसा

कहते हैं। हे राजन्! इसलोक और पर-लोकमें दान, यज्ञ, पण्डितोंकी पूजा, वेद पढ़ना और साधुता यही उत्तम बलवान धर्म्म हैं। हे राजन्! हे पुरुषसिंह! इन सब धर्म्मोंको और सब गुण रहनेपरभी धनहीन पुरुष नहीं कर सकता। राज्य धर्म्मसे होता है, धर्म्मसे उत्तम और कोई वस्तु नहीं है और धर्म्म विना अधिक धनके नहीं हो सकता। हे राजन्! धन भीख मांगने अथवा नपुंसकतासे कदापि प्राप्त नहीं हो सकता वह केवल धर्म्मबुद्धिहीसे मिलता है। हे पुरुष शार्द्दूल आपका भिक्षा मांगना अनुचित है। क्योंकि यह ब्राह्मणका कर्म्म है। इससे धन प्राप्त कर-नेका उपाय कीजिये; क्षत्रियको भीख मांगना बनिये और शूद्रकी जीविका करना अनुचित है। क्षत्रीका धर्म्म केवल अपना बलही है। हे कुन्तीनन्दन! अपने धर्म्मका ग्रहण करके धृतराष्ट्रके पुत्र तथा अन्य आर हुए शत्रुओंको मुझे सङ्ग लेकर नाश कीजिये। विद्वान, बुद्धि-मान महात्माओंमें ऊंचे बनिये, क्योंकि आप नीचताके योग्य नहीं हैं। हे राजेन्द्र! जाति और सनातन धर्म्मको जानिये, आप अत्यन्त तेजसे उत्पन्न हुए हैं, जिससे सब जगत् डरता है। हे महाराज! आपके लिये ब्रह्माने प्रजा पालनही सनातन धर्म्म बनाया है वनवास नहीं। हे कुन्तीनन्दन! इस लिये आप हीन होकर जगतमें हंसे जायंगे, क्योंकि मनुष्यों को अपनेही धर्म्मसे चलना उचित है। हे कुरुनन्दन! अब आप इस शिथिलताको छोड़कर क्षत्रियों-कासा हृदय बनाकर बलको ग्रहण करके जगतकी धुरको धारण कीजिये। हे राजन्! किसी राजाने केवल धर्म्मसे पृथ्वीको नहीं जीता और न लक्ष्मी सुखको प्राप्त किया, जैसे व्याध चारा देखकर पक्षियोंको पकड़ता है, वैसेही अनेकक्षुद्र लोभीलोगोंको भोजन देकर और छल करके राज्य बढ़ाना चाहिये। पहले उत्पन्न भये और खूब बढ़े हुए भाई दैत्योंको देवतोंने छलहीसे जीता था। हे राजशार्द्दूल! बलवानहीको सब पृथ्वी मिलती है, यह जान-कर आप परम छल करकेभी शत्रुओंको जीतिये। हे राजन्! अर्ज्जुनके समान धनु-र्द्धारी और मेरे समान गदाधर कोई पुरुष न है, और न होगा। हे राजन्! हे पाण्डव! अत्यन्त बलवान पुरुष भी बलसे युद्धकर सकता है, अतएव आप प्रमाण और उत्साहसे शत्रुओंसे सन्धि करनेके विचारमें मत पड़िये, बलही धनका मूल है, और अनुत्साह इससे उलटा अर्थात अनर्थका मूल है, जैसे जाड़ेमें वृक्षकी छाया सुखदाई नहीं होती। हे कुन्ती-नन्दन! धनकी इच्छा करने वाले पुरुषको बीजके समान धनको छोड़नाभी होता है; इसमें आपको कुछभी सन्देह न हो, कि जहां उन्नति न हो तहां अनर्थभी अर्थके समान होता है। वहां प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये, वह प्रतिज्ञा केवल गधेको खुजलानेके समान होती है। हेमनुष्येन्द्र! जो पुरुष इस प्रकारसे प्रतिज्ञारूपी थोड़े धर्म्मको छोड़ देता है, सो बहुत बड़े धर्म्मको प्राप्त होता है, और वही पण्डितभी कहा जाता है। पण्डितलोग मित्र सहित शत्रुको मित्रोंसे भेदकर देते हैं, तब मित्रोंसे पृथक् हुए मूर्ख शत्रुको वशमें कर लेते हैं। हे राजन! बलवान पुरुषभी बलहीसे युद्ध करता है, क्योंकि उद्यम और प्रियवाक्यसे राजाके वशमें प्रजा नहीं होती। हे राजन्! जिस प्रकारसे बहुतसी मधुमक्खी इकट्ठीहोकर मधु लेनेवाले पुरुषको व्याकुल कर देती हैं, उसी प्रकारसे दुर्ब्बल लोगभी इकट्ठे होकर बलवान शत्रुको मार सकते हैं। हे महाराज! जिस प्रकार सूर्य्य अपनी किरणोंसे प्रजाकी रक्षा और नाश करता है, तैसेही आपभी सूर्य्यके समान हूजिये। हे राजन्! विधिपूर्व्वक प्रजाका पालनभी सनातन तप है, जो हमारे पितामहोंने

किया था। हे राजन्! अत्यन्त तपस्या करनेसेभी क्षत्रियको वैसी गति नहीं मिलती, जैसे युद्धमें विजय पाने अथवा मरनेसे मिलती है। आपकी इस आपत्तिको देखकर जगतमें यही निश्चय हुआ है, कि सूर्य्यसे तेज और चन्द्रमासे चांदिनीभी छूट सकती है। हे राजन्। आपकी प्रशंसा और दुर्य्योधनकी निन्दाके अर्थ अनेक समर इस जगतमें अलग अलग हो रहे हैं। हे राजन्! आपने जो मोह, कृपणता, लोभ, भय और कामके कारणसे असत्य नहीं कहा, इसहीकी अधिक प्रेम न होकर ब्राह्मण और कौरव लोग प्रसन्नता पूर्व्वक मिलकर कह रहे हैं; सत्यसन्धता इसहीको कहते हैं। हे राजन्! पृथिवीके प्राप्त करनेमें राजा जो कुछ पाप करता है, सो सबके पीछे अधिक दक्षिणावाले यज्ञोंको करनेसे नष्ट होजाते हैं। जिस प्रकार अन्धकारसे चन्द्रमा छूटता है, इसही प्रकारसे राजाभी ब्राह्मणोंको सहस्रों गांव देकर, पापसे छूट जाता है। हे कुरुनन्दन, युधिष्ठिर! पुर और राज्यवासी प्राय: सबही बूढ़े और बालक मिलकर आपकी प्रशंसा कर रहे हैं। जिस प्रकार चमड़ेकी कुप्पोमें दूध, जैसे दोगलेमें वेद, जैसे चोरमें सत्य और जैसे स्त्रीमें बल होता है, वैसेही दुर्य्योधन में राज्य भी है, इस समय स्त्री और बालक भी सबके आगे ऐसाही कहते हैं। हे शत्रुनाशन! हमलोगोंके सहित आप इस अवस्थाको प्राप्त हुए, अतएव हम सब मरे हुएके समान हैं; जिनके देखते आप इस उपद्रवमें पड़े हैं। हे महाराज! सो आप सब शस्त्रोंसे युक्त रथ पर चढ़ करके ब्राह्मणोंको धन देनेकी इच्छा करके वेग सहित युद्धको चलिये। सब अस्त्रोंके जाननेवाले दृढ़धनुषयुक्त भाइयोंके समेत ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन सुनके इसही समय हस्तिनापुर पर चढ़ाई कीजिये। जिसप्रकार वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र अपने भाई मरुतोंके समेत अपने शत्रुओंको जीतते हैं, हे महाबल कुन्तीनन्दन! वैसेही आप भी धृतराष्ट्रके पुत्रोंको-मारकर लक्ष्मीको प्राप्त कीजिये। गिद्धके पंखोंसे युक्त सांपके समान विषसे भरे हुए गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए बाणोंके स्पर्शको जगत्में कौन सह सकता है? हे भारत! जगतमें कोई मनुष्य, हाथी, घोड़ा ऐसा नहीं है, जो वेगसे लगी हुई मेरी गदाकी चोटको सह सके। क्या हम लोग सृञ्जय केकय और वृष्णिकुलसिंहकी सहायता लेकर युद्धसे राज्यको प्राप्त नहीं कर सकते हैं? हे राजन्! हमलोग श्रीकृष्णका बल लेकर और महासेनाके सहित होकर क्या शत्रुके हाथमें गयी हुई पृथ्वीको नहीं ले सकते हैं?

३३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महानुभाव, सत्यव्रत, अजातशत्रु, महाराज युधिष्ठिर भीमसेनका यह वचन सुननेके पीछे धैर्य्यके साथ ऐसा कहने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे भारत! तुम जो बचन रूपी बाणोंसे मेरे शरीरको पीड़ा देते हुए क्षीण करते-हो, सो निःसन्देह तुमको उचितही है, मैं तुम्हारी निन्दा नहीं करता, क्योंकि मेरीही दुष्टतासे तुम लोग दुःखमें पड़े हो; मैं धृतराष्ट्र पुत्रसे राज्य लेनेकी इच्छा करके जुआ खेलने लगा था; परन्तु दुष्ट कपटी शकुनिने दुर्य्योधनके सुखकी इच्छासे मुझसे छल किया, वह पापी पर्व्वत देशीय शकुनी महाछली है। उसने सभाके बीचमें माया-रहित मुझको पासेसे जीत लिया। हे भीमसेन! इसही निमित्त तुम बनमें बसे हो; सभामें शकुनिके विषम और सम पासोंको इच्छाके अनुसार देखकर अपने वशमें रहनेकी शक्ति मुझमें न रही, क्योंकि क्रोध पुरुषके धैर्य्यको नाश कर देता है। हे भीमसेन! शरीर, पुरुषार्थ, अभिमान और वीर्य्यसे बंधने पर वशमें नहीं रह सकता;

हम तुम्हारे वचनकी निन्दा नहीं करते, परन्तु यह कहते हैं,कि यह बात ऐसीही होनी थी। हे भीमसेन! उस धृतराष्ट्रके पुत्र राजा दुर्य्योधनने राज्यकी इच्छा करके हमको इस दुःखमें डाला और दासभी बनाया। जहां द्रौपदीही शरण हुई थी, तुम और अर्ज्जुनभी इस बातको जानते हो कि हमको सभामें दूसरी-वार बुलाकर कहा था, कि हे राजपुत्र! हे अजातशत्रो! अब एकही दावपर यह पण करो कि यदि तुम हारो तो भाइयोंके सहित अपनी इच्छानुसार बारह वर्ष वनमें वास करो, और तेरहवें वर्षमें सब भाइयोंके सहित गुप्त रूपसे रहो, हे भारत! हे तात! तुमको गुप्तरूपमें रहते हुए हमारे दूत ढूढ़ेंगे, यदि कहीं देख लेंगे, तो पुनः बारह वर्ष इसही प्रकार, पुनः वनमें रहना होगा, हे कुन्तीकुमार! आप निश्चय करके इसको समझ लीजिये। हे भारत! यदि आप हमारे दूतोंको छलकर उनकी पहचानमें न आवेंगे तो हम कौरवोंकी सभामें सत्य कहते हैं, कि वे पांचों नदीयुक्त देश आपहीके होंगे। हे भारत! यदि हमलोग आपसे हारें तो ऐसेही वनमें वासकर भोग करेंगे, उस राजाने कौरवोंके आगे सभामें मुझसे ऐसा कहा था, तब नीच जुआ हुआ, उसमें हमलोग हार गये और सब वनको निकाले गये; इस प्रकार इन देशोंमें दुःखसे दुःखियोंके समान वनमें घूमते हैं, इतने परभी दुर्य्योधनको शान्ति प्राप्त न हुई और अपने वश-वर्त्ती कुरुवंशियोंको हमारे मारनेकी इच्छासे क्रोधके वशमें होके युद्धको सन्नद्ध किया। उससे पण्डितोंके आगे सन्धि करके कौन-राज्यको जीत सकता है, जो धर्म्मको नाशकर राज्य करता है, उस राज्यसे उत्तम पुरुषका मरना अच्छा है। हे वीर! जिस समय उसने वचन रूपी परिघको मारा था, उसी समय तुमको कुछ कर्म्म करना उचित था, जब तुम्हें मेरा हाथ जलाते हुए अर्ज्जुनने निवारण किया था, तभी तुम्हें क्या पाप हुआ था? तुमने प्राप्तकालकी कृपा और पुरुषार्थको जानकर आपत्तिको स्वीकार करकेभी उस समय क्या नहीं कहा था? अब समयके पश्चात् हमको अतिशय कठिन वार्त्ता क्यों बोलते हो। मैं द्रौपदीको दुःखित देखकर जहरके रस पीये हुएके समान तप्त होनेपर भी शान्त हूं। हे भरतवीर! हम कौरवोंकी सभाके बीचमें प्रतिज्ञा करके उसको नष्ट करनेमें समर्थ नहीं हैं। अतएव तुमको उचित है, कि अपने सुखके समयकी प्रतिज्ञा करो; जैसे माली फलके पकनेके समयको देखता है। जब वीर अपने शत्रुको फलपुष्पके सहित दृढ़ होनेपर नाश करता है, तो उसको अपने बलसे महागुण प्राप्त होता है, और वही वीरलोकमें जीवित रहता है; उसही वीरको जगतमें समस्त लक्ष्मी प्राप्त होती है। शत्रु उसहीसे नीचे होते हैं, जैसे देवता इन्द्रकी सेवा करते हैं, तैसेही मित्रलोग-भी जीविका पाकर उसकी सेवा करते हैं। मेरी इस सत्य प्रतिज्ञाको सुनो, मैं अमृत, जीवन, राज्य, पुत्र, यश, धन और सब वस्तु-ओंको धर्म्मकी एककलाके समानभी नहीं समझता हूं।

३४अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले, हे महाराज! सन्धि होनेके कालकी प्रतीक्षा करना तो ठीक है, परन्तु कालरूपी अप्रमेय पचीसे और सर्व्वनाशक अनन्त प्रवाहसे कौन बच सकता है? आप प्रत्यक्ष देखते हैं, कि सब मनुष्य कालके बन्धनसे बंधे हैं, और काल भी प्रत्यक्ष है, मनुष्यलोग फल और फेनके समान अनित्य हैं, हे कुन्ती-नन्दन! जिस प्रकारसे सुरमा सुईके लगनेसेभी गिर जाता है, तैसेही पुरुषकी आयु थोड़े समयमेंभी नष्ट होती है। तब पुरुष अपने

कार्य्योंको किसप्रकार कर सकता है? या तो पुरुष अपने आयुके कालको ठीक जाना हो सो समयकी प्रतीक्षा कर सकता है, हे राजन्! समयकी प्रतीक्षा करते करते हम लोगोंकी अवस्थामें से तेरह वर्ष कम हो जायंगे और मरने का समय समीप आजायगा, यह आप जानते हैं कि शरीरवालोंको मरना अवश्य है; अतएव मरनेके पहलेही राज्य प्राप्तिका यत्न करना अवश्य है। जो भूमि भाररूप पुरुष इस मेरी बातको अनुचित मानता है, सो वैरका बदला न लेकर गायके समान दुःखी होता है। जो पुरुष अल्पबल वीर्य्य होनेपरभी अपने वैरका बदला नहीं लेता, उस वृथा जन्मवालेका जन्म वृथाही है। आपतो नाथ, सुवर्णके स्वामी हैं, और आपकी कीर्ति पृथुके समान है, अतएव युद्धमें शत्रुको मारकर अपने हाथसे जीते हुए धनको भोग कीजिये, हे राजन्! हे शत्रुनाशन! छली वैरियोंको मारकर जो शीघ्रही नरकमें जाता है, वह नरकभी स्वर्गके समान है। हे महाराज! क्रोधसे उत्पन्न हुआ दुःख अग्निके दाहसेभी कठिन है, जिससे जलकर मैं न दिनको और न रातको सोता हूं। दुःखियोंमें जो सब लोकके धनुर्द्धारियोंका अपमान करता है, जो सब धनुष खींचनेवालोंसे श्रेष्ठ है, सो अर्जुन अपने स्थानमें दुःखी सिंहके समान पड़ा रहता है, निश्चय यह अपने हृदयकी अग्निको बड़े हाथीके समान हृदयहीमें रखता है। नकुल सहदेव और वीर-प्रसविनी बूढ़ी माता आपहीके प्रियकेवास्ते मूर्ख और गूंगेके समान बैठी हैं, सृञ्जयोंके समेत सब बान्धवलोग आपहीका प्रिय चाहते हैं। केवल मैं और द्रौपदी ही दुःखसे पीड़ित हूं, मैं जो कुछ करता हूं, सो सब आपका प्रिय हो है। हम सब दुःखसे व्याकुल और युद्धकी इच्छा रखनेवाले हैं। हे राजन्। इससे अधिक पापयुक्त आपत्ति और क्या होगी, कि नीच थोड़े बलवाले दुष्टलोग हमारे राज्यको छीन कर भोग करते हैं? हे परन्तप! हे राजन्! आप शीलरूपी दोषसे घिनमें पड़े हुए लज्जाके वशमें होकर क्लेशोंको सहते हैं, इसकी कोई भी प्रशंसा नहीं करता। हे राजन्! जिसप्रकार वेदपाठी पण्डित मूर्ख और मन्दके समान आचरण करता है, तैसेही आपकी बुद्धि भी द्रव्यनाशिनी हो गयी है। यह बुद्धि परमार्थदर्शी क्षत्रियोंकी नहीं होनी चाहिये। तुम घृणासे युक्त ब्राह्मणके समान बने हो, तब क्षत्रियोंमें जन्म तुमने क्यों लिया था? क्योंकि इस जातिमें प्रायः कठोर बुद्धिवाले पुरुष जन्म लेते हैं। आपने मनुके कहे हुए राजधर्म सबही सुने हैं, हे महाराज पुरुषसिंह! जैसे आप दुष्ट, मूर्ख और मन्दके समान आचरण करते हैं तैसेही आपकी बुद्धि भी द्रव्यनाशिनी हो गई है। यह बुद्धि परमार्थदर्शी है; हे पाण्डु नन्दन! जैसे सूर्य्य आकाशमें छिप कर नहीं घूम सकता है, वैसेही जगत्‌में विदित आप भी अपना रूप छिपाकर जगत् में नहीं रह सकते हैं, और फूलके समेत महाशाल वृक्ष जैसे बहुत जल वाले देशमें नहीं छिप सकता तैसेही आपभी नहीं छिप सकेंगे। जिसप्रकार सफेद हाथी जगत्‌में नहीं छिप सकता, तैसेही अर्जुन भी छिपा हुआ नहीं रह सकता, यह सिंहके समान बलवान बालक नकुल और सहदेव किसप्रकार छिपकर रहेंगे? हे पार्थ! यह जगत् विदित वीर राजपुत्री उत्तम कीर्त्तिवाली द्रौपदी कैसे छिप कर रहेगी; हे राजन्! यह समस्त प्रजा मुझको भी बालकपनसेही जानती है; सो मैं अपना छिप कर रहना भी ऐसेही जानता हूं, जैसे मेरु पर्व्वतको छिपाना। हे राजन्! हमने अनेक राजा और राजपुत्रोंको उनके राज्यों से निकाल दिया है, वह अब दुर्य्योधन के सङ्गी हुए हैं। सो वह भी अब

शान्त न होंगे, वहलोग अवश्यही दुर्य्योधनकी प्रिय कामनासे हमारे विपरीत आचरण करेंगे; वहलोग अवश्य हमलोगोंको ढूंढ़नेके निमित्त छिपे हुए दूतोंको भेजेंगे। जब वेलोग हमको जान लेंगे, तब हमको महाभय होगा, अभीतक हमको वनमें तेरह महीने बीते हैं, सो यही तेरह वर्षके समान समझने चाहिये ; पण्डित-लोगोंने कहा है, कि जैसे सोमकी प्रतिनिधि पूतिका होती है, वैसेही एक वर्षका प्रतिनिध एक मास होता है। अथवा साधुओंके वाहन बैलको भोजन देनेसे झूठ बोलनेका पाप नष्ट होता है, अतएव हे महाराज! आप शत्रु-ओंके मारनेमें यत्न कीजिये, क्योंकि सब चत्रियोंको युद्धसे अधिक धर्म्म कोई नहीं कहा है।

३५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, पुरुषोंमें सिंह शत्रु-नाशन कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर सांस लेकर विचारने लगे, कि मैंने सब धर्म्म आपत्ति और सुखमें वर्णोंके निश्चय सुने हैं। परन्तु जो उनको देखता है, वही सबको देखता है, मैं कठिनतासे जानने योग्य धर्म्मकी गतिको अच्छो प्रकार जानता हूं? तब मेरुके समान दुर्य्योधनको किस प्रकार पीस सकता हूं, इस प्रकार एक मुहूर्त मात्र ध्यान करके और अपने मनमें निश्चय करके भीमसेनसे निश्चित बात कहने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे महाबाहो! हे भारत! हे वचनके अर्थ जाननेवाले भीम! तुमने जो कुछ कहा। सो सब ऐसेही है, परन्तु मेरे इस वचनको सुनो, हे भीमसेन! हे भारत! जो पापके कर्म्म केवल साहससेही किये जाते हैं, सो कर्त्ताको दुःखही देते हैं। हे महाबाहो! और जो कर्म्म खूब विचारके, उत्तम पुरुषोंसे बूझके किये जाते हैं, उनका प्रयोजन अवश्य सिद्ध होता है ; परन्तु प्रारब्ध उसमेंभी रहती है; तुम जो केवल चञ्चलता और बलके अभि-मानसे इस महाकर्म्मका आरम्भ करना चाहते हो, उसमें मेरा विचार सुनो ; देखो, उनको ओर भूरिश्रवा, शल्य, बलवान जलसन्ध, भीष्म, द्रोण, कर्ण, बलवान अश्वत्थामा और दुर्य्योधन आदि धृतराष्ट्रकेपुत्र यह सबही दुखसे जीतने-योग्य, अस्त्र शस्त्रोंको जाननेवाले, सदैव युद्ध करनेवाले हैं। और हम लोगोंसे दुःखित राजा और राजपुत्र कौरवोंसे मिले हैं, उनसे उनका प्रेम बड़ा बढ़ गया है ; वह सब लोग जैसा दुर्य्योधन का हित करेंगे, वैसा हमारा नहीं। वह लोग धन और बलसे पूर्ण पुत्र और मन्त्रियोंके समेत सब भोगोंसे संयुक्त अपनी अपनी मात्राके अनुसार अलग अलग होकर युद्धमें अनेक यत्न करेंगे उनको दुर्य्योधनने अधिक माना है ; अतएव मुझे निश्चय होता है, कि वह लोग युद्धमें अपना प्राणातक भी देदेंगे। यद्यपि भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यकी वृत्ति उनमें और हममें समान है, तथापि मेरी बुद्धिमें वहलोग भी अवश्यही राजपिण्ड देंगे ; अतएव वह लोग अपने दुःखसे देने योग्य प्राणको भी युद्धमें दे देंगे। हे महाबाहो मेरी बुद्धिमें वह लोग सब शस्त्रोंके जाननेवाले हैं। इन्द्रके सहित देवता भी उनको नहीं जीत सकते। उनमें भी कर्ण सदाही क्रोध करनेवाला युद्धमें लीन नव अस्त्रोंका पण्डित अभेद्य कवचसे संयुक्त जीतने योग्य नहीं है। हे भीम! इन सब महा-वीरोंको युद्धमें बिना जीते हुए सहायहीन तुम दुर्य्योधनको किस प्रकार मार सकते हो? हे वृकोदर! मैं इसी बातके शोचसे और कर्णका हस्त-लाघव और सब धनुर्द्धारियोंसे अधिकता विचारता हुआ रात और दिन नहीं सोता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महाराजके यह वचन सुनकर और सब ठीक समझकर त्रासान्वित होके भीमसेन चुप हो गये। जहां पाण्डुपुत्र

युधिष्ठिर और भीमसेन इस प्रकारसे बात कर रहे थे, तहां सत्यवतीके पुत्र महायोगीश्वर व्यासदेव आये, आकर पाण्डवोंसे यथायोग्य पूजा पाकर कहनेवालोंमें श्रेष्ठ व्यासदेव युधिष्ठिरसे ऐसा कहने लगे।

व्यासदेव बोले, हे युधिष्ठिर! हे महाबाहो! मैं तुम्हारे हृदयकी बातको जानता हूं, यही विचारकर तुम्हारे पास शीघ्रतासे आया हूं। हे भरतर्षभ! भीष्म, द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य, दुर्य्योधन, अश्वत्थामा और राजपुत्र दुःशासनसे जो भय तुम्हारे हृदयमें उत्पन्न हुआ है, हे शत्रुनाशन! उसको मैं विधिपूर्व्वक कर्म्मसे नाश करूंगा, तुम उसको सुनकर बुद्धिको स्थिर करके अपने कर्म्मसे ठीक करो। हे राजेन्द्र! उसको करके तुम अपने दुःखोंको नाश करो, तब पराशरके पुत्र महात्मा व्यासदेव युधिष्ठिरको एकान्तमें ले जाकर उत्तम अर्थ सहित वचनको कहने लगे। हे भरतसत्तम! तुम्हारे परम कल्याणका समय आया है, धनुर्द्धारी अर्ज्जुन युद्धमें सब शत्रुओंको जीतेंगे। मेरी दी हुई मूर्त्तिमती सिद्धिको ग्रहण करो। इस विद्याका नाम मति है, तुमको दुःखी जानकर देता हूं, जिसको प्राप्त करके महाभुज अर्ज्जुन सिद्ध करेगा। अस्त्र शस्त्र लेनेके निमित्त इन्द्र और शिवके पासभी जा सकेगा, हे पाण्डव! इसके तप और पराक्रमसे अर्ज्जुन वरुण, कुवेर और यम आदिक देवतोंकोभी देख सकेगा। यह महात्मा नर नामक ऋषि हैं; नारायण सदाही इनके सहायक हैं ये पुराने सनातन अजेय, और अच्युत देवता हैं, यह महाबाहु इन्द्र आदि लोकपाल और शिवसे शस्त्र लेकर बड़े बड़े कर्म्मको सिद्ध करेंगे। हे पृथिवीनाथ! हे कुन्तीपुत्र! अब आप इस वनको छोड़कर किसी दूसरे वनमें, जो आप लोगोंको प्रिय हो, उसमें निवास करें, क्योंकि एक स्थानमें बहुत दिन तक रहना अच्छा नहीं, और समस्त ऋषिलोगभी घवड़ा जाते हैं, हरिन, वृक्ष, और औषधियोंकाभी नाश हो जायगा, क्योंकि तुम अनेक ब्राह्मणोंको भोजन देते हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे सत्यवतीके पुत्र बुद्धिमान व्यासने कहकर पवित्र धर्म्मराजको विद्या दी और लोकके तत्वको जाननेवाले भगवान व्यासदेव युधिष्ठिरको आज्ञा देकर वहीं अन्तर्द्धान हो गये। महात्मा युधिष्ठिरने केवल मुखहीसे उस विद्याको स्मरण कर लिया था, अतएव बराबर स्मरणही करते रहे। तब व्यासदेवके वचनसे प्रसन्न होकर द्वैतवनसे सरस्वतीके तटपर वाले काम्यक वनको चले। हे महाराज! उनके सङ्गही जिस प्रकार इन्द्रके पीछे ऋषिलोग चलते हैं, तैसेही शिक्षा जाननेवाले सहस्रों ब्राह्मण उनके पीछे चले। हे भरतर्षभ! अनन्तर महात्मा पाण्डवलोग अपने मन्त्री और दल बलके समेत काम्यक वनमें निवास करने लगे। हे राजन्! वे लोग धनुर्वेदका अभ्यास करते हुए वेदको सुनते हुए शुद्धवाणोंसे हरिणोंको मारकर विधिके अनुसार पितर और देवतोंको तर्पण करते हुए कुछ दिन तक वहां बसे।

३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे पुरुषसिंह जनमेजय! किसी दिन बैठे हुए धर्म्मराज युधिष्ठिरने महात्मा व्यासकी प्रशंसा करके कुछ हंसकर धर्म्म जाननेवाले अर्ज्जुनको हाथसे छूकर शान्तिपूर्व्वक ऐसा कहा। महात्मा धर्म्मराज वनवाससे दुःखित अर्ज्जुनको देखकर मुहूर्त्त मात्र ध्यान करते रहे; अनन्तर एकान्तमें ऐसा कहने लगे; युधिष्ठिर बोले, हे अर्ज्जुन! इस समय भीष्म, द्रोण, कृप कर्ण और अश्वत्थामामें चारों चरणसे धनुर्वेद उपस्थित है। वह लोग दैव, ब्राह्म और मानुष अस्त्र प्रयोगोंको यत्न और चिकित्साके समेत पूर्णरूपसे जानते

हैं। उन सबलोगोंकी दुर्य्योधनने खूब सेवा करी है; दुर्य्योधनने उन सबको विभाग करके सन्तुष्ट किया है, और गुरुके समान मानता है। दुर्य्योधनकी प्रीति सब योद्धायोंसे अधिक है, आचार्य्योंको उसने सन्तुष्ट किया है, अतएव वह लोग उसकी शान्ति चाहते हैं। वहलोग युद्धके समयमें अपनी शक्तिको उठा न रखेंगे। इस समयमें खान, वन, समुद्र, नगर और गांवके सहित सब पृथ्वी दुर्य्योधनके वशमें है। तुम हमारे अत्यन्त प्रिय हो और यह बोझभी तुम्हारेही ऊपर है। हे शत्रुनाशन! इस समय जो करनेके लायक काम है, सो तुमसे कहते हैं, कि हे तात! कृष्णद्वैपायनने मुझे यह मन्त्र दिया है, जिसका प्रयोग करनेसे यह समस्त जगत् प्रकाशित होता है, हे तात! तुम उसी मन्त्रको लेकर उत्तम समय पाकर उग्र तप करके देवतोंके प्रसादको प्राप्त करो। हे भरतर्षभ! तुम धनुष, कवच और खड्गको धारण करके मुनिके समान होकर अपने जानेका स्थान किसीको न बताते हुए उत्तरकी दिशाको चले जाओ। हे धनञ्जय! इन्द्रके पास सब दिव्य अस्त्र हैं, क्योंकि वृत्रासुरसे डरकर देवतोंने सब शस्त्र इन्द्रको दे दिये थे, तुम उन सब शस्त्रोंको एकही स्थानमें पाओगे। तुम इन्द्रकी उपासना करो, वह तुमको सब शस्त्र देंगे। मैंने तुमको दीक्षित किया, तुम अभी चले जाओ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने ऐसा कहकर अर्ज्जुनको वह मन्त्र बता दिया और उनको विधिपूर्व्वक दीक्षा दी, पश्चात् बड़े भाई युधिष्ठिरने छोटेभाई वीर अर्ज्जुनको जानेकी आज्ञादी, अर्ज्जुन धर्म्मराजकी आज्ञा पाय इन्द्रके देखनेकी इच्छासे गाण्डीव धनुष अक्षय दो तूणीर ले कवच, तलत्राण, अङ्गुलित्राण पहन हवनके द्रव्यसे ब्राह्मणोंकी पूजा कर सांसलेकर धृतराष्ट्रपुत्रोंके मारने और चलनेकी इच्छासे महाबाहु अर्ज्जुन धनुष लेकर आकाशकी ओर देखने लगे! कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनको धनुष लेकर जाते हुए देखकर ब्राह्मण सिद्ध और अदृश्य देवता कहने लगे, हे कुन्तीपुत्र! तुम जो चाहते हो, उसे शीघ्र प्राप्त करो, ऐसा कहकर ब्राह्मणलोग अर्ज्जुनको जय आशीर्वाद देने लगे और बोले, कि हे कुन्तीपुत्र मन्त्र साधन करो, अवश्य तुम्हारीही विजय होगी। शालके समान कन्धावाले वीर अर्ज्जुनको जाते हुए देखकर सबके मनको ग्रहण करके द्रौपदी कहने लगी।

द्रौपदी बोली, हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारे उत्पन्न होनेके समयमें तुम्हारे निमित्त कुन्तीने जो कुछ चाहा था, सो सिद्ध हो, और तुम जो कुछ चाहते हो सोभी सिद्ध हो। हम क्षत्रियोंके वंशमें भिक्षासे जीनेवाले कोई उत्पन्न न हो; ब्राह्मणोंको नमस्कार है। मुझको यह बड़ा दुःख है, कि जो पापी दुर्य्योधनने गो कहके हंसी की थी, उससेभी यह अधिक दुःख है, कि उसने जो सभाके मध्य अनेक अयुक्त बात कही थी, उससेभी तुम्हारा वियोग अधिक दुःख जान पड़ता है, कि आजसे तुम्हारे भाई लोग तुम्हारेही कर्म्मोकी कथाको कह कहके समय वितावेंगे। कुन्तीनन्दन! हम लोगोंको आज्ञासे भोग, धन और जीविकासे सन्तोष नहीं होगा, क्योंकि हमारा सबका सुख तुम्हारेही अधीन है, और तुमही बहुत कालके लिये परदेशी होते हो। हे कुन्तीनन्दन! हमारा जीना,मरना राज्य और ऐश्वर्य्य तुम्हारेही अधीन है, जाओ, और कुशलको प्राप्त करो। हे पापरहित! हे महाबल! तुम किसी बलवानसे विरोध मत करना, शीघ्र विजयके निमित्त जाओ; ईश्वर तुम्हें कुशल दे, मैं परमेश्वर और कर्म्मको नमस्कार करती हूं। ह्री, श्री, कीर्त्ति, धृति, पुष्टि, पार्व्वती, लक्ष्मी और सरस्वती यह सब

मार्गमें तुम्हारी रक्षा करें, तुम बड़ोंके पूजनेवाले और बड़े भाईके आज्ञाकारी कुशलसे आओ ; इस निमित्त मैं वसु, रुद्र, सूर्य, विश्वेदेव और साध्योंकी शरण जाती हूं, वे तुम्हें शान्ति प्रदान करें, हे कुन्तीनन्दन ! आकाश और भूमिमें फिरनेवाले तुम्हारा कुशल करें, दिव्य प्राणी आदिको लेकर और जो विघ्नकारी जन्तु हैं उन सबसे ईश्वर तुम्हारी कुशल करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, यश भरी द्रौपदी इस प्रकार अर्जुनको आशीर्वाद देकर चुप हो रही। अनन्तर भाई और धौम्यको प्रदक्षिणा करके महाबाहु अर्जुन उत्तम धनुषको धारण करके चल दिये। इन्द्र योगधारी तेजस्वी बलवान अर्जुनके चलनेसे मार्गके जितने प्राणी थे, सब हट गये। हे जन्मेजय! शत्रुनाशन अर्जुन तपस्वियोंसे सेवित अनेक पर्व्वतोंको देखते हुए दिव्य, पवित्र और देवतोंसे युक्त हिमाचल पर्व्वत पर पहुंचे, महात्मा अर्जुन योगसे युक्त होकर वायुके समान गति धारण करके एकही दिनमें पवित्र हिमाचल पर्व्वत पर पहुंच गये। अनन्तर हिमाचल और गन्धमादनसे पार होकर निद्रासे शून्य रातदिन चलते हुए अनेक कठिन पर्व्वतोंको पार हुए ; अनन्तर जब अर्जुन इन्द्रकील नामक स्थान पर पहुंचे तो आकाशवाणी हुई कि यहीं ठहरो। उसको सुनकर पाण्डुनन्दन अर्जुन चारों ओर देखने लगे, तो वृक्षकी जड़में बैठे हुए एक तपके तेजसे प्रकाशमान पिङ्गल वर्णयुक्त जटाधारी था, उस महातपस्वीने आगे खड़े अर्जुनको देखकर कहा, हे तात! तुम धनुष, कवच, बाण, अंगुलित्राण और तरकस धारण किये क्षत्रियोंके धर्ममें स्थित कौन हो, और यहां क्यों आये हो? यह स्थान आनन्द क्रोधसे रहित तपस्वी शान्त ब्राह्मणोंका है, यहां शस्त्रका क्या काम है? यहां धनुषसे कुछ प्रयोजन नहीं, यहां कभी युद्ध नहीं होता। हे तात! तुम इस धनुषको फेंक दो ; क्योंकि तुम परम गतिको प्राप्त हुए हो। हे वीर! जिस प्रकार कोई दूसरा पुरुष नहीं बोल सकता, तैसेही तेज और बलसे भरा हुआ वह ब्राह्मण किञ्चित हंसते हुए अर्जुनसे बोला, परन्तु अर्जुनका कुछ भी धैर्य्य और निश्चय उसके कहनेसे चलित न हुआ। अनन्तर वह ब्राह्मण प्रसन्न होकर हंसता हुआ अर्जुनसे ऐसा बोला, हे शत्रुनाशन! तुम्हारा कल्याण हो, मैं इन्द्र हूं ; जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान मांगो ; तब कुरुकुलके बढ़ानेवाले शूरवीर अर्जुन इन्द्रकी बात सुनकर ऐसा बोले, हे भगवन्! मेरी यही इच्छा है और यही वरदान मुझको दीजिये, कि मैं आपसे सब शस्त्रोंको प्राप्त करूं। तब प्रसन्न होकर हंसते हुए इन्द्र बोले, हे धनञ्जय! इस स्थान पर पहुंच कर शस्त्रोंसे तुम कौनसा कार्य्य करोगे? दूसरा वरदान मांगो, क्योंकि तुम परमगतिको प्राप्त हुए हो, अतएव जिस लोकमें जानेकी इच्छा हो, कहो। ऐसा सुनकर इन्द्रसे अर्जुन बोले, हे देवराज! लोभ और कामके वशमें होकरभी मैं देवपद अथवा सब देवतोंके राजाके सुखको भी इच्छा नहीं करता हूं,। मैं अपने भाइयोंको वनमें छोड़ और वैरका बदला बिना लिये यदि किसी लोकमें जाकर सुख भोगूं, तो अनेक वर्षोंतक अपकीर्त्तिको प्राप्त हूंगा। वृत्रासुरके मारनेवाले सब लोकोंसे पूजित इन्द्र पाण्डुपुत्रकी यह बात सुनकर, कोमलता सहित शान्ति पूर्व्वक ऐसा बोले, हे तात! जब तुम शूलधारी, तीन नेत्रवाले, भूतोंके स्वामी, शिवका दर्शन करोगे, तब हम तुमको सब शस्त्र देंगे। हे कुन्तीनन्दन! अब तुम परमेश्वर शिवके दर्शनका यत्न करो, उनका दर्शन होनेसे सिद्ध होकर स्वर्गमें आओगे। अर्जुनसे ऐसा कहकर इन्द्र वहां अन्तर्द्धान हो

गये। और अर्जुनभी वहीं बैठकर योग्य करने लगे।

३७ अध्याय समाप्त।

अर्जुनाभिगमनपर्व्व समाप्त।

अब कैरातपर्व्व लिखाजाता है।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! हे वेदजाननेवालोंमें श्रेष्ठ! कठिन कर्म्म करनेवाले अर्जुनको जिस प्रकार शस्त्र प्राप्त हुए उस कथाको मैं विस्तारसे सुनना चाहता हूं। जिस प्रकारसे वह तेजस्वी, पुरुषसिंह, महाबाहु, अर्जुन मनुष्य रहित वनमें बेडरके समान गये, वहां रहकर उन्होंने भगवान शिव और इन्द्रको किस प्रकार प्रसन्न किया? हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! हे सब जाननेवाले! हम यह सब कथा आपकी कृपासे सुननेकी इच्छा रखते हैं, क्योंकि आप देवता और मनुष्योंकी सब बातोंको जानते हैं। हे ब्राह्मण! हमने सुना है, कि युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ युद्धोंमें अपराजित अर्जुनने शिवके सङ्गमें महाघोर अद्वितीय, लोमहर्षण युद्ध किया था। पुरुषोंमें सिंह वीर कुन्तीपुत्रोंकी दीनता आनन्द और विस्मययुक्त कथाओंको सुनकर बड़े बड़े शूरवीरोंके हृदयभी कांप गये थे, अर्जुनने जो जो कर्म्म किया हो, सो सब कहिये, क्योंकि अर्जुनके चरित्रमें थोड़ाभी बुरा काम नहीं दीख पड़ता, अतएव, उस शूरवीरके सब चरित्रोंको हमसे कहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे कुरुवंशियोंमें शार्दूल! महात्मा अर्जुनकी इस अद्भुत कथाको मैं तुमसे कहता हूं, जिस प्रकार गात्रसे संस्पर्श हुएके समान शिवसे समागम हुआ, उस कथाको मैं भली भांति कहता हूं। हे पापरहित! तुम सुनो। महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञासे देवराज इन्द्र और शिवको देखनेकी इच्छासे दिव्य धनुष और सोनेकी मूठवाली खड्गको लेकर महाबलवान, महाबाहु, अप्रमाण पराक्रमवाले अर्जुन कार्य्यसिद्ध करनेको उत्तरकी ओर हिमाचलके शिखरकी ओर चले। हे राजन! मनको स्थिर करनेवाले सब लोकोंमें विख्यात महारथ अर्जुन निश्चय करके परम योगसे युक्त होकर महा घोर कांटोंसे भरे हुए वनको एकलेही चले, उन्होंने अनेक फल फूलसे भरे हुए अनेक प्रकारसे पक्षियोंसे भांति भांतिके हरिणोंसे भरे हुए सिद्ध और चारणोंसे युक्त वनको देखा। कुन्ती-पुत्र अर्जुनके चलनेसे मनुष्यरहित उस वनमें आकाशमें शंख और पटह बजने लगे। आकाशसे पृथ्वीमें फूलोंकी वर्षा होने लगी। बादलोंके समूहने आकाशको सब ओरसे घेर लिया, अर्जुन कठिन कठिन वनोंको पार होकर महापर्व्वत हिमाचलके शिखरपर पहुंच कर शोभित हुए, वहां उन्होंने फूले वृक्षोंके ऊपर मीठे शब्द करनेवाले पक्षियों और हीरेके समान निर्म्मल जलवाली महावेग-वती अनेक नदियोंको देखा, उनके तटपर हंस, कारण्डव, सारस, कोकिला, मयूर और क्रौञ्च आदि पक्षियोंके आनन्दमय शब्द सुने। महारथ अर्जुन उस मनोहर वनमें पवित्र ठण्डे और निर्म्मल जलवाली नदियोंको देखकर महा प्रसन्न हुए, तब उस रमणीय वनमें रमते हुए और उग्र तपको करते हुए महा तेजस्वी अर्जुनने इस प्रकार निवास किया, कि तिनकेका वस्त्र, हरिणका चमड़ा और दण्डहीको आभूषण किया। जो पत्ते वृक्षसे गिर जायं उसीको खाने लगे फिर एक महीनेतक तीन तीन दिनमें एक एक फल खाना आरम्भ किया, दूसरे महीनेमें उससे तिगुने समय अर्थात् छः छः दिनमें एक एक फल खाने लगे, तीसरे महीनेमें पक्ष पक्षमें एक एक फल खाकर बिताया। जब चौथा महीना प्राप्त हुआ, तो भरतकुलमें श्रेष्ठ अर्जुन केवल वायु पीकर रहने लगे।

उस समय पाण्डुनन्दन महाबाहु अर्ज्जुन उर्द्धबाहु होकर बिना, किसो आश्रयके केवल चरणके अंगूठेहीसे खड़े रहे। महात्मा महातेजा अर्ज्जुनकी जटा सदाही न बान्धनेके कारण बिजली सहित बादलके समान हो गई। तब सब मुनीश्वर लोग पिनाकधारी देव शिवके पास अर्ज्जुनका महातप निवेदन करनेको गये। मुनीश्वर लोग महादेवको प्रणाम करके अर्ज्जुनके तपकी प्रशंसा करके बोले, कि यह महातेजस्वी कुन्तीपुत्र हिमाचलपर बैठकर दिशाओंको आधार करते हुए अपार और उग्र तप कर रहे हैं। हे देवतोंके नाथ! हम सब उसकी इच्छाको नहीं जानते, आप साधुता पूर्व्वक उसे निवारण कीजिये, आत्मज्ञानी मुनियोंके यह वचन सुनकर पार्व्वतीपति जगत्स्वामी शिवने ऐसा कहा,—

श्रीमहादेवजी हे बोले, मुनीश्वरो! तुम अर्ज्जुनका कुछ दुःख मत करो, जैसे आये हो, तैसेही सुखसे आलस्यरहित होकर शीघ्र चले जाओ। मैं उसके मनके सङ्कल्पको जानता हूं, उसको स्वर्ग ऐश्वर्य्य और आयु बढ़नेकी इच्छा नहीं है; जो कुछ उसकी इच्छा है, मैं उसे अभी करता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शिवके ऐसे वचन सुनके सत्यवादी मुनि लोग प्रसन्न होकर अपने घरको चले गये।

३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब महात्मा सब तपस्वीलोग अपने अपने घरको चलेगये, तब सब पापके नाश करनेवाले भगवान शिव सोनेके वृक्षके समान किरातका वेष धारण करके महामेरुकी शिखाके समान शरीर बनाकर उत्तम धनुष और सर्पके समान वाणोंको धारण करके देहधारी अग्निके समान वेगसे चले। अपने समान वेषधारी भूतोंके सहित श्रीमान् शिवजी किरात वेषधारिणी अनेक स्त्रियोंको सङ्गमें लेकर उस वनमें पहुंचे। हे भारत! हे महाराज! उस समय उस वनकी शोभा औरही हो गई। क्षणमात्र वह वन शब्दरहित हो गया, उस समय पक्षी और झरनोंका शब्दभी बन्द हो गया, उन्होंने कठिन कर्म्म करनेवाले अर्ज्जुनके पास आकर अद्भुत दर्शनवाले मूक नामक दनुके पुत्रको देखा। वह राक्षस सूअरका वेष बनाये हुए क्रोधसे दीप्त, मारने की इच्छासे अर्ज्जुनको देख रहा था, तब अर्ज्जुनने गाण्डीव धनुष और सर्पके समान वाण लेकर धनुष पर रोदा चढ़ाके शब्दसे वनको पूरित करते हुए उस राक्षससे कहा, तू जो मेरे मारनेकी इच्छासे यहां आया है, इस लिये पहले मैं ही तुझको यमके घरमें पहुंचाता हूं। जब किरातरूपी महादेवने दृढ़ धनुषधारी अर्ज्जुनको देखा, कि यह इसको मारना चाहता है, तो उनको निवारण करके कहने लगे, कि इसके मारनेकी इच्छा पहले मैंने की है, अतएव तुम इसको मत मारो, परन्तु अर्ज्जुनने उनके वचनका निरादर करके उसको वाण मारा; ठीक उसी समयमें उसीको लक्ष्य करके महा तेजस्वी किरातनेभी वज्र और अग्निकी ज्वालाके समान वाण मारा, उन दोनोंके वे दोनों वाण एकही समयमें पर्व्वतके समान कठिनमुख राक्षसके शरीरमें लगे, जिस प्रकार एकही समयमें दो वज्र लगनेसे पर्व्वतमें शब्द होता है, वैसेही उसके शरीरमें दो वाण लगनेसे शब्द हुआ; वह राक्षस अनेक प्रकाशमान वाणोंके लगनेसे मर गया, और फिर दूसरा शरीर धारण किया, तब शत्रुनाशन अर्ज्जुनने स्त्रियोंके सहित किरातवेशी सोनेके समान वर्णवाले एक पुरुषको देखा। कुन्तीपुत्रने प्रसन्नचित्तसे हंसकर उससे पूछा, कि तू कौन है जो इस घोर वनमें स्त्रियोंके झुण्डके समेत फिरता है? हे सोनेके रङ्गवाले

पुरुष ! तुम क्या इस घोर वनमें घूमते हुए डरते नहीं हो ? तुमने हमारे मारे हुए सूअर को क्यों मारा ? इस राक्षसको पहिले यहां आने पर मैंने ही मारा था, पीछे तुमने बाण मारा, कामसे वा निरादरसे मारा हो, परन्तु तुम मुझसे जीते हुए अब नहीं बच सकते ; क्योंकि तुमने जो कर्म्म किया, यह मृगयासे विरुद्ध है, इस हेतुसे तुमको मारकर अभी पर्व्वतसे गिरा दूंगा। पाण्डुपुत्रके ऐसे वचन सुनकर किरातने हंसकर मीठी वाणीसे सव्यसाची अर्ज्जुनसे ऐसा कहा। हे वीर ! हमको इस वनमें देखकर तुम मत डरो ; क्योंकि हम वनवासी हैं, और यह भूमि हमारीही है. इस लिये हमारे ही योग्य है, हे तपोधन ? तुमने दुःख सहकर इस वनमें क्यों वास किया है ? क्योंकि अनेक जन्तुओंके सहित इस वनमें हमारा ही घर है। तुम अग्निके समान तेजस्वी, सुखके योग्य और सुकुमार हो, तब इस शून्य वनमें कैसे वास करोगे ?

अर्ज्जुन बोले, हम अग्निके तुल्य बाण और गाण्डीव धनुषका आश्रय करके अग्निके समान इस वनमें वास करते हैं, यह राक्षस जो मेरे मारने की इच्छासे सूअरका वेष बनाके यहां आया था इसको मैंने मारा है।

किरात बोले, यह तो मेरे ही धनुषके छुटे हुए बाणोंसे मरकर यमके स्थानको गया है, मेरेही पराक्रमसे यह पृथ्वी पर सोया है. पहिले मैंनेही इसको लक्ष्य बनाया था, इस लिये यह मेराही धन है ; और मेरेही बाणसे मरा है। हे मूर्ख ! बलके अभिमानसे बक बक करके अपने दोष दूसरों को देता है, अब तू कदापि मुझसे जीता हुआ नहीं बचेगा। देख अब मैं बज्रके समान बाणोंको छोड़ता हूं ; तुम खड़े रहो। अपनी परम शक्तिसे यत्न करो ; और बाणको भी छोड़ो। किरातके ऐसे वचन सुनकर अर्ज्जुनको महा क्रोध हुआ और बाणोंसे किरात को मारने लगे, किरातभी अर्ज्जुनको, "अरे मूर्ख ! ऐसा बार बार कहते हुए उनके बाणोंको सहने लगे और कहने लगे, कि इनसे भी अधिक सन्धिभेदक बाण चलाओ ; ऐसा सुनकर अर्ज्जुनने साहससे अनेक बाण मारे। उस समय वह दोनों बार बार युद्ध करते हुए शोभित होने लगे और परस्पर एक दूसरेको सांपके समान विष-भरे बाणोंसे मारने लगे। तब अर्ज्जुनने किरात पर बादलके समान बाणोंकी वर्षा करी और शिव भी प्रसन्न चित्तसे बाणोंको वर्षाको सहने लगे। पिनाकधारी शिव एक मुहूर्त्तमात्र उस बाणवर्षाको सह करके भी पर्व्वतके समान अचल हो खड़े रहे और शरीरमें एक घाव भी न हुआ। जब अर्ज्जुनने देखा, कि मेरी बाणों की वर्षासे यह छिप गया। तब परम आश्चर्य्यमें आकर साधु ! साधु ! कहने लगे और ऐसा बोले कि, यह बड़े आश्चर्य्यकी बात है, कि यह हिमाचल शिखरवासी कोमल अङ्गवाला पुरुष गाण्डीव धनुषसे छुटे हुए बाणोंकी बिना दुःखके सह रहा है, यह कौन है ? क्या यही साक्षात शिव हैं ? अथवा कोई यक्ष, राक्षस या देवता हैं ? क्योंकि मेरे धनुषसे छुटे हुए सहस्रों बाणोंको देव पिनाकधारी शिवको छोड़कर और कोई भी नहीं सह सकता है। जो हो यदि यह शिवको छोड़कर देवता वा कोई यक्षही क्यों नहो, अब मैं इसको कठिन बाणोंसे यमके घरमें पहुंचाऊंगा। ऐसा कहकर अर्ज्जुनने प्रसन्नचित्तसे सन्धियोंके तोड़नेवाले बाणोंकी इस प्रकार धारा लगादी जैसे सूर्य्य अपनी किरणोंको सब जगह पहुंचा देता है। किन्तु भगवान् शूलधारी, लोकनाथ, शिव उन बाणोंकोभी प्रसन्नचित्तसे इस प्रकार ग्रहण करने लगे, जैसे शिलाकी वर्षाको पर्व्वत सहता है। हे राजन् ! तब क्षण भरमें अर्ज्जुनके बाण

समाप्त हो गये। अनन्तर अपने बाणोंको समाप्त देखकर अर्ज्जुनको महाभय होने लगा, तब अर्ज्जुनने उसी भगवान् अग्निका ध्यान किया, जिसने इनको पहली खाण्डव वनमें अक्षय तूणीर दिये थे, और विचारने लगे, कि अब मेरे सब बाण समाप्त हो गये, धनुषसे क्या छोडूं? और यह पुरुष मेरे सब बाणोंको ग्रास किये जाता है। जिस प्रकार भालेसे हाथीको मारते हैं, तैसेही अब मैं भी इसको गाण्डीव धनुषके अगाड़ीके भागसे मारकर दण्डधारी यमराजके स्थानको पहुंचाऊंगा, ऐसा विचारकर महातेजा अर्ज्जुनने धनुषसे किरातका गला फांसकर उसे ऐंठेकी फांसीसे खींच करके वज्रके समान मुक्कोंसे बहुत मारा। कुन्तीनन्दन शत्रुनाशन अर्ज्जुन जब इस प्रकार धनुषसे युद्ध करने लगे, तब पर्व्वतके समान किरातने इनके धनुषकोभी ग्रासकर लिया, धनुष नष्ट होनेके पश्चात् युद्ध समाप्त होनेकी इच्छासे अर्ज्जुन खड्ग लेकर वेगसे दौड़ा, जो पर्व्वतकोभी काट सकता था उस तेज खड्गको कुरुनन्दन अर्ज्जुनने अपने भुजाके बलसे भर कर किरातके शिरमें मारा, परन्तु उसके शिरमें लगनेसे वह उत्तम खड्गभी टूट गया, तब अर्ज्जुन शिला और वृक्षोंसे युद्ध करने लगे, परन्तु किरातरूपी भगवान् शिव उन शिला और वृक्षोंको भी सहने लगे। अनन्तर महाबली अर्ज्जुनके मुखसे मारे क्रोधके धूआं निकलने लगा, अनन्तर अर्ज्जुन दुराधर्ष भगवान किरातरूपी शिवके शरीरमें वज्रके समान मुक्के मारने लगे। अनन्तर किरातरूपी भगवान शिवभी वज्रके समान दारुण मुक्कोंसे अर्ज्जुनको मारने लगे। उस अर्ज्जुन और किरातके युद्धमें दोनोंके मुक्कोंका शब्द होने लगा जिसके सुननेसे रोम खड़े होते थे। वह युद्ध ऐसा हुआ जैसा वृत्रासुर और इन्द्रका हुआ था। तब बलवान अर्ज्जुनने किरातको हृदयसे मारना आरम्भ किया और किरातनेभी चेष्टा रहित अर्ज्जुनको मारा। उन दोनोंके हाथ और हृदयके घिसनेसे शरीरमें अंगारे और धुएके सहित अग्नि निकलने लगी, अनन्तर महादेवजीने पीड़ित अर्ज्जुनके शरीरको पीड़ा दी और अपने तेजसे उनके तेजको खींच कर उनके चित्तको मोहित कर दिया। हे भारत! शरीरके पीड़ित और देव देव महादेवसे अवरुद्ध होकर अर्ज्जुन पिण्डके समान हो गये। अनन्तर महादेवसे पीड़ित होकर अर्ज्जुन चेष्टाहीन होकर निर्व्वलके समान पृथ्वीमें गिर पड़े और सांसभी बन्द होगया, परन्तु क्षणमात्रके पश्चात्ही अत्यन्त दुःखित रुधिरसे भरे शरीरवाले अर्ज्जुन चैतन्य होकर उठे, तब शरण देनेवाले भगवान् पिनाकधारी शिवकी शरणमें गये, और मिट्टीकी स्थण्डिल बनाकर उसपर महादेवको माला चढ़ाई। तब कुन्तीनन्दन अर्ज्जुनने वही माला किरातके शिरपर देखी, तब आनन्दके वशमें होकर अपनी दशाको प्राप्त हुए, और किरातके चरणोंमें गिर पड़े, तब क्षीण शरीर आश्चर्ययुक्त अर्ज्जुनसे प्रसन्न होकर मेघके समान गम्भीर वाणीवाले शिव कहने लगे। श्रीमहादेवजी बोले, हे फाल्गुन! हम तुम्हारे असाधारण काम शूरवीरता और धारणाशक्तिसे प्रसन्न हुए, और जाना, कि तुम्हारे समान क्षत्रिय कोई नहीं है, हे पापरहित! तुम्हारा पराक्रम और तेज मेरे समान है; हे महाभुज! हे महारथश्रेष्ठ! मैं तुमसे प्रसन्न हूं। मुझे देखो, मैं तुम्हे दिव्य दृष्टि देता हूं, तुम पूर्व्व समयके ऋषि हो; तुम युद्धमें सब शत्रुओंको जीतनेवाले हो, तुम्हारे शत्रु चाहे देवताभी हों तौभी तुमसे पराजित होंगे। मैं प्रसन्नतासे तुम्हें यह अस्त्र देता हूं, इस निवारण करनेके अयोग्य शस्त्रको तुमही धारण करनेमें समर्थ हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब त्रिशूलधारी

देवोंके देव महादेवको पार्व्वतीके सहित अर्ज्जुनने देखा। घुटनोंको पृथ्वीमें लगाकर शिरसे प्रणाम करके शत्रुओंके नगरको जीतनेवाले अर्ज्जुनने महादेवको प्रसन्न किया। अर्ज्जुन बोले, कि हे जटाधारी! हे सब देवतोंके स्वामी! हे सूर्य्यनेत्र! हे जगतके संहार करनेवाले! हे देवोंके देव! हे नीलकण्ठ! मैं आपको सब कारणोंका कारण जानता हूं। आपही सब देवतोंकी गति हैं, आपसेही जगत् उत्पन्न होता है। आप तीनों लोकोंके देवता, असुर और मनुष्योंसे अजेय हो। दक्षके यज्ञनाश करनेवाले आपको नमस्कार है! कपाल नेत्र-वाले सर्व्वको नमस्कार है, वर्षा करनेवाले, शूल-पाणीको नमस्कार है। पिनाकधारी सूर्य्यरूपी पवित्र देहवाले ब्रह्मारूपी आपको मैं प्रसन्न करता हूं; गणेशरूपी जगत्के कल्याण करने-वाले तीनों लोकोंके कारण प्रधान पुरुषसे भी उत्तम सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म हे हर! आपको प्रणाम है। मेरी विपरीत बुद्धिको क्षमा कीजिये। हे भगवन्! मैं आपके दर्शनकी इच्छासे ही इस पर्व्वत पर आया हूं। यह पर्व्वत, तपस्वि-योंका स्थान और आपका प्यारा है, मैं आपको नमस्कार करता हूं। हे महादेव! जो मैंने यह साहस किया, वह मेरा दोष नहीं है, क्योंकि मैंने अज्ञानसे आपके साथ युद्ध किया है, हे शङ्कर! मैं आपकी शरण हूं, मेरा अपराध क्षमा कीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वृषभध्वज महादेव अर्ज्जुनका सुन्दर हाथ पकड़के बोले, कि हे तेजस्वी! तुम शान्त हो। फिर दोनों हाथों से अर्ज्जुनको छातीसे लगाकर शान्त होनेको बोले।

३६ अध्याय समाप्त।

श्रीमहादेवजी बोले, पूर्व्व जन्ममें तुम नर नामक ऋषि थे, नारायण तुम्हारे साथी थे। बदरिकाश्रममें हजारों वर्ष तुमने तपस्या की थी। तुममें तेज है, व पुरुषोत्तम विष्णुमें तेज है, तुम्हीं दोनोंसे जगत् स्थित है, तुमने इन्द्रके राज्याभिषेकमें मेघके गर्जनके समान टङ्कार-वाले धनुषको ग्रहण करके दानवोंको मारा था। यह गाण्डीव धनुष तुम्हारे ही हाथके योग्य है; धनुषको मैंने मायाके बलसे व्यर्थ किया था; तुम्हारे तर्कश वाणोंसे कभी खाली न होंगे। हे कुरुनन्दन! तुम्हारा शरीर निरोग रहेगा। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, जो तुमको इच्छा हो, वर मांगो, तुमसे मर्त्यलोकमें वा स्वर्गमें कोई पुरुष श्रेष्ठ न होगा। हे शत्रुओंको दमन करनेवाले! तुम क्षत्री-धर्म्ममें प्रधान गिने जाओगे।

अर्ज्जुन बोले, हे भगवन्! यदि आप मुझ पर प्रसन्न होकर वर देते हैं, तो मैं पाशुपतास्त्र मांगता हूं, जो ब्रह्मशिर नामक भयानक बड़ा पराक्रमी प्रलयमें जगत्को नाश करता है, उसी अस्त्रको मैं लेना चाहता हूं। हे भगवन्! कर्ण, भीष्म, कृपाचार्य्य और द्रोणाचार्य्यसे युद्ध होनेवाला है, जिससे युद्धमें तुम्हारी कृपासे मैं उनको युद्धमें जीतं, जिसके प्रतापसे मैं युद्धमें दानव, राक्षस, भूत, पिशाच, गन्धर्व्व और सर्पोंको भस्म कर सकूं। जिसको अभिमंत्रित करनेसे सहस्रों भाले तेज दशनेवाली गदा और विषैले सर्पके समान खड्ग उत्पन्न होते हैं; हम जिससे भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, और सदा ही कठोरबादी सूतके पुत्र कर्णसे युद्ध कर सकें। हे भगवन्! हे भगनेत्र! यह मेरी प्रथम इच्छा है, सो आपकी कृपासे कृतकृत्य होकर समर्थ हूंगा।

श्रीशिवजी बोले, हे विभो हम तुमको अपना प्यारा पाशुपतास्त्र चलाने और मोक्ष करनेकी क्रियाके समेत देते हैं, क्योंकि तुम उसके योग्य हो। इसको इन्द्र, यम, वरुण और वायु भी नहीं जानते मनुष्योंकी तो कथा ही क्या है? हे कुन्ती-

नन्दन! इस शस्त्रको कदापि कहीं भी साहससे किसी पुरुषके ऊपर मत छोड़ना, क्योंकि थोड़े तेजवालेपर छोड़नेसे यह सब जगत्‌को भस्म कर सकता है। चर और अचर जगतमें कोई ऐसा नहीं, जो इससे न मर सके, इसके चलानेके समय इसको मन, वचन, नेत्र और धनुषसे चलाना चाहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कुन्तीनन्दन अर्ज्जुन शिवके ऐसे वचन सुनकर पवित्र हो उनके पास बैठे, और शिवजी बोले, ग्रहण करो। तब शिवजीने मूर्त्तिधारी कालके समान उस शस्त्रको चलाने और निवृत्त करनेकी गुप्त क्रियाओंके समेत अर्ज्जुनको पढ़ा दिया। वह शस्त्र जिस प्रकार पार्व्वतिनाथ त्रिनेत्र शिवको आता था, तैसेही अर्ज्जुनको भी आगया, और अर्ज्जुननेभी प्रसन्न चित्तसे ग्रहण किया। उस समय ग्राम, नगर, समुद्र, खान, पर्व्वत, वन, वृक्ष, और देशोंके समेत पृथ्वी हिलने लगी। उस समय आकाशमें सहस्रों शंख नगाड़े भेर, बजने लगे। महातेजवाले अर्ज्जुनको यहां शस्त्र मूर्त्ति धारण करके वहां आया, इसको सब देव और दानवोंने देखा। श्रीमहादेवजी महाराजने अर्ज्जुनको अपने हाथसे स्पर्श किया, तब उसका जितना पाप था, सब नष्ट होगया। अर्ज्जुनने प्रणामकर हाथ जोड़के शिवकी ओर देखा, तब शिवने आज्ञा दी, कि तुम स्वर्गको जाओ। तब पुरुषों में श्रेष्ठ अर्ज्जुनको देवतोंके स्वामी जितेन्द्रिय महाबुद्धिमान् पर्व्वतमें सोनेवाले पार्व्वतीनाथ जगतके उत्पन्न करनेवाले शिवने पिशाच और राक्षसोंके नाश करनेवाला महाधनुष गाण्डीव दिया। तब पुरुषोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुनके सामनेही शिव ऐसी उत्तम बात कहकर सफेद कन्दरावाले पक्षी और महर्षियोंसे सेवित पर्व्वतको छोड़कर आकाशको चले गये।

४० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जिस प्रकार सब जगत्‌के देखते हुए सूर्य्य अस्त हो जाता है, तैसेही भगवान वृषभध्वज पिनाकधारी शिवभी अर्ज्जुनके देखते देखते अन्तर्द्धान हो गये। हे हे जनमेजय! तब मैंने साक्षात शिवको देखा, ऐसा विचार कर अर्ज्जुन बार बार आश्चर्य्य करने लगे। आहा! मैं धन्य हूं, मैं कृपाका पात्र हूं, जो मैंने साक्षात् तीननेत्रवाले भक्त दुःखनाशक वरदान-दाता शिवको देखा और हाथसे छुआ, अब मैं कृतार्थ हुआ; अत्यन्त आनन्दको प्राप्त हुआ, मैंने युद्धमें सब शत्रुओंको जीत लिया और मेरे सब प्रयोजन सिद्ध हो गये। इस प्रकारसे विचारते महा तेजस्वी अर्ज्जुनके पास जलचर जन्तुओंके समेत शुद्धवाले श्रीमान् वरुण सब दिशाओंको प्रकाश करते हुए आये; इन्द्रियजित वरुणके सङ्ग नद नदी, दैत्य, साध्य, देवता और जलजन्तु भी आये। अनन्तर सोनेके समान वर्णवाले यक्षोंके समेत भगवान कुबेर तेजस्वी विमानमें बैठकर वहां आये, उनके आनेसे आकाश प्रकाशमान हो गया। अर्ज्जुनने श्रीमान् धनेश्वरको अद्भुत दर्शनवाला देखा। उसके पश्चात् सब लोकोंको नाश करनेवाले श्रीमान् प्रतापवान यमराजभी रूप और विना-रूपवाले लोकभावन पितरोंको सङ्ग लेकर वहां आये। यमराज दण्ड धारण किये हुए थे। भगवान् अचिन्तरूपवाले नवशोकके नाश करने-वाले सूर्य्यके पुत्र यमराज तीनों लोकोंको प्रकाश करते हुए गुह्यक सिद्ध, गन्धर्व्व और सर्पोंको सङ्ग लेके विमानमें बैठ प्रलयकालके सूर्य्यके, समान तेज धारण करके वहां आये। वे सब लोग हिमाचलके प्रकाशमान और विचित्र शिखरपर आकर तपस्वी अर्ज्जुनको देखने लगे। उरी चरणमें सफेद छत्रसे शोभायमान ऐरावतके ऊपर स्थित इन्द्राणी और देवतोंके युक्त भगवान् इन्द्रभी वहां आये, उनकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, जैसे तारोंके बीचमें चन्द्रमा। जिस

प्रकारसे सूर्य्य प्रकाशित होता है, वैसेही भगवान् इन्द्रभी देवता और तपोधन ऋषियोंसे स्तुति सुनते हुए पर्व्वतके शिखरपर शोभित हुए। तब दक्षिण दिशामें बैठे हुए सब धर्म्मके जाननेवाले श्रीमान् यमराज मेघके समान गम्भीर वाणीसे अच्छे वचन बोले, हे अर्जुन! तुम सब आये हुए लोकपालोंको देखो, हम तुमको दिव्य दृष्टि देते हैं, तुम हमारे दर्शन करनेके योग्य हो। हे तात! तुम पहले महाबल नर नामक ऋषि होकर आनन्द करते थे, अब ब्रह्माकी आज्ञासे मनुष्य हो गये हो। हे पापरहित! वसुके अवतार महाक्रमी धर्म्मात्मा भीष्म पितामह तुमसेही युद्धमें मारे जायंगे। भरद्वाजकेपुत्र द्रोणाचार्य्यसे रक्षित क्षत्रियोंकी सेना महा पराक्रमी दानव जो मनुष्य बने हैं, हे कुरुनन्दन! निवातकवच दानव और जो सर्व्व लोकके तपानेवाला सूर्य्यके तेजसे महावीर कर्ण उत्पन्न भया, उसकोभी तुमही मारोगे। हे धनञ्जय! औरभी अनेक देव और दानवोंके अंशसे अवतार भये हैं, हे शत्रुनाशन! हे कुन्तीनन्दन! वे सब लोग अपने अपने कर्म्मके अनुसार तुम्हारे हाथसे युद्धमें मरकर गति पावेंगे। हे फाल्गुन! तुमने साक्षात् महादेवको युद्धमें प्रसन्न किया है, इस लिये तुम्हारी कीर्त्ति जगत्में अक्षय होकर स्थिर रहेगी। तुम कृष्णके सङ्ग होकर पृथ्वीके भारको उतारोगे, अब यह हमारा असाधारण दण्ड नामक शस्त्र ग्रहण करो; इस अस्त्रसे तुम्हारे बड़े भारी भारी कार्य्य सिद्ध होंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब कुरुनन्दन! अर्जुनने छोड़ने और समेटनेकी विधिमन्त्र और सब क्रियाओंके समेत उस अस्त्रको ग्रहण किया। तब मेघके समान श्याम वर्णवाले जलके स्वामी भगवान वरुण पश्चिम दिशामें बैठ कर ऐसा बोले, हे कुन्तीनन्दन! हे बड़े और लालनेत्रवाले! तुम क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ हो और क्षत्रियोंके धर्म्ममें रहनेवाले हो, देखो हम जलके स्वामी वरुण हैं, हम यह निवारण करनेके अयोग्य पाश तुमको देते हैं, तुम इसको विधिके समेत ग्रहण करो। हे वीर! मैंने इससे तारकामय युद्धमें भारी भारी सहस्रों राक्षसोंको मारा था, हे महाबल! मेरे प्रसादसे इसको ग्रहण करो, तुम्हें क्रोध आनेपर इससे यमभी नहीं छूट सकता है। जब तुम इसको लेकर युद्धमें घूमोगे तो निःसन्देह पृथ्वी क्षत्रियोंसे सूनी हो जायगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब अर्जुनको वरुण और यम दिव्यशस्त्र दे चुके तो कैलाशवासी कुबेर बोले, हे पाण्डुपुत्र! हे महाबल! हे महाबुद्धिमान! जीतनेके अयोग्य तुमको देखकर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, हे सव्यशाचिन्! हे महाबाहो! हे पूर्व्वदेव सनातन! पहले कल्पमें हम और तुम सङ्गही रहते थे, हे भरतर्षभ! तुम्हारा दर्शन करके हम तुम्हें यह दिव्य शस्त्र देते हैं; इसके बलसे दुःखसे जीतने योग्य देव दानवोंको भी युद्धमें जीत सकोगे, हे शत्रुनाशन! मुझसे इस शस्त्रको तुम शीघ्रही ग्रहण करो, तुम इसके प्रतापसे धृतराष्ट्रपुत्रकी सेनाको जला दोगे। यह शस्त्र मुझको अत्यन्त प्रिय है, इसका नाम प्रस्वापन है, इससे तेज बल और वीर्य्य बढ़ते हैं, पहले समयमें जब महात्मा शिवने त्रिपुरासुरको मारा था, तब इसको चलाया था, इसीके प्रतापसे सब राक्षस भस्म हो गये थे। हे सत्यपराक्रम! हे मेरुके समान दृढ़! यह शस्त्र तुम्हारे लिये उपस्थित है, और तुमही इसे धारण करनेके योग्य हो। तब महाबाहु महाबल कुरुनन्दन अर्जुनने कुबेरके शस्त्रको विधिपूर्व्वक ग्रहण किया। तब देवराज इन्द्र बादल और नगाड़ेके समान गम्भीर वाणीसे अर्जुनको शान्त करते हुए ऐसा बोले, हे कुन्ती-पुत्र! तुम सनातन

और पुरातन देवता हो, अब देवतोंकी भक्तिसे उत्तम सिद्धिको प्राप्त हुए हो, हे महा-तेजस्वी! हे शत्रुनाशन! अब तुम स्वर्ग चलनेको सन्नद्ध हो जाओ, क्योंकि तुम्हें देवतों का भारी कार्य्य करना है। हे कौरव! तुम्हारे निमित्त मातलिके सहित रथ आने वाला है वहां चलकर तुमको हम दिव्य शस्त्र देंगे। उस पर्व्वतके ऊपर सब लोकपालोंको इकट्ठे देखकर बुद्धिमान् कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन आश्चर्य्य प्रकट करने लगे अनन्तर महातेजस्वी अर्ज्जुनने आये हुए; लोकपालोंकी वचन-जल और फलोंसे विधि-पूर्व्वक पूजा करी, तब मनके समान गतिवाले देवता लोग अर्ज्जुनका सम्मान करके अपने अपने मार्गोंसे चले गये। उस समय पुरुषसिंह अर्ज्जुनने आनन्दसे शस्त्र प्राप्त करके अपनेको कृतार्थ और पूर्ण आनन्दयुक्त माना।

४१ अध्याय समाप्त।

वनपर्व्वमें कैरातपर्व्व समाप्त हुआ।

अथ इन्द्रलोकाभिगमनपर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, लोकपालोंके जानेके पश्चात् शत्रुनाशन अर्ज्जुन इन्द्रके रथका मार्ग देखने लगे, बुद्धिमान् गुड़ाकेश अर्ज्जुनके विचारते समय मातलियुक्त तेजसे भरा हुआ आकाशको अन्धकारसे शून्य बादलोंको फाड़ता और मेघके समान दिशाओंको पूरित करता हुआ, इन्द्रका रथ आया; उसमें खड्ग, भयानक शक्ति, उग्र-दर्शनवाली गदा, दिव्य प्रभाव वाले प्रास, महातेजवाली बिजली, अशनी, गोलोंके समेत यन्त्र, वायुसे चलनेवाली बन्दूक, और जिसमें भारी शरीरवाले कठिन जलते मुख-वाले सफेद अभ्रकके समान हाथी थे, महाशब्दवाले उपलोंके सहित जिसको बड़ेवेगवाले दस सहस्र घोड़े ले चलते थे, जिसके देखनेसे दृष्टि बन्द हो जाती थी। वह रथ मायासे भरा हुआ था, उसमें नीले कमलके समान वर्णवाली, सोनेके वांसमें बंधी हुई महातेजवाली ध्वजाको अर्ज्जुनने देखा। अनन्तर तपे हुए सोनेसे भूषित रथमें बैठे हुए सूतको देखकर महाबाहु अर्ज्जुन इन्द्र देवताही जानके वितर्क करने लगे; ऐसे विचारते हुए अर्ज्जुनके पास आकर मातलि नम्र भावसे कहने लगे।

मातलि बोले, हे इन्द्रपुत्र! श्रीमान् इन्द्र आपको देखना चाहते हैं, आप शीघ्रही इस इन्द्रके रथमें चढ़िये। आपको पिता, देवतोंमें श्रेष्ठ, इन्द्रने ऐसा कहा है, कि कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनको सब देवता लोग देखें। यह देखिये! देवता, ऋषि, गन्धर्व्व और अप्सराओंके सहित इन्द्र आपको देखनेकी इच्छासे खड़े हैं। अब आप इन्द्रकी आज्ञासे इस लोकसे देव-लोकको चलिये। शस्त्र ग्रहण करके पुनः इसी लोकमें आइये।

अर्ज्जुन बोले, हे मातलि! अब तुम इस रथ पर चढ़ो, जिसको महाभाग्यवान राजालोग महादक्षिणायुक्त राजसूय और अश्वमेध यज्ञोंसे भी नहीं प्राप्तकर सकते हैं। जिस उत्तम रथ पर देवता भी नहीं चढ़ सकते हैं, इस दिव्य रथको महा-तपस्याओंसे भी कोई देख और छू नहीं सकता, चढ़नेको तो कथाही क्या है। हे साधो! जब तुम इस पर चढ़कर घोड़ोंको ठीक करोगे, तब मैं भी उत्तम मार्ग पर महात्माके समान इस रथ पर चढूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इन्द्रके सारथी मातलि ऐसे वचन सुनकर शीघ्रता सहित रथ पर चढ़े और लगाम पकड़कर घोड़ोंको ठीक किया। तब कुरुनन्दन अर्ज्जुन प्रसन्न चित्त होकर गङ्गामें स्नान कर मन्त्र जपने लगे, अनन्तर विधि और न्याय पूर्व्वक पितरोंका तर्पण करने लगे, पश्चात् पर्व्वतराजसे प्रार्थना करने लगे, हे पर्व्वत! तुम स्वर्गकी इच्छा रखनेवाले साधु, पुण्यात्मा, पुण्यकर्म्मा मुनियोंके आश्रय हो। हे शैल। तुम्हारे प्रसादसे ब्राह्मण,

क्षत्रिय, और वैश्य स्वर्गमें जाकर दुःखरहित होकर देवतोंके सङ्ग आनन्द करते हैं,। हे पर्व्वतराज! हे महाशैल! हे मुनियोंके आश्रय! हे तीर्थवाले! हम तुम पर थककर सुखसे रहे। अब तुम्हारी आज्ञा लेकर जाते हैं, हमने तुम्हारे नीचेके भागमें अनेक कुंज, नदी, भरने और पुण्यतीर्थ देखे, सुगन्धियुक्त फल खाये, तुमसे निकली सुगन्धिसे भरे हुए, अमृतके समान स्वादवाले भरनोंके जल पीये। हे पर्व्वत! हम तुम्हारे यहां वैसेही सुखमें रहे, जैसे पुत्र पिताकी गोदमें। हे शैलराज! हे प्रभो! अप्सराओंसे संयुक्त और वेद शब्दसे पूरित तुम्हारे शिखरपर हमने परम सुखसे निवास किया, हे शैल! हमने तुम्हारी कन्दराओंमें सर्व्वदा सुखसे विहार किया और अब हम जाते हैं, शत्रुओंके मारनेवाले अर्ज्जुन पर्व्वतसे इस प्रकार आज्ञा लेकर दिव्य रथके ऊपर ऐसे चढ़े जैसे सूर्य्य अपने रथपर प्रकाश करते हुए चढ़ते हैं। अद्भुत कर्म्मयुक्त दिव्यरूप उस रथपर चढ़कर बुद्धिमान अर्ज्जुन प्रसन्न मनसे आकाशको चले। परन्तु धर्म्म करनेवाले महात्मा मनुष्योंका रास्ता उन्होंने न देखा, उन्होंने आकाशमें देखा, कि अद्भुतरूपवाले सहस्रों विमान घूमते हुए फिरते हैं, वहां न सूर्य्य न चन्द्रमा और न अग्नि प्रकाश करते हैं। किन्तु पुण्यात्मा लोग पुण्यसे प्राप्त अपने प्रकाशसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं, आगे जाकर पाण्डवने देखा कि, वहां जो छोटे और बड़े प्रकाशमान तारा-लोक दीखते हैं, सो सब रूप धारण किये हुए प्रकाश कर रहे हैं। आगे जाकर देखा, कि राजोंमें ऋषि सिद्ध और युद्धमें मरे हुए वीर लोग अपने तेजसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं। आगे जाकर देखा, कि सहस्रों पुरुष अपने पुण्यसे स्वर्गसे चले जाते हैं। आगे जाकर सूर्य्यके समान तेजवाले सहस्रों गन्धर्वोंको देखा। गुह्यक, ऋषि और अप्सराओंके गणोंके अपने प्रभावसे प्रज्वलित लोकोंको देखकर विस्मित हुए। मातलि सारथिसे इन सब लोकोंका वृत्तान्त पूछा और उसनेभी प्रसन्न होकर कहा, कि हे कुन्तीपुत्र! यह सब लोक पुण्यके प्रतापसे स्थित हैं, जिसको आप पृथ्वीपर तारारूपसे देखते थे। इसके अनन्तर अर्ज्जुनने वहां जयशील चार दांतवाले कैलाशपर्व्वतके शिखरके समान ऊंचे ऐरावत हाथीको इन्द्रलोकके द्वार पर देखा। जहां पुण्यात्मा मान्धाता रहते हैं, उस लोकको भी अर्ज्जुनने देखा। इसी रीतिसे स्वर्गलोकको देखते हुए यशस्वी अर्ज्जुनको इन्द्रकी अमरावती पुरी दीख पड़ी।

४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनने सिद्ध और चारणोंसे सेवित और सब ऋतुओंमें फूलनेवाले पवित्र वृक्षोंसे युक्त रमणीय अमरावती पुरीको देखा! वहां पवित्र पुष्पोंकी पवित्र सुगन्धिसे युक्त पवित्र वायु सेवित हो बुलानेवालोंके समान दिव्य पुष्पोंसे सेवित अप्सराओंसे सेवित दिव्य नन्दनवनको देखा, जो लोग तप और अग्निहोत्रको न करने वाले अपुण्यात्मा, पापी युद्धसे भागनेवाले, यज्ञ व्रत और वेदसे हीन हैं, जिन लोगोंने तीर्थमें स्नान नहीं किया, यज्ञ निन्दक, यज्ञ और दान विमुख, क्षुद्र, यज्ञनाशक कदापि नहीं देख सकते हैं। जिस पवित्र वनको मदिरा पीनेवाले, गुरुकी सेजपर सोनेवाले, मांस खानेवाले, और दुरात्मा लोग कदापि नहीं देख सकते हैं। अर्ज्जुनने उस दिव्य गीतोंसे युक्त दिव्य नन्दनवनको देखते हुए इन्द्रकी प्यारी पुरीमें प्रवेश किया। वहां जाकर विशालबाहु अर्ज्जुनने देखा, कि सहस्रों विमान मनकी इच्छानुसार घूम रहे हैं, सहस्रों बैठे हैं, और सहस्रों जानेको उपस्थित हैं। वहां सहस्रों गन्धर्व्व और अप्सराओंसे स्तुति सुनते हुए और फूलोंकी सुगन्धिसे भरे हुए वायुसे सेवित होकर

अर्ज्जुनने उस नगरीमें प्रवेश किया। वहां अनेक देवता, गन्धर्व्व, सिद्ध और महर्षियोंने प्रसन्न चित्तसे पुण्य-कर्म्मकारी अर्ज्जुनकी पूजा करी, अनन्तर इन्द्रकी आज्ञासे ऋषियोंके आशीर्वाद दिव्य बाजोंके शब्द सुनते हुए अर्ज्जुनने शंख और नगारोंसे शोभित उस मार्गमें प्रवेश किया, जो जगत्में तारा देवमार्गके नामसे विख्यात हैं। अर्ज्जुनके चारों ओर स्तुति करनेवाले संगमें थे। उस मार्गमें साध्य, अश्विनीकुमार, मरुत, विश्वदेव, सूर्य्य, वसु, रुद्र, निर्म्मल ब्रह्मर्षि, दिलीप आदि अनेक राजर्षि, तुम्बुरु, नारद और हाहा हूहू गन्धर्व्व मिले। कुरुनन्दन अर्ज्जुनने इन सबसे यथायोग्य भेट करी, अनन्तर शत्रुनाशन अर्ज्जुनने इन्द्रको देखा। तब महाबाहु कुन्ती-नन्दन अर्ज्जुनने उत्तम रथसे उतरकर अपने पिता देवराज इन्द्रको सोनेके दण्डवाले सफेद छत्रसे शोभित दिव्य गन्ध-भरे हुए पंखेसे सेवित विश्वावसु आदि स्तुति करने वाले गन्धर्व्व और ब्राह्मणोंमें मुख्य ऋक्, यजु, साम वेदके मन्त्रोंसे स्तुति सुनते हुए साक्षात् देखा, तब कुन्तीनन्दनने उनके पास जाकर सिरसे प्रणाम किया, तब इन्द्रने अपने लम्बे और मोटे हाथोंसे उनको पकड़ा। तब इन्द्रने अपने घरमें देवता और ऋषियोंसे सेवित पवित्र इन्द्रासन पर अर्ज्जुनको बिठलाया और शत्रुनाशन इन्द्रने इनके माथेको संघा अपने गोदमें बिठलाया। उस समय विनयसे नम्र अर्ज्जुन इन्द्रकी आज्ञासे पवित्र पवित्र इन्द्रासनपर दूसरे इन्द्रके समान तेजस्वी बसकर बैठे। तब इन्द्रने पवित्र सुगन्ध भरे हुए हाथसे शान्तिपूर्व्वक प्रेमसे अर्ज्जुनका उत्तम मुख छूआ, अनन्तर रोदा और बाण खींचनेसे कठोर सोनेके खम्भेके समान अर्ज्जुनके लम्बे और सुन्दर हाथोंको छूने लगे। वज्रके लेनेके चिह्नयुक्त हाथोंसे शान्तिपूर्व्वक धीरे धीरे अर्ज्जुनके हाथोंको स्पर्श किया। इन्द्र प्रसन्न हुए। नेत्रोंसे अर्ज्जुनको देखकर तृप्त नहीं होते थे। वृत्रनाशके इस कर्म्मसे मानो अर्ज्जुनको आश्चर्य्य होता था, वे दोनों सभामें एक आसनपर बैठे हुए ऐसे शोभित हुए, मानो अमावसको सूर्य्य चन्द्रमा एकही समय उगे हैं। उस समय गानेमें कुशल तुम्बुरु आदि श्रेष्ठ गन्धर्व्व घृताची, मेनका, रम्भा, पूर्व्वचित्ती स्वयंप्रभा, उर्वशी, मिश्रकेशी, दण्डगौरी, वरुथिनी, गोपाली, सहजन्या, कुम्भयोनी, प्रजागरा, चित्तसेना और मीठेस्वर-वाली सहा और अनेक अप्सरा आदि लेकर अनेक कमलनयनी अप्सरा लोग सिद्धोंके चित्तको प्रसन्न करनेके निमित्त, पतली कमर और कम्पित स्तनवाली, मन, बुद्धि और चित्तके हरनेवाली कटाक्षवाली नाच और मीठे स्वरसे सामवेदके मन्त्रोंको गा रही थीं।

४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर इन्द्रकी इच्छा जानकार देवता और गन्धर्व्वोंने शीघ्रता-सहित पाद्यसे अर्ज्जुनकी पूजा करी। अनन्तर अर्ज्जुनको पाद्य और आचमनीय देकर इन्द्रके स्थानमें पहुंचा दिया। अर्ज्जुन इस प्रकारसे अपने पिताके स्थानमें सुखसे रहते हुए चलाने और रोकनेकी क्रियाके समेत शस्त्रोंको सीखने लगे। इन्द्रका प्यारा दुःखसे सहने योग्य वज्र नामक शस्त्र, मेघ और मयूरके समान लक्षणवाला महा अशनी शस्त्रको ग्रहण किया। इस प्रकार सुखपूर्व्वक इन्द्रकी आज्ञासे पांच वर्ष अर्ज्जुन वहां रहे, अनन्तर अस्त्रोंको सीखकर कुन्ती-पुत्रने अपने भाईयोंको स्मरण किया, तब समय आनेपर शस्त्र सीखे हुए अर्ज्जुनसे इन्द्रने कहा, कि हे कुन्तीनन्दन! अब तुम चित्रसेन गन्धर्व्वसे नाचना और गाना सीखो और जो बाजे मर्त्यलोकमें नहीं हैं, उनको अच्छे प्रकार सीखो; उससे तुम्हारा कल्याण होगा। ऐसा कहकर इन्द्रने अपने मित्र चित्रसेनको सौंप दिया। अर्ज्जुन उनके पास जाकर सुखपूर्व्वक रहने लगे। यद्यपि

उनसे गीत, नाच और बाज सीखे, तौभी जूएके अभिमानको स्मरण करके आनन्दको न प्राप्त हुए, उनके चित्तमें दुःशासन और सुबलके पुत्रके मारनेका क्रोध भरा हो रहता था, तौभी नाचने गानेमें कभी कभी अत्यन्त प्रेम उत्पन्न होनेके कारण नाचने गाने और बजानेकी विधिको प्राप्त किया। अर्ज्जुनने नाचने गानेके अनेक गुण और बजानेके सब भेदोंकोभी प्राप्त करनेपर सुख न पाया और निरन्तर शत्रुनाशन अर्ज्जुन अपने भाई और कुन्ती माताहीका स्मरण रहे।

४४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, इन्द्रने चित्रसेन गन्धर्व्वसे कहा, कि अर्ज्जुनके नेत्र उर्व्वशीसे लगे जान पड़ते हैं, अतएव तुम अप्सराओंमें श्रेष्ठ उर्व्वशीको लेकर अर्ज्जुनके पास जाओ, अस्त्र प्राप्त किये हुए और पूजित अर्ज्जुनको स्त्री पुरुषके संयोगसे सुख हो। इन्द्रकी ऐसी आज्ञा सुनकर ऐसाही करूंगा, यह कहकर गन्धर्व्वराज अप्सराओंमें उत्तम उर्व्वशीके घर गये। सुखसे बैठी हुई उर्व्वशीने चित्रसेनको देखकर प्रसन्न चित्तसे उनका स्वागत किया, तब चित्रसेन हंसकर यों बोले, कि हे सुश्रोणि! तुमको यह भली भांति ज्ञात हो, कि मैं देवतोंके स्वामी महाराज इन्द्रसे भेजा हुआ यहां आया हूं। जो मनुष्य और देवतोंमें अपने स्वभावहीके गुण लक्ष्मी, शील, रूप, व्रत, दान, बल, वीर्य्य और तेजमें प्रसिद्ध हैं, जो शरीर विद्या ऐश्वर्य्यादिसे भरा हुआ है, जो किसीकी निन्दा नहीं करता है, जिसने अङ्ग, उपाङ्ग और उपनिषदोंके सहित चारों वेद और पांचवें पुराणको पढ़ा है, जिसने पढ़ते समय गुरुसे सुश्रुषा सहित आठ गुणवाली बुद्धिको प्राप्त किया है, जिसने ब्रह्मचर्य्य और वीरताको पाया है, जो इन्द्रके समान स्वर्गकी रक्षा करनेवाला, अभिमानी करके न कहनेवाला, लक्षको देखनेवाला प्रियवादी है, जो अन्न और पीनेकी वस्तुओंको बढ़ानेवाला, सत्यवादी पूजित, रूपवान, अहङ्कार रहित, भक्तोंपर कृपा करनेवाला सुन्दर, युद्धमें स्थिर है; जो प्रशंसा करने योग्य अपने गुणोंसे इन्द्र और वरुणके समान है, उस अर्ज्जुन वीरको तुम भी जानती हो, वह तुम्हारे चरणका सेवक बना है। हे कल्याणि! इस हेतुसे वह दीनभी तुम्हारा संग करके स्वर्गके फलको पावे, अतएव इन्द्रकी आज्ञासे ऐसाही करो।

अनिन्दित उर्व्वशी चित्रसेनके यह बचन सुनके हंसकर अपना बहुत मान समझ कर प्रेम पूर्व्वक चित्रसेनसे ऐसा बोली, हे चित्रसेन तुमने जो अर्ज्जुनके यह सब गुण कहे, इन सब गुणोंको सुनकर मैं पहिलेहीसे उसके निमित्त कामसे व्याकुल हो रही हूं। अब मैं अर्ज्जुनसे प्रेम करूं इससे अधिक आनन्द और क्या होगा? मैं इन्द्र और तुम्हारी आज्ञा और अर्ज्जुनके गुणोंसे काममें व्याकुल हुई हूं, तुम जाओ मैं अर्ज्जुनके स्थानमें जाकर अवश्य इस सुखको प्राप्त करूंगी।

४५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कृतकृत्य गन्धर्व्वको उत्तम हंसनेवाली उर्व्वशीने बिदा करके अर्ज्जुनसे मिलनेकी इच्छासे स्नान किया और कामके बाण और अर्ज्जुनके रूपसे पीड़ित उर्व्वशीने प्रकाशमान उत्तम आभूषण और हृदयप्रिय गन्धमाला धारण करी, अनन्तर कामसे अत्यन्त व्याकुल चित्तसे दिव्य बिस्तरके पलङ्ग पर बैठकर चित्तके संकल्प और मनोरथोंसे अबाध्य मनवाली उर्व्वशी अर्ज्जुनको अपने पास आया हुआ जानकर विहार करने लगी, अनन्तर जब भारी अन्धकार सन्ध्याके समय चन्द्रमा उदय भया तो उत्तम वर्णवाली उर्व्वशी अर्ज्जुनके स्थानको चली। कोमल गुंथी हुई

लम्बी कुमुद आदि फूलोंसे शोभित उस सुन्दरीकी वेणी उस समय अत्यन्त शोभित होती थी ; भौंहोंके चलने, मीठी बोली, शोभा और मुखके भोलेपनसे मानों चन्द्रमाको लजाती हुई चली, दिव्य चन्दनादि सुगन्धि और हारसे शोभित उसके दोनों कुच कम्पित होते थे, कुच अत्यन्त भारी होनेके कारण चरण चरणपर नीचो होकर चलती थी, विचित्र रोमराजिसे शोभित उसका मध्य शरीर अत्यन्त शोभा दे रहा था, पहाड़के समान भारी ऊंचे और कठोर नितम्ब करधनीसे शोभित कामदेवके स्थानके ऐसे भान होते थे, जिनको देखकर दिव्य ऋषियोंका मनभी चलित हो जाय, ऐसी जङ्घा कलङ्करहित सी दिखलाई देती थी, गम्भीर गुल्फवाले चरण तांबेके समान लाल अङ्गुली कछुवेके समान ऊंचीपांवपीठ पायजेबके शब्दसे अत्यन्त शोभा दे रही थी, थोड़ा मद्यपान सन्तोष और कामदेवके विविध विलासोंसे उर्व्वशी देखनेके योग्य बनी थी। स्वर्गमेंभी देखनेके योग्य शरीरवाली वह विलासिनी सिद्ध, चारण, गन्धर्व्वोंको आश्चर्य्य देती हुई चली ; बादलके रङ्गवाले उस पतले वस्त्रोंमें वह ऐसी शोभित हुई, जैसे पतले मेघके वीचमें आकर आकाशमें चन्द्रमाकी कला चलती है। क्षण भरमेंही उत्तम हंसनेवाली, मन और पवनके समान गतिवाली उर्व्वशी अर्ज्जुनके स्थानमें पहुंची। वहां द्वारपालोंने उसको आई हुई देखकर जाके अर्ज्जुनसे निवेदन किया, हे नरश्रेष्ठ ! उत्तम नेत्रवाली उर्व्वशी आपके मनोहर और निर्म्मल स्थानमें शङ्कितचित्त होकर इस रात्रिमें आयी है, अर्ज्जुनने उर्व्वशीको देखते ही लज्जाके मारे अपने नेत्र बन्द कर लिये और प्रणामकरके गुरुके समान पूजा की।

अर्ज्जुन बोले, हे देवि ! हे अप्सराओंमें श्रेष्ठ उर्व्वशी ! हम तुमको शिरसे प्रणाम करते हैं, हम तुम्हारे दास उपस्थित हैं, आज्ञा करो ! अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुनकर उर्व्वशी संज्ञासे रहित होगयी और गन्धर्व्वके सब वचन कहने लगी। उर्व्वशी बोली हे पुरुषोत्तम ! मुझसे चित्रसेनने जैसा कहा और मैं जिस हेतु यहां आयी हूं, सो सब कहती हूं, हे पुरुषश्रेष्ठ ! मनको हरनेवाले इन्द्रके उत्सवमें जहां तुम, रुद्र, आदित्य, अश्विनीकुमार, वसु, महर्षिसमूह, राजर्षिश्रेष्ठ सिद्ध, चारण, और महासर्पोंके समूहके सामने जो तुम्हारे आनेके कारणसे उत्सव हुआ था, जहां सबलोग ऋद्धियोंसे प्रकाशमान, अग्नि, सूर्य्य, और चन्द्रमाके समान शरीरवाले अपने अपने स्थान और मानके अनुसार बैठे थे, हे इन्द्रनन्दन ! हे विशालनेत्र ! जहां गन्धर्व्व लोग वीन बजा रहे थे, और उत्तम मनोहारी गीत गाये जाते थे, जहां उत्तम अप्सरा नाच रही थीं, हे कुन्तीपुत्र ! वहां तुम विना पलक लगाये केवल मेरी ओर देख रहे थे, उस पवित्र देवतोंके समागममें तुम्हारे पिताकी आज्ञा पाकर सब देवता लोग अपने अपने स्थानको गये। हे शत्रुनाशन ! तिसी प्रकारसे सब अप्सराभी विदा होकर अपने स्थानको गयीं और सबभी विदा होकर अपने अपने स्थानको चले गये। तब इन्द्रको आज्ञासे चित्रसेन गन्धर्व्वने मेरे घरमें जाकर ऐसा कहा कि हे उत्तम वर्णवाली ! तुम्हारे लिये इन्द्रने हमको भेजा है, तुम अपना, मेरा और इन्द्रका प्रियकार्य्य करो, हे सुश्रोणी ! तुम इन्द्रके तुल्य युद्धमें वीर उदार गुणसे भरे हुए अर्ज्जुनको वरण करो, उनको और तुम्हारे पिताको आज्ञा पाकर तुम्हारी सुश्रुषा करनेको तुम्हारे स्थानमें आयो हूं। हे पापरहित शत्रुनाशन ! मैं तुम्हारे गुण और कामदेवसे व्याकुल हुई हूं, और मेरीभी यही इच्छा थी।

श्रीवैशम्पायनजो बोले, अर्ज्जुनने उसके ऐसे वचन सुनकर लज्जामें भरकर अपने हाथोंसे कानोंको बन्दकर लिया और ऐसा कहने लगे,

हे भामिनि ! हे वरानने ! जो तुम कह रही हो, सो हमारे सुननेके योग्य नहीं है, क्योंकि तुम निश्चय करके हमारी गुरुपत्नीके समान हो, जैसे शची, कुन्ती और माद्री हैं, तुमभी हमको वैसीही हो, हे कल्याणि ! इसमें कोईभी विचार और सन्देहका स्थान नहीं है, मैंने जो तुमको सभामें भली भांति देखा था, उसका कारण सुनो, मैं यह विचारता था, कि यही कौरववंशकी माता हैं। हे फूले हुए कमलके समान नेत्रवाली! हे शुभे! हे अच्छे हंसनेवाली! यही विचारकर मैं तुम्हारे प्रसन्न मुखको देख रहा था। हे कल्याणि ! हे अप्सरा ! तुम मुझको दूसरे प्रकार देखने योग्य नहीं हो। तुम मुझे गुरुसेभी गुरु हो, क्योंकि हमारा वंश तुमहीसे चला है।

उर्व्वशी बोली, हे कुरुनन्दन वीर ! हमारा विवाह किसीसे नहीं हुआ है, इस हेतु तुम मुझको माताके समान कहने योग्य नहीं हो। क्योंकि पुरुके वंशके पुत्र और पोते अपने तपके बलसे जो यहां आये हैं, सो सब हमसे विहार करते हैं, वे लोग कुछ विचार नहीं करते। हे इच्छापूरन करनेवाले ! कामदेवसे व्याकुल भक्त दुःखनी मुझको तुम जानेको आज्ञा मत दो। अर्ज्जुन बोले, हे उत्तम मुखवाली ! हे आनन्दिते ! हम जो तुमसे कहते हैं, सो सब दिशाओंके देवता तथा तुमभी सुनो। हे पापरहिते ! मुझको जैसे माद्री, शची, और कुन्ती हैं, तैसेही तुमभी हो, क्योंकि तुमसे हमारा वंश चला है, तुम हमको मातासेभी अधिक हो। हे उत्तम वर्णवाली ! हम तुमको शिरसे प्रणाम करते हैं। हम तुम्हारे दास हैं, तुम हमको माताके समान रक्षा करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुनकर उर्व्वशीको महाक्रोध हुआ और भौंहें टेढ़ी करके कांपती हुई अर्ज्जुनको शाप देने लगी। उर्व्वशी बोली, मैं तुम्हारे पिताकी आज्ञासे कामके वशमें होकर आपही तुम्हारे घरमें आयी थी और तुमने हमारा सम्मान नहीं किया। इसवास्ते तुमको मैं शाप देती हूं, कि तुम स्त्रियोंके बीचमें मानसे रहित होकर नपुंसकके समान नाचनेवाले बनोगे और सब-लोग तुम्हें यह कहेंगे, कि यह पुरुष नहीं है। इसप्रकारसे अर्ज्जुनको शाप देकर फड़कते हुए ओठवाली उर्व्वशी सांसलेती हुई पुनः शीघ्रही अपने घरको लौट आई। अनन्तर प्रातःकाल होनेसे शत्रुनाशन पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनने शीघ्रतासे चित्रसेन गन्धर्व्वको बुलाकर रातका सब समाचार जिस प्रकार उर्व्वशीने शाप दिया था, जैसेका तैसा कह दिया और चित्रसेन गन्धर्व्वने सब समाचार इन्द्रसे कहा, तब हाथीके वाहनवाले इन्द्रने अर्ज्जुनको एकान्तमें बुलाकर शान्ति पूर्व्वक हंसते हंसते ऐसे वचन कहे, हे तात ! हे सत्तम ! तुमको पाकर कुन्ती अच्छे पुत्रकी माता कहाई। हे महाभुज ! हे मानव ! तुमने अपने धैर्य्यसे ऋषियोंको भी जीत लिया। हे तात ! उर्व्वशीने जो तुमको शाप दिया है, उससे तुम्हारा कल्याणही होगा। हे वीर ! हे पापरहित ! तुम लोगोंको वनवासके तेरहवें वर्षमें पृथिवीमें छिपकर रहना होगा, इस शापका फल वहीं प्राप्त होगा वहीं नपुंसकता और नाचनेके वेषको एकवर्षतक धारण करके पुनः तुम पुरुष होगे। आगे शत्रुनाशन अर्ज्जुन इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर परम प्रसन्न हुए और शापके सोचको भूल गये। और यशस्वी चित्र-सेन गन्धर्व्वके सङ्गमें रहकर स्वर्गमें महात्मा अर्ज्जुन आनन्द करने लगे। जो पुरुष पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनके इस चरित्रको सदा सुनते हैं, उनका चित्त कहींभी पापके कामोंमें नहीं लगता। देवराज इन्द्रकेपुत्र अर्ज्जुनका यह पवित्र चरित्र सुनकर राजा लोग पाप, क्रोध,

दम्भ आदि सब पापोंसे छूटकर स्वर्गमें आनन्द करते हैं।

४६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि एक समय इन्द्रके देखनेकी इच्छासे घूमते हुए महर्षि लोमश इन्द्रके घर गये, वहां जाकर महामुनिने इन्द्रको नमस्कार किया और उनके आधे आसन पर बैठे हुए अर्जुनको देखा, तब इन्द्रसे दिये हुए आसन पर ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ लोमश महर्षियोंसे पूजित होकर बैठे। अनन्तर उन्होंने यह विचारा, कि यह कुन्तीका पुत्र चत्री किसप्रकार इन्द्रके आसन पर वैठा है। इसने कौन पुण्य किया था, जिससे लोकोंको जीत लिया, कौनसे पुण्यसे यह देवतोंसे नमस्कार करने योग्य स्थानको प्राप्त किया? वृत्रासुरके नाशक शचिके स्वामी इन्द्रने लोमशके मनकी बात जानकर हंसकरके ऐसा कहा। हे महर्षि! तुम्हारे मनमें जो सन्देह हुआ है, उसका कारण सुनो, जिसको तुम मनुष्य देखते हो, यह मनुष्य नहीं है। हे महर्षि! यह महाभुज कुन्तीमें हमारे वीर्य्यसे उत्पन्न भया है, अस्त्र सीखने और किसी कारणसे यहां आया है। हे ब्रह्मण! हमको आश्चर्य्य है, कि आप इस पुराने ऋषिको भी नहीं जानते हैं। हम इसका सब वृत्तान्त कहते हैं, आप सुनिये। जो पुराने ऋषियोंमें उत्तम थे, वेही दोनों अब कृष्ण अर्जुन हुए हैं, यह दोनों तीनो लोकमें प्रसिद्ध हैं, सोई नर और नारायण ऋषि किसी कार्य्यके वशसे पृथ्वीमें अवतार लेकर पवित्र लक्ष्मीको धारण कर रहे हैं। हे विप्र! जिस पवित्र आश्रमको देवता और महात्मा मुनि भी नहीं देख सकते हैं, वही पवित्र जगत-विदित वदरिकाश्रम इन नरनारायनका स्थान है, जहांसे सिद्ध चारणोंसे सेवित गङ्गा चली हैं। यह दोनों कार्य्यवश होकर पृथ्वीमें उत्पन्न भये हैं। हे ब्रह्मर्षि! यह दोनों महातेजस्वी महाबलवान भूमिके भारको उतारेंगे। जो निवातकवच नामक राक्षस वरदानसे मोहित होकर अत्यन्त उन्नत हुए हैं, और जो हमारे अप्रिय कार्य्योंमें प्रवृत्त हैं, जो वरदान पाकर देवतोंको मारनेका उपाय करते हैं, और देवतोंको कुछ नहीं समझते हैं, जो महाबलवान घोर दनुके पुत्र पातालमें रहते हैं, जिनसे युद्ध करनेमें कोई भी देवतोंका झुण्ड समर्थ नहीं है, सो महात्मा विष्णु नामक कपिलदेव थे, वही जीतनेके अयोग्य हरि पृथ्वीमें उत्पन्न हुए हैं, हे विभो! पहले समयमें सागरको खोदते हुए महाबलवान सगरके पुत्रोंको रसातलमें मारा था, वेही महात्मा अर्जुनको संग लेकर युद्धमें हमारा महत् कार्य्य करेंगे। हे द्विजोत्तम! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि वे महातड़ागमें जाकर सर्पके समान निवातकवचै राक्षसोंको दर्शन ही मात्रसे नष्ट कर सकते हैं, परन्तु तेजके समूह मधुनाशक कृष्णको थोड़े कार्य्यके वास्ते जगाना अच्छा नहीं, क्योंकि वे जागकर सब जगत्को भस्म कर देंगे। अतएव यही वीर अर्जुन उनके मारनेमें समर्थ हैं; उनको मारकर यह पृथ्वीमें जायंगे। इस हेतु तुम हमारी आज्ञासे मनुष्य लोकमें जाओ और वहां काम्यक-वनवासी वीर युधिष्ठिरसे भेंट करो। और हमारे वचनसे सत्यवादी धर्मात्मा युधिष्ठिरसे यह कहना, कि तुम अर्जुनके निमित्त कुछ सोच मत करो, वह शीघ्रही शस्त्र सीखकर आवेंगे, क्योंकि बिना अधिक बाहुबल और शस्त्रोंमें अभ्यासके किये कोईभी भीष्म और द्रोणादिकोंको युद्धमें जीतनेको समर्थ नहीं है, अब महाबाहु और महामनस्वी अर्जुन शस्त्रोंको सीखकर दिव्य नांचने गाने और बाजेकी विद्याके पार होगये हैं। हे नरनाथ! जबतक वह यहां आवें, तबतक आपभी सब भाइयोंके समेत उत्तम तीर्थोंको देखिये। हे शत्रुनाशन! हे राजेन्द्र!

पुण्य तीर्थोंको देखकर दुःख और पापसे रहित होकर सुखसे राज्यको भोग करेंगे। हे द्विजश्रेष्ठ! आप तपरूपी बलके समेत पृथ्वीमें घूमते हुए उनकी रक्षा कीजियेगा। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! नीचे ऊंचे दुःखसे जानने योग्य पर्व्वतोंमें घोर राक्षसलोग रहते हैं, आप उनसे उनको बचाइये। जब इन्द्र ऐसा कह चुके तब अर्ज्जुनभी विनयपूर्व्वक लोमश ऋषिसे बोले, हे ऋषि! आप अवश्य पाण्डुनन्दन राजाकी रक्षा कीजिये, महाराज जैसे तीर्थोंमें घूम सकें और दान दे सकें, आप वैसाही यत्न कोजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महा तपस्वी लोमश हम ऐसाही करेंगे, यह प्रतिज्ञा करके काम्यक वनकी इच्छासे पृथ्वीको चले काम्यक वनमें जाकर शत्रुनाशन कुन्तीपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिरको भाई और तपस्वियोंके सङ्ग बैठे हुए देखा।

४७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे विप्र! अपार तेजवाले अर्ज्जुनका यह अद्भुत कर्म्म सुनकर महा बुद्धिमान धृतराष्ट्रने क्या किया? श्रीवैशम्पायन बोले, हे राजन्! ऋषियोंमें श्रेष्ठ व्यासदेवसे अर्ज्जुनकी इन्द्रलोक-यात्रा सुनकर अम्बिकाके पुत्र राजा धृतराष्ट्र सञ्जयसे ऐसा कहने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सूत! हे सारथे! मैंने बुद्धिमान अर्ज्जुनका सब कर्म्म सुना। कहो तुमनेभी कहीं कुछ सत्य सत्य सुना है? मूर्ख बुद्धिवाला दुर्म्मति केवल स्त्री प्रसंगमें निश्चयवाला मेरा पापी पुत्र समस्त पृथ्वीका नाश करेगा। जिस महात्मा युधिष्ठिरकी वाणी सदाही सत्य है, जिसकी ओर लड़नेवाला अर्ज्जुन है, वही युधिष्ठिर तीनों लोकका राजा होगा। पङ्खवाले तेजवारयुक्त तेज वाणोंको चलाते समय अर्ज्जुनके आगे युद्धमें मृत्युभी नहीं ठहर सकता है, मेरे दुष्टात्मा पुत्र सबही मृत्युके वशमें हुए हैं, जिनका युद्ध अजेय पाण्डवोंसे होनेवाला है। मैं जानता हूं, कि गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनके समान कोईभी लड़नेवाला योद्धा नहीं है। मैं रात्रि दिन यही सोचता रहता हूं, कि कौन सा वीर रथपर चढ़कर अर्ज्जुनसे लड़ेगा? यदिभीष्म और द्रोणाचार्य्य हम लोगोंसे कर्णके समेत फिर जायं तो जगतमें महासन्देह होगा और हमारी जयभी नही होगी और यदि यह उनसे लड़ेंभी तौभी विजयमें सन्देहही है, क्योंकि कर्ण दयालु और अनुचितकर्त्ता है, और गुरु द्रोणाचार्य्य बूढ़े हैं। उधर अर्ज्जुन पूरा पराक्रमी, उद्योगी, बलवान और महाक्रोधी है। सब पाण्डव लोगोंसे महायुद्ध होकर हमारी हानि होगी, क्योंकि ये सब लोग सब अस्त्र जाननेवाले वीर और यशस्वी हैं। वह लोग युद्धमें जीतने योग्य नहीं हैं; इस हेतुसे सब राज्यकी इच्छा करते हैं। अब मुझे यह निश्चय होगया, कि जबतक अर्ज्जुन वा यह सब न मारे जायंगे, तबतक शान्ति न होगी परन्तु अर्ज्जुनको मारने और जीतनेवाला जगतमें कोई नहीं है। किस प्रकार उसका यह क्रोध शान्त हो और हमसे सन्धि हो! उस इन्द्रके समान वीरने खाण्डव वनमें अग्निको सन्तुष्ट किया था, उसीने राजसूय यज्ञमें सब राजोंको जीता था। हे सञ्जय! हे तात! जिस प्रकार वज्र पहाड़ोंका नाश करता है, वैसेही अर्ज्जुनके छोड़े हुए वाण मेरे सब पुत्रोंको नाश करेंगे। जैसे सूर्य्यकी किरण जगतको जलाती है, वैसेही अर्ज्जुनके हाथसे छूटे हुए वाण मेरे पुत्रोंका नाश कर देंगे। मुझको अभीसे अर्ज्जुनके रथके शब्दसे डरी हुईके समान अपनी सेना दीखती है। ईश्वरने वाणोंको निकालते और चलाते समय युद्धमें स्थिर रहनेवाले अर्ज्जुनको ब्रह्माने सर्व्वनाश करनेवाला

आततायी काल बनाया है, हम जिस प्रकार उसको जीत सकें, सो उपाय तुम कहा।

४८ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे राजन्! हे पृथ्वीनाथ! आपने जो दुर्य्योधनके विषयमें कहा सो सब सत्य है, यह कदापि झूठ नहीं होगा। यशस्विनी धर्म्मपत्नी द्रौपदीको सभामें आयी हुई देख कर तेजस्वी पाण्डव महाक्रोधके वशमें हुए हैं, दुःशासनके उन कठोर विग्रहकारी बचनों और कर्णकी वाणियोंको स्मरण करके मेरी बुद्धि नष्ट सी हुई जाती है। हे महाराज! मैंने यह सुना है, कि ११ रूपधारी शिवको अर्जुनने महायुद्धमें धनुषसे प्रसन्न किया है, जटाधारी सब देवतोंके स्वामी भगवान शिव उनकी भक्ति जाननेकी इच्छासे आपही किरातका वेष धारण करके युद्ध करनेको आये थे। अनन्तर कौरव सिंहपराक्रमी अच्युत अर्जुनसे मिलनेको सब लोकपाल आये थे, उन्होंने सब अस्त्र उनको दिये हैं, हे महाराज! अर्जुनको छोड़कर और कोई भी पुरुष जगत्में ईश्वरके साक्षात दर्शन नहीं कर सकता, हे राजन् जो आठ मूर्त्तिवाले शिवसे भी युद्धमें नहीं हारे, उस अर्जुनसे लड़नेको समर्थ कोई भी वीर नहीं दीखता। यह आपत्ति सभामें द्रौपदीको खींचनेवाले पाण्डवोंको क्रोधित करनेवाले तुम्हारे पुत्रोंसे उत्पन्न की है। यह आपत्ति घोर, कठिन और रोमको खड़ो करनेवाली है, जब दुर्य्योधनने द्रौपदीको अपनी जङ्घा दिखाई थी, तब क्रोधसे फड़कते हुए आठवाले भीमसेनने सत्यवाणी कही थी कि, रे पापी! मैं तेरह वर्ष बीते घोर वेगवाली गदासे तेरी जङ्घाको तोड़ूंगा। तैंने जुआरूपी पाप किया है। वे सब लोग शस्त्र चलानेमें श्रेष्ठ महातेजस्वी सब शस्त्रोंको जाननेवाले देवतोंसे भी हारने योग्य नहीं हैं। मुझको निश्चय है, कि वे लोग अपनी स्त्रीको सभामें देखकर बड़े क्रोधित हुए हैं, सो युद्धमें तुम्हारे पुत्रोंका नाश करेंगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सूत! कठोर बात बोलनेवाले कर्णने क्या बुरा काम किया, जो द्रौपदीको सभामें बुलाकर यह बैर उत्पन्न किया? मेरे पापी पुत्र अब भी बैठे रहें, क्योंकि उनका बड़ा भाई गुरु विनयके समेत स्थिर है, दुष्ट दुर्य्योधन मुझको आंख और चेष्टासे रहित देख करभी मेरे बचनको नहीं सुनता, और जो कर्ण, शकुनि, आदि मूर्ख और पापी मन्त्री हैं, सो उसके दोषोंको निरन्तर बढ़ातेही चले जाते हैं। सामान्य रूपसेभी यदि अर्जुन बाणोंको छोड़े, तो मेरे पुत्र भस्म हो सकते हैं, और क्रोधकी तो कथाही क्या है। अर्जुनके हाथ और महाधनुषसे छूटे हुए दिव्यमन्त्रसे मन्त्रित बाण देवतोंकोभी नाश कर सकते हैं, जिसके साक्षात् तीनलोकके नाथ कृष्ण मन्त्री, रक्षा करनेवाले और मित्र हैं, वह किसको नहीं जीत सकता? हे सञ्जय! यह बड़े आश्चर्य्यकी बात है, जो सुनते हैं, कि अर्जुनने अपने हाथसे महादेवसे युद्ध किया, और सब लोगोंके देखते हुए कृष्णकी सहायतासे जो अग्निको सन्तुष्ट किया था, सो तुम जानतेही हो। मुझे निश्चय है, कि मेरे पुत्र शकुनि आदि अपने मन्त्रियोंके समेतभी भीम, अर्जुन और कृष्णके क्रोधित होनेपर स्थिर न रह सकेंगे।

४९ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने! राजा धृतराष्ट्रने वीर पाण्डवोंको वनको निकालकर जो कुछ सोच किया, सो सब व्यर्थही था, क्योंकि महारथ पाण्डवलोग क्रोधसे पीड़ित होकर क्रोध करानेवाले अल्पबुद्धि राजपुत्र दुर्य्योधन पर कैसे क्षमा कर सकते थे। अब आप हमसे यह कहिये, कि पाण्डवलोग वनमें रहकर क्या

भोजन करते थे ? क्या वह लोग नगरकी वस्तु खाते थे, अथवा वनमें उत्पन्न हुई ?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, वनमें उत्पन्न हुए अन्न और शुद्ध वाणोंसे मारे हुए हरिण ब्राह्मणोंको भोजन कराकर पुरुषसिंह पाण्डवउन्हींको खाते थे, महावाणधारी महावीर पाण्डव लोगोंको वनमें वसते हुए जानकर अग्निहोत्री और अनग्निहोत्री अनेक ब्राह्मण उनके सङ्ग रहते थे, महाराज युधिष्ठिर अपने पवित्र वाणोंसे अनेक खाने योग्य वनमें रहनेवाले हरिणोंको मार कर वेदपाठी महात्मा सहस्रों ब्राह्मण और दशमोक्ष जाननेवाले महात्माओंको भोजन देते थे। पहले ब्राह्मणोंको तृप्त करके तब आप भोजन करते थे, उनके समाजमें कोई भी बुरे रङ्गवाला, रोगी, दुबला, बलहीन, दुखी और डरपोक नहीं दीखता था। महाराज धर्म्मराज युधिष्ठिर अपने जाति भाइयोंको प्यारे पुत्रके समान और सहोदर भाइयोंको जातिके सहित पालते थे। यशस्विनी द्रौपदी अपने सब पतियोंको माताके समान भोजन कराकर पीछे आप भोजन करती थी। पूर्व्वकी ओर राजा, दक्षिणकी ओर भीमसेन और अर्ज्जुन पश्चिम तथा उत्तरकी ओर नकुल और सहदेव धनुषको लेकर सदाही हरिणोंका नाश करनेको जाते थे, इस प्रकार उन चारों पाण्डवोंने अर्ज्जुनके विना पढ़ते, जीतते और यज्ञ करते पांच वर्ष बिताये।

५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! उनके मनुष्योंसे अधिक और अद्भुत चरित्र सुनकर राजा धृतराष्ट्र चिन्ता, शोक और क्रोधसे व्याकुल होगये। हे पुरुषसिंह! हे जनमेजय! अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्र लम्बी और गर्म्म सांस लेकर सञ्जयसे मन्त्रणा करते हुए ऐसे बोले, हे सूत! रात और दिनका एक एक क्षणमात्रभी मुझको शान्ति प्राप्त नहीं होती है; मैं रातदिन उस जुएकी अनीतिहीको स्मरण करता हूं। उन सब भाइयोंका न सहने योग्य तेज, धैर्य्य, धारणा शक्ति और परस्परकी प्रीति ऐसी है, जो पुरुषोंमें नहीं होती। तिनमें भी देवतोंके पुत्र देवतोंके समान तेजस्वी नकुल और सहदेव युद्धमें दृढ़ धनुषवाले, दूरतक वाण फेंकनेवाले, सदाही युद्धमें स्थिर रहनेवाले, जल्दी वाण चलानेवाले, महाक्रोधी, शीघ्रता करनेवाले, हैं। वे दोनों जब भीम और अर्ज्जुनको अगाड़ी करके युद्धमें आवेंगे, तो सिंह और अश्विनी कुमारके समान उनके वेगको कोई भी न सह सकेगा। हे सञ्जय! मैं अपनी सेनाका अभीसे नाश देख रहा हूं। मुझे यह निश्चय है, कि वह दोनों वीर महारथ और युद्धमें असामान्य हैं; वे दोनों द्रौपदीके उस दुःखको देखकर कदापि क्षमा न करेंगे। महा धनुषधारी वृष्णिवंशी और महा तेजस्वी पाञ्चालदेशी क्षत्रिय लोग जब सत्यवादी, महात्मा कृष्णसे रक्षित होकर पाण्डवोंको सङ्गमें लेकर युद्धमें आवेंगे, तो मेरे पुत्रोंके समेत मेरी सब सेना नष्ट होजायगी। हे सूतनन्दन! राम और कृष्णसे शिक्षित वृष्णिवंशी सेनाके वेगको कोईभी नहीं सह सकता है। उनलोगोंके बीचमें जब महा पराक्रमी धनुषधारी भीम वीरोंके नाश करनेवाली पाताल पर्य्यन्त फोड़नेवाली गदाको लेकर युद्धमें घूमेगा, तैसेही गाण्डीव धनुषका बिजलीके समान घोर शब्द और भीमकी गदाका वेग कोईभी राजा सहनेको समर्थ न होगा, उस समय मैं अपने मित्रोंकी बातोंका स्मरण करूंगा, जो दुर्य्योधनके वशमें होकर पहले मैंने नहीं करी थी।

सञ्जय बोले हे महाराज! आपने यह बड़ी भारी भूल करी है, जो सामर्थ रहते परभी अपने पुत्रको मोहसे जुएसे नहीं रोका। जब अच्युत मधुनाशक श्रीकृष्णने सुना, कि पाण्डव

लोग जुएमें हार गये, तो तुरंतही काम्यक-वनमें पाण्डवोंके पास आये, धृष्टद्युम्न आदि द्रुपदके पुत्र, विराट, धृष्टकेतु और महारथ कैकय लोग यह सब युधिष्ठिरके पास वनमें गये थे। उन्होंने पाण्डवोंको हारा हुआ देखकर जो कुछ उनसे कहा सो मैंने दूतोंसे सुना है। वही आपसे निवेदन करता हूं, उस समागममें श्रीकृष्णने युधिष्ठिरसे जो वार्त्ता करी, सो सुनिये। युधिष्ठिरने कृष्णसे कहा कि आप युद्धमें अर्जुनके सारथीका काम कीजियेगा और कृष्ण भगवानने कहा, कि हम ऐसा ही करेंगे, पाण्डवोंको उस दशामें देखकर कृष्णको महा क्रोध हुआ, और हरिणके चमड़ेकी पहने हुए युधिष्ठिरसे ऐसा बोले, हे महाराज! पहले मैंने जो राजसूय यज्ञके समयमें इन्द्रप्रस्थमें पाण्डवोंकी लक्ष्मी देखी थी, सो दूसरे राजोंको दुर्लभ है। जिस महायज्ञमें शस्त्र, भय और तेजसे पीड़ित अङ्ग, वङ्ग, पौण्ड्, उड्र, चोल द्राविड़ और अन्ध्रक आदि राजा, समुद्रवासी बहुत जलवासि-देश-निवासी और सब देशोंके राजा, सिंहलके उत्तम राजा, लङ्काके राजा तथा और म्लेच्छलोग पश्चिमके सब राजा, समुद्रके बीचमें रहनेवाले राजा, पल्लव, दरद, सब, किरात, यवन, शक, नीर, हूण, चीन, तुषार, सैन्धव, जागुड़, रामठ, सुराट, स्त्रीराज, तङ्गण, कैकय, मालव और काश्मीर आदि अनेक महाराजोंको उस अभिषेकमें आये हुए मैंने देखा था। हे महाराज! वह आपकी चलनेवाली और चञ्चल लक्ष्मी जिन्होंने ली है, मैं आपसे आज्ञा लेकर उनको छीन लाऊंगा। हे कौरव्य! मैं, बलराम, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, अक्रूर, गद, शाम्ब, प्रद्युम्न, उग्रसेन, महावीर धृष्टद्युम्न और शिशुपालपुत्र धृष्टकेतु यह सब मिलकर अभी युद्धमें दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन और शकुनि आदि सबको मार कर लक्ष्मीको प्राप्त करेंगे। हे भारत! तब आप अपने सब भाइयोंके समेत धृतराष्ट्रकी लक्ष्मीको प्राप्त करके हस्तिनापुरमें बसते हुए सब पृथ्वीका राज्य कीजिये, अनन्तर उस वीरसमाजमें जहां महावीर धृष्टद्युम्न आदि अनेक वीर बैठे थे, राजा युधिष्ठिर ऐसा कहने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे जनार्द्दन! हम तुम्हारी सच्ची प्रतिज्ञाको स्वीकार करते हैं, हे महाबाहो! आप हमारे शत्रुओंको सेनाके समेत मारेंगे, परन्तु मैंने राजोंके बीचमें तेरह वर्ष पर्य्यन्त वनमें रहनेकी प्रतिज्ञा की है, सो आप तेरह वर्षके पश्चात् इस अपनी प्रतिज्ञाको सत्य कीजियेगा! धर्म्मराजके ऐसे वचनको सुनकर धृष्टद्युम्न आदि सभासदोंने क्रोधयुक्त कृष्णको शीघ्रही समयानुसार मीठे बचन कहकर शान्त किया और सब वीरोंने श्रीकृष्णके सामने द्रौपदीसे यह प्रतिज्ञा की, कि हे देवि! तुमको दुःख देनेके कारण दुर्योधन अपने प्राणको त्याग करेगा। हे देवि! तुम शोच मत करो और हमारी प्रतिज्ञाको सत्य मानो, जिन लोगोंने तुमको जुएमें हरी हुई देखकर हंसा है, उनके मांस सियार और पक्षी खायंगे, जिन्होंने तुम्हारे बाल पकड़कर सभामें खींचा है, उनके सिरोंको गिद्ध और सियार खींचेंगे; और उनके रुधिरको पीयेंगे। हे पाञ्चालि! तुम अपनी दृष्टिसे देखोगी, कि जिन्होंने तुमको दुःख दिया है, उनके शरीरोंको पृथ्वीमें मांस खानेवाले पक्षी खींचते फिरते हैं, और मांस खा रहे हैं; और जिन्होने देखा है, उन सबके मरे हुए सिरोंका रुधिर भूमि पीयेगी। हे भरतर्षभ! उन सब महातेजस्वी शूरवीर सब लक्षणोंसे भरे वीरोंने इस प्रकार धर्म्मराजके सामने ऐसी प्रतिज्ञा की है। अनन्तर धर्म्मराजने उन सबको तेरह वर्षके पश्चात युद्धके निमित्त निमन्त्रण दिया, वे सब महारथ लोग श्रीकृष्णको अगाड़ी करके युद्धमें आवेंगे। बलराम, कृष्ण, अर्जुन, प्रद्युम्न, शाम्ब, सात्यकी, भीमसेन, नकुल, सहदेव,

काश्मीरके राजाके पुत्र, पांचाल-राजके पुत्र और मत्स्य देशका राजा, ये सब लोकमें प्रसिद्ध वीर और अजेय हैं। ये महात्मा लोग महासेनाके सहित धर्म्मराजकी सहायता करेंगे। कौन ऐसा वीर है, जो इन केशरी सिंहके समान क्रोधित वीरोंके आगे युद्धमें अपने जीवनकी इच्छा कर सके?

धृतराष्ट्र बोले, मुझसे जो विदुरने जुएके समय कहा था कि हे नरनाथ! यदि आप पाण्डवोंको जुएमें हराइयेगा तो निश्चय कुरु-वंशका अन्तकाल होगा, और पृथ्वीमें रुधिरकी महाधारा बहेगी। हे सूत! मुझसे विदुरने पहले जो कहा था, निश्चय वैसाही होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि तेरह वर्ष बीतने-पर पाण्डवोंसे और हमसे महायुद्ध होगा।

५१ अध्याय समाप्त।

इन्द्रलोकाभिगमन पर्व्व समाप्त।

अथ नलोपाख्यान।

राजा जनमेजय बोले, महात्मा अर्ज्जुन जब अस्त्र लेनेकी इच्छासे इन्द्रलोकको गये तो युधिष्ठिर आदि पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जब महात्मा अर्ज्जुन अस्त्र लेनेकी इच्छासे इन्द्रलोकको गये, तो पाण्डवलोग द्रौपदीके सहित दुःखी होकर काम्यक वनमें वास करने लगे। एक दिन निराली घासपर एकान्तमें बैठे हुए द्रौपदीके सहित भरतकुलके श्रेष्ठ पाण्डवलोग रोते हुए शोकसे पीड़ित होकर अर्ज्जुनके वियोगसे महादुःखित भये, अर्ज्जुनके वियोग और राज्य-के नाशसे महादुःखित पाण्डव युधिष्ठिरसे महाबाहु भीमसेन ऐसा बोले, हे महाराज! जिसमें हमलोगोंके प्राण स्थिर हैं, सो पुरुष-सिंह अर्ज्जुन आपकी आज्ञासे तप करनेको गया है, जिसके नाश होनेसे पुत्रोंके समेत पाञ्चाल-लोग हम सात्यकी और श्रीकृष्ण निःसन्देह सबही मर जायंगे। जो महात्मा अर्ज्जुन आपको आज्ञासे वनमें जाकर अनेकक्लेशोंको सह रहा है, उससे अधिक दुःख और क्या होगा? जिसके बाहुबलका आश्रय करके हम सब महात्मालोग अपनेको युद्धमें अजेय और पृथ्वीको प्राप्त ही समझते हैं, जिस धनुर्धारीके भरोसे मैंने सभामें शकुनिके सहित सब धृतराष्ट्र पुत्रोंको नहीं मारा, सो हम सब लोग श्रीकृष्ण-से रक्षित बाहुबली होनेपरभी केवल आपकी आज्ञा पालनेके निमित्त इन सब क्लेशोंको सह रहे हैं, हम सबलोग श्रीकृष्णको सङ्ग लेकर कर्ण आदिको मारकर अपने बाहुबलसे जीती हुई पृथ्वीका राज्य करेंगे, केवल आपहीके जुएरूपी दोषसे इस आपत्तिमें पड़े हैं। हमारी वही दशा है, जैसे महा पराक्रमी, महावीर पुरुषका कोई मूर्ख सर्व्वस्व छीन ले। हे महाराज! आपको क्षत्रियोंके धर्म्मकी ओर देखना चाहिये। हे महाराज! वनमें रहना क्षत्रियोंका धर्म्म नहीं है, पण्डितोंने राज्यही क्षत्रियोंका धर्म्म और परम धर्म्म कहा है, क्षत्र-धर्म्मका जाननेवाला राजा मान्यका-स्थान और मार्ग होता है, हे महाराज! अर्ज्जुनको वनसे बुलाकर और श्रीकृष्णको सङ्ग लेकर इस बारह वर्षको पहलेही धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारना उचित है। हे महाराज! हे महामते! हे प्रजानाथ! मैं सेनाका उत्तम व्यूह बनाकर धृतराष्ट्रके पुत्रोंको वेगसे यमलोकको भेजूंगा। शकुनिके सहित धृतराष्ट्रके सब पुत्र, कर्ण, दुर्य्योधन या और जो युद्ध करनेको आवेंगे, उन सबको मैं एकलाही मारूंगा। हे महाराज! जब मैं इन सबको मार चुकूंगा, तब आप वनसे नगरको आइयेगा। ऐसा करनेसे आपको कुछ दोष नहीं होगा, हे तात! हे शत्रुनाशन! फिर हमलोग अनेक यज्ञोंसे सब पापोंको नाश करके उत्तम स्वर्गको लाभ करेंगे। हे महा-राज! यदि आप बालकोंके समान हठी

और दीर्घसूत्र (आलसी) और धर्मपरायण न हों, तो यह सब काम ऐसेही हो सकता है। ऐसा कहा है कि छलियोंको छलहीसे मारना चाहिये, क्योंकि छलीके सङ्ग छल करनेसे पाप नहीं होता। हे महाराज! हे भारत! धर्मज्ञ लोगोंने धर्म विषयमें कहा है कि एक रात दिन एक वर्षके बराबर है। हे महाराज! हे नाथ! वेदमेंभी ऐसाही लिखा है, कि दुखमें एक दिन रात एक वर्षके समान बीतता है। यदि आप वेदको प्रमाण मानते हैं, तो जान लीजिये, कि तेरह वर्षका समय बीत गया। हे राजन् हे शत्रुनाशन! कालको बितानेसे सेनाके समेत दुर्य्योधनका मारना कठिन होगा, क्योंकि वह सब पृथ्वीके राजोंको अपनी ओर कर लेगा; हे राजेन्द्र! जूएके प्यारे आपने जूआ खेला और हम सब लोगोंको इस बिना जानी आपत्तिमें डाला। हम उस देशको नहीं देखते, कि जहां वह दुष्टात्मा दुर्य्योधन दूतोंके द्वारा हम लोगोंको न न जान सके। हमलोगोंको जानकर वह दुष्टात्मा छलसे पुनः वनबासको भेजेगा, हे महाराज! यदि किसी प्रकारसे वह पापी हमको उस समय न जान सके, तो इस आपत्तिके पार गये हुए आपको जूएमें जीत लेगा, और आप जूएमें बुलानेसे अवश्यही जायेंगे, वह दुष्ट पासोंकी विद्यामें बड़ा प्रवीण है, फिरभी हमलोगोंको बनहीमें घर बनाना होगा। हे महाराज! यदि हम लोगोंको आप जीवन भर दुःखी बनाना चाहें, तो सब धर्म्मोंकी कीजिये। हे महाराज! यह निश्चय है, कि छलीको छलहीसे मारना चाहिये, मैं आपकी आज्ञा पाकर शक्तिके अनुसार मन्दबुद्धि दुर्य्योधनको वैसेही मार डालूंगा, जैसे अग्नि एक स्थानमें भड़ककर सबको जला देती है। आप मेरे वचनोंको सत्य मानिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्मराज युधिष्ठिरने भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर उनको शान्तकर उनका माथा सूंघकर ऐसे वचन कहे, हे महाबाहो! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि तुम अर्ज्जुनको सङ्ग लेकर तेरहवर्षके पश्चात् दुर्य्योधनको मारोगे! हे कुन्तीनन्दन! तुम जो कहते हो कि समय आगया सो झूंठ बोलनेकी मेरी शक्ति नहीं है। हे कुन्तीपुत्र! यह समय बीतनेके पश्चात् तुम पापी छली दुर्द्धर्ष दुर्य्योधनको नाश करना। जहां धर्म्मराज युधिष्ठिर भीमसेनसे ऐसा कह रहे थे; तहां महाभाग महाऋषि बृहदश्व आये। महात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने उन धर्म्म करनेवाले मुनिको वहां आये हुए देखकर शास्त्रविधिके अनुसार मधुपर्क आदिसे उनकी पूजा करी; उनको सुखसे बैठा हुआ देखकर बैठे हुए महाबाहु युधिष्ठिर अनेक दीन वचन कहने लगे। हे भगवन्! छल बुद्धिवाले पाशोंके पण्डितोंने मुझे बुलाकर मेरे धर्म्मराज्यको छीन लिया, छल को न जाननेवाले धर्म्मात्मा मेरी प्राणसेभी अधिक प्यारी स्त्रीको पापमें निश्चयवालोंने छलसे सभामें बुलाया। दूसरी बार मुझको जूएमें जीतकर हरिणके चमड़ेके वस्त्र पहिनाकर इस घोर महा बनमें भेज दिया, मैं इस बनमें दुःखी होकर रहता हुआ अब जूएकी अनेक बातोंको स्मरण करता हूं। जूएके अधिकारमें कही हुई बातोंको सुनकर और अपने हृदयके भावोंको स्मरण करके रात्रि भर चिन्ताही करता हूं। जिस गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनमें हमारे प्राण बसते हैं, उस महात्माके बिना मैं निर्बलके समान होगया हूं। शस्त्र सीख कर आये हुए प्रियवादी, गम्भीर आलसरहित, दयावान अर्ज्जुन को मैं कब देखूंगा? मेरी बुद्धिमें मेरे समान दुःखी राजा कोई नहीं है। क्या मेरे समान मन्दभाग्य कोई है? क्या आपने किसीको ऐसा देखा है? क्या सुना है?

बृहदश्व बोले, हे पाण्डव! हे राजन्!

आप जो कहते हैं, कि मेरे समान कोई भी कहीं मन्दभाग्य नहीं हुआ ; हे पाप-रहित ! यदि आप सुननेकी इच्छा करें, तो उस राजाको कथा कहूं, जो पृथ्वीमें आपसे भी अधिक मन्द-भाग्य हुआ है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराज युधिष्ठिरने उनके ऐसे वचन सुनकर कहा, कि मैं अपने समान दशाको प्राप्त हुए राजाकी कथा सुननेकी बहुत इच्छा रखता हूं, आप कहिये। वृहदश्व बोले, हे पाण्डव ! हे अच्युत ! आप भाइयोंके समेत सावधान होकर, जो राजा आपसे भी ज्यादा दुःखी हुआ है, उसकी कथा सुनिये। निषध देशमें वीरसेन नामक एक विख्यात राजा हुआ था। उसके पुत्रका नाम नल था ; वह धर्म्म और धनका पण्डित था। हमने सुना है, कि उसको भी पुष्करने छलसे जुएमें जीत लिया था, वह भी स्त्रीके सहित महा दुःखी होकर वनमें वसा था। हे राजन् ! वनमें रहनेके समय दास रथ, भाई और मित्र कोई भी उसके सङ्ग न थे, आप तो देवतोंके समान भाई और ब्राह्मणोंके सहित वनमें वास करते हैं, इससे आप सोचनेके योग्य नहीं हैं। युधिष्ठिर बोले, हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ ! मैं महात्मा नलके चरित्रको विस्तारसे सुनना चाहता हूं, आप कहिये।

५२ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, वीरसेनकेपुत्र सब गुणसे भरे, रूपवान, घोड़ेकी विद्याके पण्डित, और बलवान् नल नामक राजा हुए, उन्होंने इन्द्रके समान सब राजोंके शिर पर निवास किया, जैसे सूर्य्य अपने तेजसे सबके ऊपर रहते हैं। वे ब्राह्मणोंके पूजक, वेदके जाननेवाले ; वीर निषधदेशके राजा, जुएके प्यारे, सत्यवादी, महासेनाके स्वामी, पुरुष और स्त्रियोंके प्यारे, उदार, इन्द्रियजित, रक्षा करनेवाले, धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ नल साक्षात मनुके समान थे, वैसेही विदर्भ देशमें महापराक्रमी, शूर, सब गुणोंसे युक्त राजा भीम थे। परन्तु राजा भीमको कुछ सन्तान नहीं थी, उन्होंने सन्तानके निमित्त अनेक उत्तम यत्न किये, हे भारत ! एक दिन उनके पास दमन नामक महर्षि आये, धर्म्मजाननेवाले राजा भीमने स्त्रीके सहित उन तेजस्वी ऋषिकी सत्कार पूर्वक राणीके सङ्ग लेकर सेवा की। तब दमनऋषिने स्त्री सहित राजाको यह वरदान दिया कि तुम्हारे एक कन्या रत्न और महायशस्वी उदार तीन पुत्र होंगे, अनन्तर वैसेही हुआ। राजाने पुत्र और पुत्रीके नाम रखे ; कन्याका नाम दमयन्ती, पुत्रोंके नाम दम, दान्त और दमन हुए। यह सब लोग तेजस्वी, सब गुणोंसे पूर्ण महा पराक्रमी हुए। दमयन्ती रूप, तेज, यश, लक्ष्मी और सौभाग्यसे तीनों लोकोंमें विख्यात और सुन्दर कमरवाली हुई। एक समय सुन्दर शरीरवाली दमयन्ती सब भूषण पहनकर सखियोंके बीचमें वर्षाकी बिजलीके समान शोभित थी ; वह विशालनेत्रा अत्यन्त रूपवती होनेके कारण लक्ष्मीके समान शोभित हुई। उसके समान रूपवती देव, यक्ष, और मनुष्योंमें किसीने भी न देखी और न सुनी। वह सुन्दरी बाला देवतोंके चित्तकोभी प्रसन्न करती थी ; और पुरुषोंमें सिंह नलभी पृथ्वीमें अपनेसे रूपवान किसीको नहीं देखते थे, मानों साक्षात कामदेवहीने रूप धारण किया है। दमयन्तीकी सखियोंने दमयन्तीके आगे आनन्दसे नलके रूपका और कई पुरुष नलके आगे दमयन्तीके रूपका वर्णन किया करते थे। हे कुन्तीपुत्र ! इस प्रकारसे उन दोनोंमें विना रूप देखेभी केवल गुण सुनके अत्यन्त प्रेम बढ़ गया, और सङ्गही कामदेवभी बढ़ने लगा। तब नल अपने हृदयसे कामदेवको सहनेमें असमर्थ होकर रणवासके समीपके बागमें एकलाही रहने लगे।

अनन्तर उन्होंने उस वनमें सोनेके पंखवाले हंसोंको देखा और उनमेंसे एकको पकड़ लिया; तब उस हंसने नलसे कहा, कि हे राजन्! मैं तुम्हारा बहुत प्यारा काम करूंगा, अतएव तुम मुझको मारना मत। हे नैषध! मैं दमयन्तीके पास जाकर तुम्हारी वार्त्ता इस प्रकारसे कहूंगा, कि जिससे वह तुमको छोड़कर कदापि दूसरे पुरुषको इच्छा न करेगी। राजाने हंसकी यह बात सुनकर उसे छोड़ दिया, वे सब हंस आकाशको उड़के विदर्भ पहुंचे। वहां जाकर दमयन्तीके घरमें उतरे तब सखियोंके समेत दमयन्ती उन विचित्ररूपी पक्षियोंको देखके प्रसन्न होकर शीघ्रता सहित पकड़नेको दौड़ी। तब सब हंस उन कन्याओंके झुण्डमें इधर उधरको भागने लगे। तब एक एक हंसके पीछे एक एक कन्या हो गई। जिस हंसके पीछे दमयन्ती दौड़ी वह घरमें घुस गया और वहां मनुष्योंको बोली बनाकर दमयन्तीसे ऐसा बोला, हे दमयन्ति! निषध देशमें नल नामक राजा अश्विनीकुमारके समान रूपवान हैं, मानों साक्षात कामदेवने मूर्त्ति धारण करी है। उसके समान सुन्दर कोईभी पुरुष नहीं है, हे उत्तम रङ्गवाली! हे सुमध्यमे! यदि तू उनकी स्त्री बने तो तेरा जन्म और रूप सफल हो। हमने सब देवता, गन्धर्व्व, मनुष्य, राक्षस और सर्पोंको देखा है, परन्तु उनके ऐसा सुन्दर कोईभी नहीं मिला; तुमभी स्त्रियोंमें रत्न हो और नलभी पुरुषोंमें श्रेष्ठ है, उत्तमहीका मिलना उत्तम है। हे राजन्! हंसकी ऐसी बात सुनकर दमयन्तीने हंससे कहा, कि तुम नलसे जाकरभी ऐसाही कह दो। हे प्रजानाथ! विदर्भ राजकन्याकी बातको स्वीकार करके हंस वहांसे चले और और नलसे आकर सब कह दिया।

५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे भारत! हंसकी वाणी सुनतेही दमयन्ती अपनी स्वस्थ दशामें न रही, उसी दिनसे चिन्तासे व्याप्त, दीन, दुर्व्वल होगई, मुखका रङ्ग बदल गया; वार वार सांस लेने लगी, उन्मत्तके समान केवल ऊपरहीको देखने लगी, केवल ध्यानहीमें रहने लगी; शरीरका रङ्ग पीला होगया, कामदेवने हृदयमें स्थान बनाया, उसका तेज, भोग और आनन्दमें कहींभी चित्त न लगने लगा; निद्राने दिन और रात नेत्रको छोड़ दिया; केवल हाय हाय करके रोने लगी। दमयन्तीकी इस शोचनीय दशाको देखकर उसकी सखियोंने चिन्होंसे जान लिया और विदर्भराजसे उसकी सब दशा कह सुनाई। राजा भीमने सखियोंके मुखसे अपनी पुत्रीकी यह सब दशा सुनकर उसके महा कार्य्यका विचार किया। मेरी पुत्री आज कल अत्यन्त अस्वस्थके समान क्यों दीखती है, अनन्तर राजाने देखा, कि इसकी यौवन अवस्था प्राप्त हुई; अब इसका स्वयम्वर अवश्य करना चाहिये। अनन्तर राजाने सब राजोंको निमन्त्रन दिया और कहला भेजा, कि हे वीर लोगो! इस स्वयम्वरको आकर देखिये, सब राजालोग भीमकी आज्ञा सुन दमयन्तीका स्वयम्वर जान हाथी घोड़े और रथोंके शब्दसे पृथ्वीको पूर्ण करते हुए विचित्र माला और आभूषणोंको धारण करके देखने योग्य सेनाको सङ्ग ले विदर्भ नगरमें आये। महाबाहु राजा भीमने उन आये हुए सब महात्मा राजोंकी यथायोग्य पूजा करी, वे सब लोग पूजा पाकर वहां ठहरे।

इसी बीचमें देवऋषियोंमें मुख्य महात्मा पर्व्वत और नारद घूमते हुए इन्द्रलोकमें गये। यह दोनों महाबुद्धिमान महाव्रतधारी मुनि पूजायुक्त इन्द्रके भवनमें गये, अनन्तर भगवान इन्द्रने इन दोनोंको पूजा करके कुशल और सर्व्वगत आनन्द पूछा। नारद बोले, हे देव! हे ईश्वर! हे मघवन्! हम लोग सदाही

कुशली रहते हैं ; हे विभो ! सब जगतके राजा लोग भी आनन्दसे हैं। श्रीवृहदश्व मुनि बोले, नारदके ऐसे वचन सुनकर वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र ऐसा कहने लगे ; हे मुने ! जो चत्री लोग, पृथ्वीके स्वामी, प्राण देकर युद्ध करनेवाले हैं ; जो युद्धमें बिना भागे हुए शस्त्रसे प्राण देते हैं ; यह लोक जिस तरह मेरे लिये अक्षत है, उनकी भी है ; उन अपने प्यारे शूर वीर चत्रियोंको जो पाहुने होकर मेरे यहां आते थ, आजकल नहीं देखता हूं ; वे सब धर्म्मज्ञ चत्री कहां हैं ? इन्द्रके वचन सुनकर नारद कहने लगे।

नारद बोले, हे मघवन् ! जिस कारणसे चत्री नहीं दीखते सो आप सुनिये, विदर्भराजकी पुत्री जिसका नाम दयमन्ती है, जिसके समान रूपवती स्त्री पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे इन्द्र ! उसका स्वयम्बर शीघ्रही होनेवाला है। वहीं सब राजा और राजपुत्र जाते हैं ; हे वृत्रनाशक ! उसीको प्राप्त करनेको इच्छासे सब राजा लोग अधिक बल लेकर गये हैं, क्योंकि वह मनुष्यलोकमें रत्न है। उसी समय इन्द्रके पास समस्त लोकपाल और देवतोंमें श्रेष्ठ अग्निदेव भी आगये उन्होंने भी नारदके सब वचनोंको सुनकर वहां जानेका निश्चय किया। हे महाराज ! अनन्तर वे सब लोग अपने अपने साथियोंको लेके वाहनों पर चढ़कर उस विदर्भ नगरको आये, जहां सब राजा लोग थे। हे कुन्तीनन्दन ! राजा नल भी सब राजोंको आए हुए सुनकर दमयन्तीको इच्छासे प्रसन्न चित्तसे स्वयम्बरमें आये। मार्गमें आते देवतोंने पृथ्वीमें स्थित नलको ऐसा देखा, कि मानो साचात कामदेवही सम्पदाओंके सहित रूप धारण करके आया है, लोकपालोंने उन्हे सूर्य्यके समान तेजस्वी देखकर और उनके रूपसे विस्मित होकर अपनी इच्छाको छोड़ दिया। तब सब देवतोंने अपने अपने विमानोंको रोककर पृथ्वीमें आकर नलसे कहा, हे नैषध ! हे राजेन्द्र ! आप सत्यव्रतधारी हो ; सो हमारी सहायना करो, हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ हमारे दूत बनो।

५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे भारत ! देवतोंके ऐसे वचन सुनकर नलने देवतोंसे प्रतिज्ञा की, कि हम आप लोगोंका दूत कार्य्य करेंगे, अनन्तर हाथ जोड़कर बोले, आप लोग कौन हैं ? और जिसके पास मुझको भेजना चाहते हैं, वह कौन है ? और यहभी कहिये कि हम आप लोगोंका क्या काम करेंगे ? नलके ऐसे वचनको सुनकर इन्द्र बोले, कि हम लोग देवता हैं, और दमयन्तीके निमित्त यहां आये हैं। हम इन्द्र, यह अग्नि, और यह वरुण हैं ; हे महाराज ! यह सब पुरुषोंका नाश करनेवाले यमराज हैं ; तुम दमयन्तीसे हमलोगोंके आनेका समाचार ऐसे कहना कि इन्द्र आदिक सब लोकपाल तुम्हारे देखनेको आये हैं। वह लोग तुमको प्राप्त करनेको इच्छा करते हैं। इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम इनमेंसे जिनको तुम्हारी इच्छा हो, उसी एकको पति बनालो। इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर नल हाथ जोड़कर बोले, आपलोग एक प्रयोजनके लिये आये हुए मुझको भेजनेके योग्य नहीं हैं, हे लोकपालो ! अपने मनमें सङ्कल्प की हुई स्त्रीको किस प्रकार छोड़ सकता हूं, और दूसरेके निमित्त ऐसे वचनोंको कैसे कह सकता हूं ? देवतालोग बोले, हे नैषध ! आपने पहले कहा था, कि हम इस कार्य्यको करेंगे, सो अब करनाही होगा, जाइये देर मत कीजिये।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, निषधराज देवोंके ऐसे वचन सुनकर बोले, हे देवलोगो ! दमयन्तीका स्थान बहुत रचित है, सो मैं वहां कैसे जा सकूंगा ? इन्द्रने कहा कि हम तुमको पहुंचा

देंगे। हे युधिष्ठिर! नल उनके वचनको स्वीकार करके दमयन्तीके स्थानमें गये। वहां सखियोंके समेत दमयन्तीको देखा, वह अपने शरीरकी शोभा और तेजसे प्रकाशमान हो रही थी, वह उत्तम वर्णवाली, बहुत सुकुमारी पतलीकमर और अच्छे नेत्रवाली इस प्रकार विराजमान थी. मानो अपने तेजसे चन्द्रमाका निरादर कर रही है। उस उत्तम हंसनेवालीको देखतेही नलके शरीरमें कामदेव बढ़ने लगा; परन्तु सत्य कहनेके अभिप्रायसे उसने कामको रोका। अनन्तर दमयन्तीकी सखी नलको देखकर उसके तेजसे घबड़ाकर अपने अपने आसनोंसे उठीं, और परम सन्देहको प्राप्त हुईं और प्रीति तथा आश्चर्यके सहित नलकी सब प्रशंसा करने लगीं; परन्तु कोई उनसे बोल न सकीं। केवल मनहीमें पूजा करने लगी। इस महात्माके रूप, तेज और धैर्यको धन्य है, यह कोई देवता, यक्ष, गन्धर्व है, अथवा न जाने कौन है। वे सब उत्तम स्त्रियां उसके तेजसे घबराकर और लज्जाके वशमें होकर नलसे कुछभी न कह सकीं। अनन्तर हंसते हुए वीर नलसे हंसकर बात करनेवाली आश्चर्यवती दमयन्ती बोली, हे पापरहित! हे उत्तम शरीरवाले! हे मेरे कामदेवके बढ़ानेवाले! तुम कौन हो? और यहां देवतोंके समान आप क्यों आये हो? आते हुए तुमको किसीने क्यों नहीं देखा? क्योंकि मेरे स्थानकी बहुतही रक्षा है, और राजाकी आज्ञाभी कठोर है। विदर्भराजपुत्रीके ऐसे वचन सुनकर नल कहने लगे।

नल बोले, हे कल्याणि! मैं नल हूं और देवतोंका दूत बनकर यहां आया हूं। हे सुन्दरि! वह आपको प्राप्त करना चाहते हैं, तुम किसी एक देवताको पति बनालो, उन्हींकी शक्तिसे मैं छिपकर यहां आया हूं, मुझको यहां आते न किसीने देखा, न किसीने रोका, हे भद्रे! हे शुभे! इसी लिये मुझको देवतोंने भेजा है। अब जैसी तुम्हारी इच्छा हो तैसा करो।

५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, दमयन्ती नलको बचन सुनतेही देवतोंको श्रद्धापूर्वक प्रणाम करने लगी, और नलसे कहने लगी कि हे राजन्! आप मुझसे विवाह कीजिये, कहिये मैं आपका कौन कार्य्य करूं। हे महाराज! मैं और मेरा जो कुछ धन है, सो सब आपहीका है। हे नाथ! आप विश्वासपूर्वक मुझसे विवाह कीजिये। हे वीर! हे राजन्! हंसोंकी बात मेरे चित्तको दुःख दे रही है, मैंने केवल आपहीके बुलानेकी इच्छासे इन सब राजोंको बुलाया है। हे मानव! यदि आप भक्तिवाली मुझको ग्रहण नहीं कीजियेगा, तो मैं विष, अग्नि, जल अथवा रस्सीके प्रयोगसे मर जाऊंगी। दमयन्ती के वचन सुनकर नल बोले कि, देवतोंको छोड़कर मनुष्यकी इच्छा क्यों करती हो? मैं महात्मा ईश्वर लोकपालोंकी चरणधूलिके समान भी नहीं हूं; अतएव, तुम अपने चित्तको उन्हींमें लगाओ, क्योंकि देवतोंका द्वेष करके पुरुष नष्ट हो जाता है, अतएव हे सुन्दरि! तुम हमारी रक्षा करो, किसी उत्तम देवताको पति बनाओ, तुम निर्मल वस्त्र, विचित्र माला और भारी आभूषण प्राप्त करके आनन्द करना, जो अग्नि सब देवतोंका स्वामी है, जो इस सब पृथ्वीको जला सकता है, कौन स्त्री उसको पति नहीं करना चाहती? जिसके दण्डके भयसे सब प्राणी धर्म्म करनेकी इच्छा करते हैं, उसको पति बनानेकी किसको इच्छा नहीं होगी? धर्म्मात्मा, महात्मा, दैत्य और दानवोंके मारनेवाले सब देवतोंके स्वामी इन्द्रको पति बनानेकी इच्छा किस स्त्री को न होगी? यदि तुम्हारी इच्छा हो तो शङ्का रहित होकर लोकपालोंमें श्रेष्ठ वरुणको पति बनाओ, इस मेरे वचनको

मित्रकी वचनके समान मानो। निषधराज नलकी ऐसे वचन सुनकर दमयन्ती शोककी आंसुओंसे नेत्रोंको भरकर देवतोंको नमस्कार करके आपहीको अपना पति बनाती हूं, मेरे इस वचनको आप सत्य मानिये। ऐसा सुन हाथ जोड़कर निषधराज बोले, हे कल्याणी! मैं दूत बनकर आया हूं, देखो मेरा शरीर कांपता है। हे भद्रे! मैं जो तुमसे कहता हूं, सो मानलो। अनन्तर उत्तम हंसनेवाली दमयन्ती रोती हुई धीरे धीरे राजा नलसे बोली, हे नरनाथ! हे राजन्! मैंने एक पाप-रहित उपाय ठीक किया है, जिसके करनेसे आपको कुछ दोष न होगा, हे श्रेष्ठ! मेरे स्वयम्बरमें सब राजा इन्द्र आदिक देवता और आपभी बैठियेगा, हे नरव्याघ्र! हे नरईश्वर! सब लोकपालोंके आगे मैं आपहीको वर करूंगी; ऐसा करनेसे आपको कुछ दोष न होगा। विदर्भ राजपुत्री निषधराज नलसे जब ऐसा कह चुकी, तब राजा नल उसी स्थानको चले गये, जहां देवता लोग थे। महेश्वर और लोकपाल इन्हें फिरते देखके सब वृत्तान्त पूंछने लगे। हे पापरहित राजन्! तुमने क्या उत्तम हंसनेवाली दमयन्तीको देखा है? कहो उसने हम लोगोंको क्या कहा है? नल बोले, मैं आप लोगोंकी आज्ञासे दमयन्तीके उस भवनमें गया, जिसकी रक्षा बहुतसे पहरेवाले करते थे, और जो चारो ओर खाईसे घिरा हुआ है, आपही लोगोंके प्रतापसे विदर्भ राजपुत्री दमयन्तीके सिवाय मुझे वहां कोई न देख सका, पश्चात् मैंने सखियोंको देखा और उन्होंनेभी मुझे पहिचाना। हे देवपतिगण! वह सब मुझे देखकर आश्चर्य करने लगीं। हे देवगण! मैंने प्रसन्नमुखी दमयन्तीके सामने आपलोगोंकी कथाको कहा। वह आपलोगोंके संकल्पकी सुनके मुझेही व्याहनेके वास्ते उद्यत हुई और बोली, हे निषधराज! आप और देवता सब मिलके मेरे स्वयम्बरकी सभामें आना। मैं उनके समीप आपको वरूंगी। हे महाभुज! ऐसा करनेसे आपको कोई दोष नहीं होगा। हे लोकपालगण! मैंने सब ठीक वहांकी बात कहदी, अब जो आपलोगोंकी इच्छा हो वही ठीक है।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, पश्चात् राजा भीमने शुभकाल, पवित्र मुहूर्त और तिथिमें राजा लोगोंको स्वयम्बरकी सभामें बुलाया। राजा-लोग उसे जानकर कामबाणसे पीड़ित हो, दमयन्तीको पानेकी इच्छासे शीघ्रता के साथ स्वयम्बरको सभामें आये। जिस रीतिसे सिंहका झुण्ड पर्व्वतमें जाता है, उसी प्रकारसे वह लोग तोरण और बन्दनवारसे सजे हुए सोनेके खम्भोंसे शोभायमान रङ्गमण्डपमें पहुंचे। उत्तम मणिजटित कुण्डलोंको धारण किये, सुगन्धसनी मालाओंको पहने राजालोग अनेक प्रकारके आसनोंपर आकर बैठे तो सभाकी शोभा बहुतही मनोहर जान पड़ने लगी। नाग-लोगोंसे भरी हुई भोगवती-परीके समान वा सिंहोंसे पूर्ण पहाड़की गुफाके समान वह भूपालोंसे पूरित सभा शोभाको प्राप्त होने लगी। परिघके समान मोटी और मनोहर विशाल भुजा पांच फणाधारी सर्पके समान भान होती थीं। इस प्रकार जैसे अन्तरिक्षमें तारागण शोभायमान होते हैं, वैसेही राजा लोगोंकी शोभा दीख पड़ने लगी। इसके अन-न्तर सुन्दर मुखवाली दमयन्ती अपने रूप और लावण्यसे राजा लोगोंके नेत्र और मनको खींचती हुई राजसभामें आई। उन सब महात्मा राजालोगोंकी दृष्टि दमयन्तीके जिस जिस अङ्गपर पड़ी, वहीं रह गयी, अर्थात् वहांसे और जगह नजा सकी। हे भारत! इसके पश्चात् सभामें बैठे राजालोगोंके नाम और

कुलोंका वर्णन होनेके पश्चात् दमयन्तीने एकही स्वरूपके पांच पुरुषोंको सभामें बैठे देखा और उन सबको एकही आकृति और रङ्गका देखकर सन्देहमें पड़ी और राजा नलको न पहचान सकी। वह सुन्दरी उन पांचोंमेंसे जिसको देखती थी, उसीको नल समझती थी, उसको दुससे बहुतही शोक हुआ और बुद्धिसे तर्क करने लगी। कि मैं किस प्रकारसे देवतोंको पहचानूं और कैसे राजानलको समझूं? हे भारत! विदर्भ-राज-नन्दिनी ऐसा विचार कर बहुतही व्याकुल हुई। उसने जो पहले देवतोंके लक्षण सुने थे, उनको याद करके मनमें कहने लगी, कि बूढ़ोंसे जो मैंने देवतोंके चिन्ह सुने हैं, उनमें से एकभी इन देवतोंमें नहीं दीखते; ऐसे बारम्बार चिन्ताकरके निश्चय किया, कि मुझे इस समय देवतोंकी शरणमें जानेके अतिरिक्त और कोई उपाय अपने कल्याणका नहीं सूझता। तब दमयन्तीने हाथ जोड़कर देवतोंको नमस्कार करके कहा, कि मैंने जिस समयसे हंसोंकी वाणी सुनी थी, तबही निषध-देशके राजा नलको पति बनानेका सङ्कल्प किया था। हे देवता लोगो! आप सत्यके प्यारे हैं, मेरे सत्यकी रक्षा कीजिये नलको मुझे बतला दीजिये। मैंने यदि मनसे भी व्यभिचारकी इच्छा न की हो, तो मेरे सत्यकी रक्षा करनेको देवता लोग नलको बतला दें। जिन देवतोंने नलको मेरा पति बना दिया है, वही देवतालोग सत्यकी रक्षा करनेके वास्ते नलको मुझे बता दें, और मैंने नलको पानेकेवास्ते ही यह स्वयम्बर रचा है। यदि यह सत्य हो, तो देवता लोग मुझे नलको बतादें। महेश्वर लोकपाल अपने अपने रूपको धारण कर लें, तो मैं पुण्यकीर्त्ति राजा नलको पहचान लूं। देवतालोग विदर्भ राजपुत्रीके शोक और विलापसे भरे वाक्योंको सुनकर और राजा नलमें उसकी सच्ची प्रीति शुद्ध प्रेम, मनकी शुद्धि और भक्तिको जानकर अपने अपने रूपको धारण कर लिया, पश्चात् दमयन्तीने देवता लोगोंको छायारहित पसीना रहित पलकके खोलने और बन्द करनेसे रहित नेत्रवाले न मुर्झानेवाली माला पहने देखा और राजा नलको छाया-सहित मुर्झानेवाली माला पहने, पसीनायुक्त, पलक मारते नेत्रयुक्त, भूमिमें स्थित देखा। हे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर! दमयन्ती देवता लोगोंको और राजा नलको पहचानकर लज्जायुक्त और प्रसन्न हुई। हे भारत! सुन्दरवर्णवाली दमयन्तीने जब उसे पति बना लिया, राजा लोगोंने महा हाहाकार आरम्भ किया, और देवता एवं महर्षिगण साधु साधु कहके राजा नलको प्रशंसा करने लगे। हे कुरुनन्दन! वीरसेनके पुत्र नलने दमयन्तीको धीरज देके कहा, हे कल्याणि! तुमने देवता लोगोंको छोड़के मुझे वर किया, इस कारण आजसे मुझे अपना आज्ञाकारी पति समझना। हे मन्दहासिनी! मैं तुमसे सत्य कहता हूं, कि जबतक मेरे शरीर में प्राण रहेंगे, तबतक मैं तुम्हारा रहूंगा। दमयन्तीनेभी हाथ जोड़के राजा नलसे ऐसीही विनती करी, उन दोनोंने परस्पर ऐसे प्रीतिमान होकर अग्नि आदि देवोंको मनसे नमस्कार किया। भीमपुत्री और नलका विवाह होनेके अनन्तर बड़े प्रतापी लोकपाल और देवतोंने राजा नलको आठ वर दिये। इन्द्रने यज्ञमें प्रत्यक्ष दर्शन देने और शुभ गति पानेका वर दिया। अग्निदेवने यह वर दिया कि जहां इच्छा करोगे वहीं अग्नि प्रत्यक्ष होगा और अग्नि सदृश लोकप्राप्त होंगे। यमने वर दिया, कि अन्नके उत्तम रसको जानोगे तथा धर्ममें तुम्हारी मति रहेगी। वरुणने कहा, कि जहां इच्छा करोगे वहीं जल तुम्हे प्राप्त होगा, एवं सुगन्ध भरी एक माला भी दी। इस प्रकार लोकपालोंने दो दो वरदान दिये। तदनन्तर

लोकपाल स्वर्गको चले गये। राजालोग नल और दमयन्तीके विवाहको देखकर विस्मित और प्रसन्न होके अपने अपने स्थानको चले जानेके अनन्तर महात्मा राजा भीमने प्रसन्न-चित्त होके नल और दमयन्तीके विवाहको शेष रीति समाप्त की। मनुष्यश्रेष्ठ निषधराज नलने अपनी इच्छाके अनुसार कुछ दिनतक वहां निवास करके राजा भीमसे आज्ञा लेकर अपने नगरको प्रस्थान किया। हे राजन्! जैसे देवराज इन्द्र सचीके साथ विलास करते हैं, तैसेही राजा नल दमयन्तीके साथ विलास करने लगे, सूर्य्यके समान प्रतापी राजा नल प्रजाका धर्म्मपूर्व्वक प्रतिपालन करते हुए उनके मनको प्रसन्न रखने लगे। वह बुद्धिमान राजा नहुषके पुत्र ययातिके समान अश्वमेध तथा और और दक्षिणायुक्त यज्ञोंको करने लगे, एवं स्वर्गपति इन्द्रके समान वन और उपवन आदि मनोहर स्थानोंमें दमयन्तीके सहित विहार करने लगे। उस महात्मा राजा और दमयन्तीसे एक कन्या और पुत्र उत्पन्न हुए, पुत्रका नाम इन्द्रसेन और कन्याका नाम इन्द्रसेना रखा गया। हे पृथ्वीनाथ! वह नरनाथ समय समय पर यज्ञ और विहार करते हुए धनभरी पृथ्वीका पालन करने लगे।

५७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले,भीमपुत्री दमयन्तीके राजा नलको वर करनेके पश्चात् महा तेजस्वी लोकपालगण स्वर्गको जाते थे, तब उन्होंने रास्तेमें द्वापरके सहित कलियुगको आते देखा। बल और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने उसे देखके कहा, कि हे कलियुग! तुम द्वापरके सहित कहांको जाते हो? पश्चात् कलियुगने इन्द्रसे कहा, कि मेरा मन दमयन्तीके ऊपर प्रसन्न है, इस लिये उसके स्वयम्बरमें जाके उसे लूंगा। इन्द्रने हंसकर उससे कहा कि वह स्वयम्बर हो गया। भीमपुत्रीने हम लोगोंके सामने राजा नलको पति बनाया! इन्द्रके ऐसे कहतेही कलियुगने क्रोध करके सब देवतोंसे पुकारके कहा, कि लोकपाल देवतोंको छोड़के उसने मनुष्यको पति बनाया, इसी निमित्त उसको कठिन दण्ड देनाही न्याय है! कलियुगकी इस बातको सुनकर सब देवता लोगोंने उत्तर दिया, कि दमयन्तीने हमारी आज्ञाके अनुसारही नलको पति बनाया है, कहो तो कौन ऐसी स्त्री है जो सब गुणोंसे भरे नलको पति बनाना न चाहती हो। जिसने सम्पूर्ण व्रत किये हैं, चारों वेदोंको इतिहासके सहित पढ़ा है, जिसके घरमें यज्ञोंके द्वारा देवतालोग नित्यही तृप्त होते हैं, जो कभी हिंसा नहीं करता, सत्यवादी, दृढ़ प्रतिज्ञावाला लोकपालोंके समान पराक्रमी जो पुरुषसिंह राजमें, सत्यमें, धैर्य्यमें, ज्ञानमें, तपस्या दम और शममें, सर्व्वदाही स्थिर रहता है, हे कलियुग! ऐसे पुरुषको जो दण्ड देनेकी इच्छा करता है, वही मूर्ख दण्ड भोगता है, तथा अपने आपको विनाश करता है। हे कलियुग! ऐसे गुण-युक्त पुरुषको जो दण्ड देनेकी इच्छा करे वह अगाध नरक कुण्डमें डूबता है। देवता लोग कलियुग और द्वापरसे ऐसे बचन कहके स्वर्गको चले गये। तत्पश्चात् कलियुगने द्वापरसे कहा हे द्वापर! नल पर जो मेरा क्रोध हुआ है, उसे मैं नहीं रोक सकता। मैं उसे राज्यसे भ्रष्ट और दमयन्तीसे पृथक् कर दूंगा तुम पाशेमें बैठकर मेरी सहायता करनेकी चेष्टा करो।

५८ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, पश्चात् कलियुग द्वापरसे ऐसी प्रतिज्ञा करके निषधराजके पास आया और नलके दोषोंको देखनेकेवास्ते बहुत दिनों तक नगरमें निवास करता रहा, बारह वर्षके पश्चात् कलियुगने राजा नलका एक दोष

देखा कि राजा नलने एक समय मूत्रत्याग करके बिना पैर धोये आचमन करके सन्ध्योपासन किया, कलियुग उसका यह दोष देखकर उसके शरीरमें प्रवेशकर गया। वह एक रूपसे नलके शरीरमें घुसकर दूसरे रूपसे राजा नलके भाई पुष्करके पास गया और बोला, हे पुष्कर! तुम नलके साथ जूआ खेलो, तुम मेरी सहायतासे जुएमें नलको जीतोगे। इस लिये नलको जीतकर निषध देशका राज्य करो। कलियुगके ऐसे वचन सुनके पुष्कर नलके सम्मुख गया और कलियुगभी बैल बनके पुष्करके समीप चला गया, महावीर घाती पुष्कर और नलके पास जाके वारम्वार कहने लगा आओ भाई! हम तुम दोनों इस बैलको दांवमें लगाके जूआ खेलें। महात्मा राजा नल दमयन्तीके सामने वारम्वार पुष्करके बुलानेको न सह सके और उस समयको जुएके योग्य समझा। कलियुगके प्रतापसे राजा नल उस समय जुएमें प्रवृत्त होकर पुष्करसे क्रम क्रमसे सोना चांदी सवारी वस्त्र दाव पर रख रख हारने लगे। शत्रुनाशी राजा नल जुएमें ऐसे मतवाले हुए, कि कोई मित्र उनको उस कर्मसे रोक न सका। हे भारत! नगर निवासी और मन्त्री लोग राजाको जुएसे रोकनेकेवास्ते राजभवनमें आये। अनन्तर सारथी ने महारानी दमयन्तीसे प्रार्थना करी, कि हे देवि! मन्त्रीगण और नगरनिवासी लोग द्वारपर खड़े हैं, इस लिये आप महाराजसे विनती कीजिये, कि महाराजके धर्म और अर्थको चाहनेवाली प्रजा महाराजके दुर्व्यसनको नहीं सहसकती; इस लिये द्वारपर खड़ी है। तब भीमपुत्री शोकसे व्याकुल होकर सब बात महाराजसे कहनेको गईं और बोलीं, हे महाराज! मन्त्रीगणके सहित नगरकी प्रजा राजभक्तिसे पूर्ण होके आपके दर्शन करनेकेवास्ते राज-भवनके द्वार पर खड़ी है, आपको उन्हें दर्शन देना उचित है। सुन्दर अंगवाली दमयन्तीने वार वार विलाप करके राजाको विनय सुनाई; परन्तु कलियुगके वशमें होनेसे विनय करती हुई दमयन्तीको राजाने उत्तर न दिया। तब वह मन्त्री और पुरवासी यह कहते हुए कि "यह वह राजा नल नहीं हैं।" दुःखित और लज्जित होके अपने घर चले गये। हे युधिष्ठिर! नल और पुष्करका जुआ कई महीनों तक होता रहा; किन्तु नलही उसमें हारे।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, उत्तम कीर्त्तिवाली, महाराज नलको अच्छी दशावाली दमयन्तीने पागलके समान जुएमें उन्मत्त देखा, हे राजन्! भीमपुत्री भय और शोकसे व्याकुल होकर राजाके कल्याणकी चिन्ता करने लगी। उस पाप करनेवाले राजाका प्रिय चाहनेवाली दमयन्ती सर्वस्व हारे राजा नलके पास जाकर शत्रुके सहित वृहत्सेना नामक आज्ञाकारिणी सदाहित करनेवाली उत्तम वचन कहनेवाली, भक्तिमती दासीसे ऐसा बोली, हे वृहत्सेने! तू नलकी आज्ञासे सब मन्त्रियोंके पास जो धन शेष है, सब लिआ; तब वे सब मन्त्री नलकी आज्ञा सुनकर हमाराभी भाग्य है, यह जान वहां आये, किन्तु नल दूसरी प्रकृतिवाले हो गये, तब उस दासीने जाकर दमयन्तीसे सब कह दिया, परन्तु दमयन्ती प्रसन्न न हुई। वह अपने वचनको न ग्रहण करनेवाले अपने पतिको उस अवस्थामें देखकर लज्जित हो फिर अपने घरको गई, वहां जाकर सुना, कि पासे नलसे विमुख हो गये, और राजा सब कुछ हार गये। तब दमयन्तीने धायसे पुनः कहा, हे वृहत्सेने! तू शीघ्र जा और राजा नलकी आज्ञासे सारथीको बुला ला, हे कल्याणि! बड़ा घोर समय आया है, वृहत्सेना दमयन्तीके वचन सुनकर उत्तम पुरुषोंके सहित वार्ष्णेयको बुलाने आई। आये हुए

वार्ष्णेयसे देश कालके जाननेवाली अनिन्दिता दमयन्ती मीठे वचनसे ऐसा बोली। हे सूत! तुमको यह स्मरण है, कि राजा तुम्हारे सङ्ग सदाही अच्छा आचरण करते थे, आपत्तिमें पड़े हुए उस राजाकी सहायता करो। देखो पुष्करके सङ्ग जुआ खेलनेमें ज्यों ज्यों धन हारते हैं, त्यों त्यों इनकी इच्छा जुएमें बढ़ती जाती है, और पुष्करकी इच्छासे नलके पाशे उलटे पड़ते हैं। राजा मोहके बशमें होकर जैसे अपने पुरुषोंकी बात नहीं सुनते तैसेही मेरी बातको भी नहीं मानते, हे सारथे! मैं जानती हूं कि महात्मा नलका दोष नहीं है, मैं तुम्हारी शरणमें हूं, मेरी रक्षा करो; क्योंकि मेरा मन शुद्ध नहीं होता है। अतएव इन लड़की लड़कोंको कुन्दन-नगरमें पहुंचा आओ, इन बच्चे, रथ और घोड़ोंको मेरे बापके यहां छोड़कर तुम वहीं रहना, या जहां इच्छा हो वहीं चला जाना। नलके सारथी वार्ष्णेयने दमयन्तीके वचन सुनके नलके मुख्य मन्त्रियोंसे कह सुनाई। हे राजन्! उन्होंने निश्चयकर उसको वैसीही आज्ञा दी। तब सारथी लड़की लड़केको रथपर चढ़ाकर विदर्भपुरको चला गया। लड़की, लड़के, घोड़े और रथको वहीं छोड़कर राजा भीमको आज्ञा ले नलके शोकसे व्याकुल हो पैरों अयोध्यामें आया और राजा ऋतुपर्णके यहां सारथीकी नौकरी करने लगा।

६० अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, वार्ष्णेय सूतके जानेके पश्चात् राजा नल जो कुछ धन था, पुष्करसे हार गये। तब राज्य हारे हुए नलसे पुष्कर बोला, कि फिर जुआ खेलो। अब तुमको क्या धन शेष है? तुम्हारा सब धन हमने जीत लिया; परन्तु एक दमयन्तीही तुम्हारी रह गई है। यदि तुम अच्छा जानो, तो उसकोभी जुएपर लगा दो। पुष्करके वचन सुनते ही नलका हृदय क्रोधसे फटने लगा, परन्तु कुछ कह न सके। तब महाक्रोधी, महायशस्वी नलने पुष्करको देख अपने सब आभूषण उतार दिये। केवल एक धोतीही पहने रह गये, ऐसा देख उनके मित्रोंको महाशोक हुआ। अनन्तर सब राजलक्ष्मीको छोड़कर वनको चले, दमयन्ती भी एक धोती पहनकर उनके पीछे चली। वह दमयन्तीको सङ्ग ले तीन दिन नगरके बाहर रहे। अनन्तर पुष्करने नगरमें ढंढोरा दिलवा दिया, कि जो नलको अपने घरमें रखेगा, उसको हम मार डालेंगे। पुष्करके ऐसे वचन सुनकर और उसका क्रोध नल पर देखकर किसी नगरनिवासीने नलका सत्कार न किया। सत्कारके योग्य राजा सत्कारको न पाकर तीन दिन पर्य्यन्त केवल जल पीकर नगरके समीप रहे। जब भूखसे अत्यन्त व्याकुल हुए, तो फल मूल तोड़ कर खाने लगे। अनन्तर दमयन्तीको सङ्ग ले वनको चले। एक दिन बहुत समय बीतने पर राजा नल भूखसे अत्यन्त व्याकुल हुये, और सोनेके पत्तेके समान रङ्गवाले पक्षियोंको देखा। बलवान नलने विचार किया कि यह हमारे खाने योग्य हैं, और धन भी हैं। तब अपने वस्त्रसे नलने उनको ढंक दिया। वे सब पक्षी उनका वस्त्र लेकर आकाशको उड़ गये, और आकाशमें जाकर नङ्गे दीन, नीचेको मुख किये पृथ्वीमें बैठे नलसे ऐसा बोले, रे दुर्बुद्धे! हम वेही पाशे हैं, जिनको तुमने खेला था, तुमको वस्त्र सहित देखकर हम प्रसन्न नहीं हुए थे, अब हमको बहुत आनन्द हुआ। उन पाशोंको अपने पास और अपनेको नङ्गा देख राजा नल दमयन्तीसे कहने लगे। हे अनिन्दिते! जिन पाशोंके कोपसे मैं राज्य और ऐश्वर्य्यसे नष्ट हुआ, और जिनके कारनेसे मैं अत्यन्त भूखसे व्याकुल हूं, परन्तु प्राण नहीं निकलते, हे भीरु! जिनके

करनेसे किसी नगर निवासीने मेरा सत्कार न किया वेही आज पची होकर मेरा वस्त्र भी छीनते हैं। हे देवि! मैं परम दुःखको प्राप्त,और मूर्छित तेरा पति हूं। मेरा बचन तेरा हितकारी है। यह देखो, अनेक मार्ग चलनेवाले लोग ऋचवान और उज्जैनको जा रहे हैं। यह लोग इस पहाड़के पार होते हैं। यह देखो यही समुद्रमें जानेवाला उषा जलयुक्त विन्ध्याचल है। फल और मूलोंसे भरे हुए इन ऋषियोंके आश्रमोंको देखो। यह मार्ग विदर्भ देशको जाता है, और यह अयोध्याका मार्ग है। हे उत्तम! इसके आगे दक्षिण देश है, और यह दक्षिणका मार्ग है। हे भारत! सावधान दुःखसे पीड़ित राजा नलने दमयन्तीसे एकवार ऐसे वचन कहे। तव दमयन्ती रुकते हुए कण्ठसे रोती हुई दुःखसे व्याकुल होकर निषध-राजसे दीनता भरे हुए वचन बोली, हे महाराज! आपके वचनको चिन्ता करके मेरा हृदय घवड़ाता है, और सब शरीर वार वार गिरे जाते हैं। हे महाराज! राज्य वस्त्र और धनसे हीन आपको इस निर्जनमें एकला छोड़कर कैसे चली जाऊं? हे महाराज! इस घोर वनमें चलते चलते जब आप थक जायेंगे, भूख प्यास और चिन्तासे व्याकुल होंगे, तव मैं आपके सुखके निमित्त आपके परिश्रमको दूर करूंगी! सत्य कहतीहूं, कि वैद्योंके मतमें दुःख रोगको औषध स्त्रीके समान और नहीं है।

राजा नल बोले, हे सुमध्यमे! हे दमयन्ती! यह बात सत्य है, कि दुःखो पुरुषके लिये स्त्रीके समान और औषधि नहीं है, हे अनिन्दिते! मेरी इच्छा तुम्हें छोड़नेकी कदापि नहीं है, मैं अपने प्राणको छोड़ सकता हूं, परन्तु तुम्हें नहीं। हे भीरु! तुम शङ्का मत करो। दमयन्ती बोली, हे महाराज! यदि आप मुझे छोड़नेकी इच्छा नहीं करते हैं, तो विदर्भ नगर का मार्ग क्यों बताते हैं? हे नरनाथ! मैं जानती हूं कि आप मुझको नहीं छोड़ेंगे, परन्तु आपका चित्त किसीने छीन लिया है, इससे छोड़ सकते हैं। हे पृथ्वीनाथ! हे नरोत्तम! आप मुझको कठिन मार्ग दिखलाते हैं। हे देवतुल्य! इससे मुझको शोक बढ़ता है, यदि आपकी यह इच्छा हो कि यह अपने बापके यहां चली जाय, तो मैं और आप सङ्गही चलेंगे। यदि आपको अच्छा लगे तो ऐसाही कीजिये। हे मानदेनेवाले! मेरे पिता आपकी बहुत सेवा करेंगे।

६१ अध्याय समाप्त।

राजा नल बोले, हे दमयन्ती! यह ठीक है, कि जैसा तुम्हारे पिताका राज्य तैसा मेरा राज्य, परन्तु दुःखमें वहां कदापि न जाऊंगा। मैं अत्यन्त ऋद्धिके सहित वहां जाकर तुम्हारे आनन्दको बढ़ाता था, अब राज्यादिकसे भ्रष्ट होकर वहां जाके तुम्हारे शोकको कैसे बढ़ाऊंगा?

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! राजा नल ऐसा कहते हुए, आधे वस्त्रवाली कल्याणी दमयन्तीको वार वार शान्त करने लगे। वह दोनो भूख और प्याससे व्याकुल होकर एकही वस्त्र ओढ़े हुए इधर उधर घूमते हुए किसी स्थानमें पहुंचे और थक कर वहीं ठहर गये। निषधदेशके महाराज। उस स्थानमें पहुंचकर विदर्भराजपुत्रीके सहित पृथ्वीहीमें सो गये। वह महाराज वस्त्र और विछौनेसे हीन धूलमें भरे हुए थकाईसे व्याकुल होकर पृथ्वीही में सो गये। अनन्तर कल्याणी,यशसे भरी हुई,कोमलाङ्गी दमयन्तीभी दुःखसे व्याकुलहोकर अत्यन्त निद्राके वशमें हो गई। हे प्रजानाथ! दमयन्ती तो सोगई; परन्तु नलको शोकसे व्याकुल होनेके कारण पहलेके समान निद्रा न आई। वह राज्यनाश, सब वस्तुओंसे छूटना और वनमें

रहना इत्यादि चिन्तासे व्याकुल होगये। नल सोचने लगे, क्या मेरा कुछ कार्य्य करना अथवा न करना अच्छा होगा ? क्या मेरा मरना अथवा दमयन्तीको छोड़ना अच्छा होगा ? क्योंकि यह मेरी प्यारी मेरेही कारनेसे इतने दुःखमें पड़ी है। क्या मेरे छोड़नेसे यह अपने बापके यहां चली जायगी ? निःसन्देह यह पतिव्रता मेरेही कारण दुःख पा रही है, छोड़नेमेंभी सन्देह है। कदाचित कहीं इसे सुख मिलही जाय। हे नरनाथ ! नलने वार वार विचार-कर निश्चय किया कि दमयन्तीके छोड़नेहीमें कल्याण है। इस पतिव्रता मेरी भक्त, यशोंसे भरी हुई महा भाग्यवतीको मार्गमें कोईभी अपने बशसे ग्रहण नहीं कर सकता है। राजा नलको बुद्धिको दुष्ट कलियुगने इस प्रकार फेर दिया और उसने निश्चय कर लिया कि दम-यन्तीका छोड़नाही ठीक है। राजाने अपनेको वस्त्रहीन और उस की एक वस्त्र ओढ़े देख, उसका आधा वस्त्र फाड़ लिया। वस्त्र फाड़ते समय राजाने विचारा कि मैं अपने प्यारीका आधा वस्त्र कैसे फाड़ूं ? कदाचित यह जाय जाय ! ऐसा विचारते हुए राजा उस स्थानमें इधर उधर घूमने लगे। हे राजन् ! अनन्तर राजा नलने अपने खड्गको निकाल दमयन्तीका आधा वस्त्र काट लिया और उसको पहनकर विदर्भराजपुत्री दमयन्तीका अचेत सोतेही छोड़, चल दिया। थोड़ी दूर जाकर मोहसे व्याकुल हो फिर लौटे और दमयन्तीको देख निषध देशके महाराज खूब रोये, और विचारने लगे, जिस दमयन्तीका सूर्य्य और वायुभी नहीं देख सकते थे, वह मेरी प्यारी आज अनाथके समान भूमिमें सोरही है। हाय यह उत्तम हंसनेवाली, सुन्दर मुखवाली जब अपने आधे वस्त्रको फटा हुआ देखेगी तब इसकी क्या दशा होगी। यह अवश्य उन्मत्त हो जायगी। भीमराजपुत्री, उत्तम, पतिव्रता मुझसे अलग होकर इस हरिन और सांपोंसेभरे हुए घोर वनमें एकली कैसे घूमेगी ? हे महाभागे ! तुम धर्म्मसे भरी हो, इस लिये सूर्य्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार, वायु और वरुण तुम्हारी रक्षा करें। हे महाराज ! कलियुगसे बुद्धि नाश होनेके कारण राजा नल जगत्में असमान रूपवाली अपनी प्यारी स्त्री वनमें छोड़कर चल दिये। राजा नल वार वार जाकर कलियुग और प्रेमके वशमें लौट आते थे। उस समय उनका हृदय फटकर दो टुकड़ा हुआ जाता था ; जैसे कोई झूलेमें झूलता है, वैसेही नल आते और जाते थे। अन्तको कलियुगके वशमें होकर राजा नल प्यारी स्त्रीको वनमें सोती हुई छोड़ बहुत रोते हुए चले गये। हे राजन् नष्ट बुद्धिवाले कलि-युगके वशमें होकर दुःखी राजा नल अपनी स्त्रीको शून्य वनमें एकली छोड़ चले गये।

६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन् ! नलके जानेके पश्चात् परिश्रम दूर होनेसे उत्तम सुख-वाली दमयन्ती जागी और पुरुष रहित वनमें अपने पतिको न देखकर बहुत डरी। शोक और दुःखसे व्याकुल होकर, हे महाराज ! हे महाराज ! हे नैषधेश्वर ! हे नैषधेश्वर ! कह कह कर चिल्लाने लगी। हा नाथ ! हा महाराज ! हा स्वामी ! आपने क्यों मुझको छोड़ दिया ? मैं इस पुरुषरहित वनमें व्याकुल हुई हूं। हाय मैं मरी ! हे महाराज ! आप धर्म्मज्ञ और सत्यवादी हैं। सत्य वचन कह कर अब इस शून्य वनमें प्यासी, भक्तिवती, एकली ; सोती हुई अपनी स्त्रीको छोड़कर कहां चले गये ? हे महाराज ! मैंने आपका कोई भी दोष नहीं किया था, हे महाराज ! हे नरनाथ ! आपने जो लोकपालों के आगे वचन कहे थे, उनको झूंठ करना आपको उचित नहीं है। हे पुरुषसिंह ! ईश्वरने बिना समय

मनुष्यकी मृत्यु नहीं बनाई है, इसी कारणसे आपकी प्यारी स्त्री आपसे छूटने पर भी अबतक जीती है, हे पुरुषसिंह! हे दुर्द्धर्ष! बस हंसी समाप्त होगई। अब मैं इस वनमें बहुत डरी हूं, शीघ्र दर्शन दीजिये। हे नैषधराज! आप मुझको देखते हैं; परन्तु पूछनेसे क्यों नहीं बोलते? आप लताओंसे निकलकर मुझसे बात क्यों नहीं करते? हे महाराज! आप निर्लज्जके समान मुझ एकलीको रोती हुई देखकर क्यों धैर्य्य नहीं देते? हे राजेन्द्र! मुझे अपनी अथवा और किसी वस्तुका कुछ शोच नहीं है, परन्तु आप एकले किस दशामें पड़े हैं, यही शोच है। हे महाराज! भूख, प्यास, और थकाईसे व्याकुल होकर जब आप सन्ध्यासमय किसी वृक्षकी जड़में बैठेंगे, वहां मुझको न देख कर आपकी क्या दशा होंगी? अनन्तर दमयन्ती महाशोकसे व्याकुल होकर इधर उधर दौड़ने लगी। कभी गिरती, कभी भयसे व्याकुल होकर छिपती, कभी रोती और कभी बकती थी। इस प्रकार शोकसे व्याकुल होकर पतिव्रता भीमपुत्री बार बार ऊंचे सांस लेकर रोतीहुई ऐसा कहने लगी। हे नैषध! जो पुरुष किसी पुरुषको दुःखसे व्याकुल हुआ देख आप दुःख सहता है, उस पुरुषको औरभी अधिक दुःख होता है। जिस पापीने महात्मा नलको इतना दुःख दिया है, वहभी मेरे पापसे जन्म भर दुःखीही रहै। वह महाराज नलकी स्त्री इस प्रकार रोती हुई उस सिंहादि जन्तुओंसे भरे हुए वनमें अपने पतिको ढूंढने लगी। उस समय भीमपुत्री उन्मत्तके समान रोती हुई बार बार हाय महाराज! हाय महाराज! ऐसा कहती हुई उस वनमें घूमने लगी। कुररीके समान रोती हुई, शोचती हुई, घूमती हुई उस भीमपुत्रीको आकर भूख और प्याससे व्याकुल अजगरने ग्रहण किया। अजगरके ग्रास होते समय दमयन्तीने शोकसे व्याकुल अपना कुछ शोच न करके राजा नलका शोक किया; और बोली, हे नाथ! हाय इस वनमें यह अजगर मुझको अनाथके समान खाता है, आप मेरी रक्षा क्यों नहीं करते हैं! हे नाथ! हे नैषध! आप मेरे बिना अब कैसे हैं? आप मुझे छोड़कर कैसे चले गये? हे महाराज! जब आप इस पापसे छूटकर अपने धन, राज्य और बुद्धिको प्राप्त करेंगे, तब भूख प्याससे व्याकुल आपके परिश्रमको कौन दूर करेगा? हे राजशार्द्दूल! हे पापरहित! आप मुझे छोड़कर क्या सुख पाते हैं,? इस प्रकार रोती हुई दमयन्तीके बचन सुनकर उस घोर वनमें आया हुआ व्याधा वेगसे उसकी ओर दौड़ा। उस कमलनैनीको अजगरसे ग्रस्त देखकर व्याधा और भी वेगसे दौड़कर वहां पहुंचा और उसने अपने तीक्ष्ण शस्त्रसे सर्पका सिर काट दिया। अनन्तर वह सर्प बिना प्राणका होकर पृथ्वीमें लोट गया। उस व्याधाने दमयन्तीको सांपके मुखसे छुड़ाके स्नानकराकर कुछ खिलाकर और धैर्य्य देकर पूछा, हे मृगनैनी तू किसकी स्त्री है, और इस घोर वनमें क्यों आई है? हे भामिनि! तू इस घोर आपत्तिमें कैसे पड़ गई? हे भारत! दमयन्तीने उसके ऐसे वचन सुनकर अपना सब वृत्तान्त पूरा कह सुनाया। अनन्तर उस आधे वस्त्रवाली, पीनस्तनी, सुश्रोणी, नवीन कामपाङ्गी, पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाली, घूंघरवाले बालोंवाली और टेढ़ी भौंहवाली दमयन्तीको देख व्याधा कामदेवके वशमें हो गया। अनन्तर कामसे व्याकुल व्याधा दमयन्तीको सुन्दरी जान मीठी वाणीसे शान्त करता हुआ बोला, और पतिव्रता दमयन्तीभी उस दुष्टको कामसे व्याकुल देख तीव्र क्रोधसे व्याकुल होगई। वह दुष्टात्मा क्षुद्र, पापबुद्ध, जलती हुई, अग्निके समान दुर्द्धर्ष दमयन्तीसे काम चेष्टा करनेको यत्न करने लगा। अनन्तर दुःखसे भरी हुई दमयन्तीने उस दुष्टको क्रोधसे भरकर शाप दिया,

हे क्षुद्रव्याध ! यदि मैंने निषधराजके सिवा अपने चित्तसेभी दूसरेको पति बनानेकी इच्छा न करी हो, तो तू अभी प्राणहीन हो पृथ्वीमें गिरजा । दमयन्तीके ऐसे वचन सुनतेही व्याध जले हुए वृक्षके समान बिना प्राणका होकर पृथ्वीमें गिर पड़ा ।

६३ अध्याय समाप्त ।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे महाराज ! कमलनैनी दमयन्तीने उस व्याधको मारकर भयसे व्याकुल हो मनुष्यशून्य झिंगुरोंके शब्दसे भरे हुए, अनेक प्रकारके पक्षियोंसे संयुक्त म्लेच्छ और चोरोंसे सेवित शाल, बांस धाय, पीपल, तेंदू, हिंगुदी, कचनार, बहेड़ा, नीम, छिलनेवाला ढाक, जामुन, आंम लोध, बेल, बेत पद्माक्ष, आंवला, कदम्ब, पारसपीपर, गूलर, वेर, बेल- बगद, चिरोंजी, ताड़, खजूर हड़, बहेड़ा आदि वृक्षोंसे भरे हुए, अनेक प्रकारकी धातु- ओंसे चित्रित पर्व्वत अति सघन कुञ्ज, विचित्र गुफा, नदी, तड़ाग, अनेक प्रकारकी बावड़ी पक्षी और हरिणोंको देखती हुई वनमें घूमने लगी । और घोर रूपवाले अनेक पिशाच सर्प और राक्षसोंको देखने लगी, उसने थोड़े और बहुत जलवाले तालाब, पर्व्वतोंके समूह, अद्भुत दर्शनवाले झरने, और नदियोंको देखा। अनन्तर विदर्भराजनन्दिनीने अनेक भैंसे, शूअर, रीछ और बनसर्पोंके झुण्डके झुण्ड देखे । तेज, यश और परम लक्ष्मीसे भरी हुई दमयन्ती इस प्रकार नलको खोजती हुई बनमें एकली घूमने लगी । पतिके शोकसे पीड़ित विदर्भ राजपुत्री इस प्रकार घोरवनमें घूमती हुई किसीसे भी न डरी । एक दिन विदर्भ राज- पुत्री एक शिलाके ऊपर बैठकर अपने पतिके शोकसे व्याकुल हो इस प्रकार रोने लगी। दमयन्ती बोली, हे निषधराज ! ऊंचे कन्धेवाले महाबाहो ! आप मुझको निर्जन वनमें छोड़ कर कहां चले गये? हे नरव्याघ्र ! आप भारी दक्षिणावाले अश्वमेधादि यज्ञ करके मुझसे झूठ क्यों बोले ? हे वीर ! हे नरश्रेष्ठ ! महातेजस्विन् ! हे राज शार्दूल ! हे कल्याण ! आपने जो मुझसे कहा था, उसका स्मरण कीजिये । हे पृथ्वीनाथ ! जो कुछ हंसोंने आपसे कहा था और आपने जो कुछ कहा था, उसका स्मरण कीजिये । हे नरव्याघ्र ! यह निश्चय है कि अङ्ग और उपाङ्ग तथा विस्तारके सहित चारो वेद पढ़नेका फल एक ओर और एकला सत्य एक ओर होता है । हे शत्रु- नाशन ! हे नरनाथ ! हे वीर ! इस लिये, आप अपने पहले कहे हुए बचनोंको सत्य कीजिये हाय वीर नल ! मैं आपसे छूट गई । हे पाप रहित ! इस घोरवन में आकर आप हमसे क्यों नहीं बोलते हैं? यह देखिये भूखसे व्याकुल भयानक शरीर वाला घोर वनोंका राजा मुझे खाना चाहता है, आप क्यों नहीं मेरी रक्षा करते हैं ? हे कल्याण महाराज ! आप पहले मुझसे कहा करते थे, कि तेरे सिवा मेरी प्यारी और कोई नहीं है । अब उन पहले कहे बचनोंको झूठ न कीजिये । हे नरनाथ ! मैं आपकी प्यारी स्त्री इस घोरबनमें उन्मत्तके समान रोती फिरती हूं । आप सदा ही मुझको चाहते थे, अब मैं आपको देखना चाहती हूं तो क्यों नहीं बोलते हैं ? हे पृथ्वीनाथ ! आज सामान्य स्त्रियोंके समान एक वस्त्रके निमित्त रोती हुई दुर्व्वल, दीन, पीले वर्णवाली, मलिन अनाथ के समान एकली बनमें घूमती हुई मुझसे क्यों नहीं बोलते हैं ? हे आर्य्य ! शत्रु नाशन ! हे विशालनेत्र ! जैसे कोई हरिनी अपने झुण्डसे छूट एकली होकर दुःखी होती है मेरी भी वही दशा हुई है । इससे पहले मुझको रोती हुई आप कदापि नहीं देख सकते थे । महाराज ! इस महावनमें मैं एकली पतिव्रता दमयन्ती आपको पुकार रही हूं; आप मुझसे-

क्यों नहीं बोलते हैं? उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हे शील भरे! सुन्दर! पुरुषश्रेष्ठ! आज मैं इस पर्व्वतमें तुमको नहीं देखती। हे निषधराज! इस महावीर सिंह और व्याघ्रोंसे भरे हुए बनमें सोते हुए बैठे हुए वा चलते हुए कौनसे पुरुषसे आपको पूंछे? हे मेरे शोकके बढ़ाने-वाले पुरुष श्रेष्ठ! मैं तुम्हे देखनेको व्याकुल हुई हूं मैं किससे पूंछूं कि तुमने इस वनमें कहीं राजा नलको देखा है? मैं किससे कहूं कि तुमने इस वनमें कहीं सुन्दर रूपवाले, महात्मा शत्रुमण्डलके नाशक, कमलनेत्र उस नलको कहीं देखा है कि जिसको मैं ढूढ़ती हूं? मुझसे ऐसी मीठीवाणी कौन कहेगा कि जिसको तुम ढूंढ़ती हो, वह नल यही है। यह चार दांतवाला बनका राजा, बड़े ओठवाला शार्दूल मेरे आगे ही चला जाता है, देखो मैं शङ्का रहित होकर इसके सामने जाती हूं। हे मृगोंके राजा! हे सिंह! तुम इस वन और हरिणोंके राजा हो, और मैं विदर्भराजकी पुत्री शत्रुओंके नाश करनेवाले महाराज नलकी स्त्री दमयन्ती हूं। हे सिंह! पतिको ढूढने-वाली एकली शोकसे पीड़ित मेरे समीप आकर कहो क्या तुमने कहीं नलको देखा है? यह सुनकर मुझे बहुत धैर्य्य होगा। हे मृगेन्द्र! यदि आप नलका समाचार मुझे न देसकें, तो मुझको खाही जाइये, जिससे मैं इस महा दुःखसे छूट जाऊं। देखो इस वनमें मुझको रोती हुई देखकरभी यह सिंह मुझे कुछ नहीं समझता। यह समुद्रमें जानेवाली, मीठे जलसे भरी हुई नदी और यह पवित्र ऊंचे शिखावाला पर्व्वत अनेक रङ्गोंसे रंगे हुए मनोहर सुन्दर शिलाओंके समूहोंसे शोभित है। अनेक धातुओंसे भरे हुए पत्थरोंसे बिराजमान ऐसा जान पड़ता है, मानो इस वनकी ध्वजा है। सिंह, शार्दूल हाथी, सुअर, रीछ, सहस्रों हरिन, अनेक प्रकारके अनेक पक्षियोंके शब्दसे पूरित कचनार, अशोक, वकुल, पुन्नाग साल, अमलतास और पीपल आदि फूल भरे हुए वृक्षोंसे शोभित पक्षियोंके सहित नदी और शिखरोंसे भरे हुए इस पर्व्वतराजहीसे मैं राजाका समाचार पूछती हूं। हे भगवन्! हे पर्व्वतश्रेष्ठ! दिव्यदर्शन विदित! शरण देनेवाले! कल्याणरूप पर्व्वत! आपको नमस्कार है। आप मुझको राजपुत्री, राजाकी बहू और राजाकी स्त्री प्रख्यात दमयन्ती जानिये, महारथ विदर्भ देशके राजा चारोंवर्णोंकी रक्षा करनेवाले भीम मेरे पिता हैं, वह दक्षिणा-वाली अश्वमेध और राजसूय यज्ञोंके करने-वाले शत्रुओंकी लक्ष्मीको छीननेवाले, सुन्दर, भारी शरीर और नेत्रवाले, ब्राह्मणोंके भक्त, उत्तम चरित्रवाले सत्यवादी, सबका प्रिय चाहनेवाले, शीलवान, बलवान, महालक्ष्मीमान, धर्म्मज्ञ, पवित्र, उत्तम प्रकारसे विदर्भ देशके रक्षक जो राजा भीम हैं, मुझ को उन्हीकी पुत्री जानिये, मैं जो आपके पास आई हूं, सो निषध देशके महाराज अपने नामके सदृश गुणवाले राजा वीरसेनकी बहू हूं, उन राजाके बेटे, वीर, श्रीमान सत्य-पराक्रम, राजा नल जो अपने बाप दादाके राज्यको पालते हैं, जो सब शत्रुओंके नाशक, श्यामसुन्दर! ब्राह्मणोंके भक्त वेदके जाननेवाले पण्डित, धर्म्मकर्त्ता, सोमपीने-वाले, अग्निहोत्री, यज्ञकर्त्ता, दाता, योद्धा, पृथ्वीके उत्तम शासनकर्त्ता, और जो पवित्र कीर्त्तिके नामसे प्रसिद्ध हैं, आपके यहां आई हुई मुझको उनही की श्रेष्ठ स्त्री जानिये। हे पर्व्वतसत्तम! लक्ष्मी और पतिसे छूटी हुई, नाथरहित, दुःखसे व्याकुल पतिको ढूंढ़ती हुई मैं यहां आई हूं हे पर्व्वतश्रेष्ठ! तुमने अपने इन ऊंचे ऊंचे शिखरोंसे कहीं राजा नलको देखा है? मेरा प्यारापति गजेन्द्रके समान पराक्रमी, बुद्धिमान, विशालबाहु, क्षमावान निषददेशके महाराज नलको कहीं तुमने

देखा है? हे पर्व्वत श्रेष्ठ! अपनी पुत्रीके समान दुःखसे व्याकुल हुई मुझको वचन कहकर क्यों नहीं धीरज देते हो? हे वीर हे तेजस्वी! हे धर्म्मज्ञ! हे पृथ्वीनाथ! यदि आप कहीं इस वनमें छिपेहो तो मुझे दिखाई क्यों नहीं देते? हाय मैं मीठी, बादलके समान गम्भीर अमृतके समान दमयन्ती ऐसी वाणी महात्मा नलके मुखसे कब सुनंगी? हे पृथ्वीनाथ! अपने शोकके नाश करनेवाली, अपने कुलकी रीतिपर चलनेवाली, भयसे व्याकुल मुझको क्यों नहीं धीर्य देते हो? हे महाराज! वह राजपुत्री दमयन्ती पर्व्वतश्रेष्ठसे ऐसे वचन कहकर पुनः उत्तरकी ओर चली। वह सुन्दरी निरन्तर तीन दिन और रात चलतीही रही, तब उसने सुन्दर वनसे शोभित अनेक ऋषियोंके आश्रमोंको देखा। उनमें पवित्र तौलकर खानेवाले, इन्द्रियजित, संयमी, वशिष्ठ, भृगु और अत्रि आदिक अनेक ऋषि रहते थे। उसने उस आश्रमको जलभक्षी, वायुभक्षी, पत्रभक्षी, जितेन्द्रिय, महाभाग, स्वर्ग-मार्ग देखनेकी इच्छावाले, बकलेके वस्त्रवाले मुनियोंसे शोभित देखा। वह आश्रम तपस्वि-योंके वास करनेसे अत्यन्त मनोहर था। उस अनेक पक्षी हरिन और बन्दरोंसे युक्त,तपस्वि-योंसे भरे हुए, आश्रमको देखतेही दमयन्तीके चित्तमें स्थिरता हुई। अच्छो भृकुटी अच्छेबाल, अच्छे कुच, अच्छी कमर, अच्छे दांत और अच्छे मुखवाली तेजस्विनी, कमलननी, वीर-सेनके पुत्रकी प्यारी स्त्रियोंमें रत्न तपस्विनी दमयन्ती उस आश्रममें गई। वहां जाकर तपस्वी मुनियोंको प्रणाम कर नम्रभावसे खड़ी रही। सब तपस्वी श्रेष्ठोंने उसका स्वागत किया, उसकी यथायोग्य पूजा करके सब मुनियोंने विठलाया और कहा कि हम तुम्हारा कौन कार्य्य करें? यह सुनकर उत्तम मुखवाली दमयन्ती बोली कि हे तपस्वियो! हे पाप रहिती! कहो तुम्हारे हरिन और पक्षी तो कुशलसे हैं? आपलोगोंके अग्निहोत्र कर्म्म और अपने अपने धर्म्म कार्य्य तो कुशलसे होते हैं न? उन्होंने कहा हे यशस्विनी! हम सब कुशलसे हैं। हे सुन्दरि! कहो तुम कौन हो? और क्या चाहती हो? हम सब तुम्हारे रूप और तेजको देखकर परम आश्चर्य्यको प्राप्त हुए हैं, धैर्य्य धरो, घबराओ मत। हे अनिन्दिते! हे कल्याणि! क्या तुम इस वनकी अथवा इस पर्व्वतकी या इस नदीकी देवी हो?

दमयन्ती बोली, हे ब्राह्मण! मैं न इस वनकी न इस पर्व्वतकी और न इस नदीकी देवी हूं। हे तपश्चर्य्यवाले ऋषियो! मुझको मानुषी जानो; मैं अपने वृत्तान्तको विस्तारसे कहती हूं, आपलोग सुनिये। विदर्भ देशमें भीमनामक राजा हैं, हे ब्राह्मणश्रेष्ठो! मैं उन्हीकी पुत्री हूं, और निषध देशके राजा बुद्धिमान, यशस्वी वीर, युद्धजेता, प्रजानाथ, नल मेरे पति हैं। वह देवतोंकी पूजामें रत,ब्राह्मणोंके प्यारे,निषधवंशके रक्षक, महा तेजस्वी, महा बलवान, सत्यवादी धर्म्मज्ञ, पण्डित, सत्यसन्ध शत्रुनाशन, ब्राह्मणोंके भक्त देवतोंमें तत्पर, लक्ष्मीवान, शत्रुओंके नगरोंको जीतनेवाले, राजोंमें श्रेष्ठ, इन्द्रके समान तेजस्वी, विशालनेत्र, चन्द्रमुख, शत्रुनाशन, महा यज्ञोंके कर्त्ता, वेद और वेदाङ्गोंके पार-गामी, युद्धमें शत्रुनाशन, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान तेजस्वी, महाराज नल मेरे पति हैं। उन धर्म्मपरायण महाराजको किसी छली, अनार्य्य, पापी जुएके जाननेवालेने बुलाकर उनका राज्य और सब धन जुएमें जीत लिया। उस राजोंमेंसिंह नलकी स्त्री पतिके दर्शन चाहनेवाली मुझे विख्यात दमयन्ती जानो। मैं वन, पर्व्वत, तड़ाग, नदी पलवल और सब वनोंमें अपने युद्धके जीतनेवाले, महात्मा शस्त्र जाननेवाले पति नलको ढूंढ़ती दुःखसे व्याकुल फिरती हूं, कहिये आपके इस रम्य तपोवनमें

निषध देशके राजा नल आये हैं? हे ब्राह्मण! जिसके निमित्त मैं इस घोर भरी आपत्तिमें पड़कर इस घोर सिंह और शार्दुलोंसे भरे हुए वनमें घूम रही हूं, हे ब्राह्मणों! यदि मैं कुछ दिन राततक राजा नलको न देखूंगी तो अपने शरीरको छोड़कर परम पदको प्राप्त करूंगी। उस पुरुषसिंहके बिना जीनेसे मेरा क्या प्रयोजन है? मैं अपने पतिके शोकसे पीड़ित कब तक जीऊंगी? भीमपुत्री दमयन्तीको वनमें इस प्रकार रोती हुई एकली देखकर सत्यदर्शी तपस्वी लोग ऐसा कहने लगे। हे कल्याणि! हे शुभे! अब तुम्हारा कल्याण होनेवाला है, हमलोग तपसे देखते हैं, कि तुम निषध देशके राजा शत्रुनाशन नलको शीघ्रही देखोगी। हे भीमपुत्री! धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ, सुखी, सब पापोंसे छूटे हुए सब रत्नोंसे युक्त, शत्रुओंकोभी देनेवाले, मित्र शोकनाशन, कल्याणसे भरे हुए, अपने पति राजा नलको उसी देशमें राज्य करते हुए शीघ्रही देखोगी। वह ब्राह्मणलोग नलकी प्यारी राजपुत्री दमयन्तीसे ऐसा कहकर अपने आश्रम और अग्निशालाके सहित अन्तर्धान हो गये। सुन्दर शरीरवाली राजा वीरसेनकी वह दमयन्ती बहुत आश्चर्यमें आकर विचारने लगी कि क्या मैंने यह स्वप्न देखा था? यह क्या आश्चर्य हुआ? वह मुनि और उनका आश्रम कहां गया। वह पक्षी और पुष्पोंसे शोभित मनोहर जलवाली नदी कहां गई? और वे उत्तम फूलोंसे भरे हुए, हृदयके प्यारे पर्व्वत कहां गुप्त हो गये? उत्तम हंसनेवाली भीमराजकी पुत्री कुछ समय तक ऐसा विचार करके अपने पतिके शोकसे व्याकुल और विवर्ण मुखवाली होगई; आसुवोंसे पूर्ण नेत्रवाली दमयन्ती आगे चलकर एक अशोक वृक्षको देख रोती हुई ऐसा कहने लगी, वह वृक्ष फूलोंसे भरा नवीन पत्तोंसे भरा, पक्षियोंसे शोभित था। उसको देख दमयन्ती विचारने लगी, आहा! इस वनमें यह वृक्ष शोभासे भरा हुआ, फल और पुष्पोंसे पूर्ण पर्व्वतके समान शोभित है। हे अशोक! हे प्रियदर्शन! मुझको शोक रहित करो। तुमने शोक और भयसे रहित राजा नलको कहीं देखा है? वही शत्रुओंका नाश करनेवाला राजानल दमयन्तीका प्यारा-पति है, उस निषध देशके राजा मेरे प्यारेको तुमने कहीं देखा है? वह एक वस्त्रधारी, कोमल दुःखसे पीड़ित, वीर इसी वनमें आये थे; हे अशोकवृक्ष! जैसे मैं शोक रहित हो जाऊं वैसाही यत्न करो। तुम्हारा नाम अशोक है। हमारे शोकको नाश करके यथार्थनामा बनो। वह उत्तम स्त्री दमयन्ती अशोकसे ऐसे वचन कहती हुई महाघोरवनमें पहुंची। उसने उस वनमें जाकर अनेक पर्व्वत, अनेक वृक्ष, अनेक नदी, अनेक मृग और अनेक पक्षिओंको देखा, गुफा, पर्व्वतके नीचे स्थान और विचित्र नदियोंको देखा, उत्तम हंसनेवाली दमयन्ती नलको ढूंढ़ती इस प्रकार दूर चलकर एक स्थानमें पहुंची। उसने वहां जाकर देखा कि एक हाथी घोड़े और रथोंसे भरी हुई बड़ी भारी सेना शीतजलवाली सुन्दर दोनों ओर वेतवाली, उत्तम, जलपूर्ण चौड़ी नदीको तरती है। वह नदी सारस, कुमरी, चकवोंके शब्दसे शोभित थी। नलकी स्त्री यशस्विनी दमयन्ती उस सेनाको देख उसकी ओर जा, उसके बीचमें पहुंची, जिस समय वह उन्मत्तके समान शोकसे व्याकुल आधे वस्त्रको धारण किये दुर्बल, विवर्ण मुखवाली, मलिन और बिखरे केशवाली उस सेनाके मध्यमें पहुंची तो उसको देख कोई पुरुष इधर उधर भयसे भागने लगे, कोई चिन्ता करने लगे, कोई हंसने लगे, कोई उसकी निन्दा करने लगे। हे भारत! कोई कृपाकर उसका समाचार पूछने लगे, कि हे कल्याणि! तुम कौन और किसकी हो? इस वनमें क्या ढूढ़ती हो? हम तुमको देखकर भयसे व्याकुल हुए

हैं। क्या तुम मानुषीही हो? हे कल्याणि! हम तुम्हारी शरण हैं, तुम सत्य कहो, क्या तुम इस वन अथवा पर्व्वत दिशाओंकी देवी हो? हे अनिन्दिते! तुम यची या राचसी अथवा देवी हो? तुम हमारा कल्याण करो। हे कल्याणि! जैसे यह हमारा झुण्ड सुखसे चला जाय और हमारा कल्याण हो, वही यत्न तुम करो। बस झुण्डके ऐसे वचन सुनकर पति-शोकसे पीड़ित राजपुत्री साध्वी दमयन्ती झुण्डपति, बूढ़े, बालक और जो उनमें थे उन सबसे ऐसा बोली। तुम सब मुझको राजाकी पुत्री, राजाकी बहू और राजाकी स्त्री जानो। मैं अपने पतिका दर्शन चाहती हूं। विदर्भ देशका राजा भीम मेरा पिता है और निषध देशका राजा महाभाग नल मेरा पति है, मैं उसी अपराजित नलको ढूढ़ती फिरती हूं। यदि तुमने पुरुषसिंह, शत्रुनाशन, मेरे प्यारे नलको कहीं देखा हो तो शीघ्र कहो? उस सुन्दर अङ्गवालीके ऐसे वचन सुन, शुचि-नामक झुण्डपति अपने झुण्डके सहित ऐसा बोला। हे कल्याणि! हे शुचिस्मिते! मैं झुण्डका स्वामी हूं, मेरे बचन सुनो। हे यशस्विनी! इस मनुष्यरहित वनमें हाथी, गैंड़ा, भैंसा; शार्द्दूल, रीछ और हरिनोंको तो सर्व्वत्र देखता हूं, परन्तु मैंने नल नामक पुरुषको कहीं नहीं देखा, इस घोरवनमें मैंने तुम्हारे सिवा और किसी मनुष्यको नहीं देखा, अब यचोंके राजा भगवान् मणिभद्र हमसे प्रसन्न हों। अनन्तर उस बनिये और झुण्डसे दमयन्ती बोली, कि यह पुरुषोंका झुण्ड कहां जाता है, यह मुझसे कहो। सार्थवाह बोला, हे राजपुत्री! यह बनियोंका झुण्ड चन्देरीके राजा सुबाहुके राज्यका वासी है, और लाभके निमित्त अन्य देशोंको जा रहा है।

६४ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, सुन्दर अङ्गवाली दमयन्ती उसके वचन सुन अपने पतिके दर्शनकी इच्छासे उसीके सङ्ग आगेको चली। अनन्तर बहुत समय बीतनेपर महाघोर वनमें उन सब बनियोंने चौकोना पद्मोंसे भरा हुआ, मनोहर, बहुत घास और इन्धनसे संयुक्त फूलोंसे शोभित अनेक प्रकारके पचियोंसे सेवित निर्म्मल, मीठे, मनोहारी और ठण्ढे जलसे भरे हुए सौगन्धिक नामक तड़ागको देखा; और वाहनोंके थकनेके कारण उन्होंने वहीं ठहरनेकी इच्छा की। अनन्तर उन्होंने अपने झुण्डपतिकी आज्ञा लेकर उसी उत्तम वनमें तड़ागके पश्चिम ओर निवास किया। अनन्तर आधी रातके समय जब शब्द शान्त हो गया और वह थके हुए बटोही सो रहे, तब मदरूपी भरनोंसे व्याकुल पर्व्वतकी नदीमें जल पीनेकी इच्छासे एक हाथियोंका झुण्ड आया, उसने उस झुण्डमें अनेक हाथियोंको देखा, वे उन पाले हुए हाथियोंको देख मारनेकी इच्छासे वेगसे मदमें भरे हुए उनकी ओर दौड़े, जैसे पर्व्वतके शिखर टूटके पृथ्वीमें गिरते हैं, वैसेही वे हाथीभी दौड़े। उन हाथियोंका वेग महादुःसह हुआ। उस समय हाथियोंके दौड़नेसे और वृचोंके गिरनेसे वनका मार्ग नष्ट हो गया। अनन्तर तड़ागका मार्ग रुकनेसे उन हाथियोंने बनियोंको मारना आरम्भ किया। पृथ्वीमें सोते हुए, शरणकी इच्छा करते हुए लोग महा हाहाकार करने लगे। नींदसे व्याकुल बटोही लोग वनके कुञ्जोंकी ओर दौड़ने लगे, कोई हाथियोंके दांतसे, कोई सूड़ और कोई चरणोंसे मरने लगे। अनेक ऊंट घोड़े, और पुरुषोंसे भरे हुए उस झुण्डके पुरुष रात्रिमें इधर उधर दौड़नेके कारण एकसे एक मिलकर मरने गये। वे लोग घोर शब्द करते हुए पृथ्वीमें गिरने लगे। कोई वृचोंपर चढ़ गये, कोई गढ़ोंमें गिरके मर गये। हे राजन्!

प्रारम्भसे उस हाथियोंके झुण्डने उस भारी पुरुष दलको इस प्रकार नष्ट कर दिया। तीनों लोकको भयभीत करनेवाला महाघोर शब्द उस पुरुष दलसे उठा, मानो कहीं आग लग रही है, शीघ्र दौड़ो हमको बचाओ, यह रत्नोंके ढेर नष्ट होते हैं, इनको ले जाओ, यह धन बहुत है, मैं झूंठ नहीं कहता हूं। ऐसेही कहते हुए, सब लोग भयसे व्याकुल होकर इधर उधर भागने लगे और कातर होकर विचारने लगे कि इसको फिर आकर ले जायेंगे। जब इस प्रकार महाघोर पुरुष नाशका समय आया, तो भय से व्याकुल दमयन्तीभी जागी, उस कमलनैनी वालाने ऐसी आपत्ति पहले कभी नहीं देखी थी। उस सब लोक भयङ्कर आपत्तिको देखकर जम्हाई और सांस लेती हुई, भयसे व्याकुल होकर उठी, उसमें जो बचे थे, वे सब रुधिरसे भीगे हुए, भयसे व्याकुल हुए, ऐसा कहने लगे यह किसके कर्म्मका फल है, निश्चय हम लोगोंने महायशी मणिभद्र और श्रीमान भगवान यक्ष नाथ कुवेरकीभी पूजा नहीं करी अथवा विघ्नकारियोंकी पूजाभी हमने पहले नहीं की, और यह जो उन्मत्तके समान स्त्री अमानुष घोररूप बनाकर हमारे सङ्ग आई, जिसको हमने पहलेही भयानक माया वताया था सो निश्चय कोई राक्षसी, वा भयङ्कर पिशाचिनी है; इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह उसीके पापका फल है। यदि हम उस अनेक दुःखदायिनीको देखें तो अवश्यही लाठी ढेला तिनके काठ और मुक्कोंसे मारडालें। वही हमारे दलके नाश करनेवाली है! दमयन्ती उनके कठोर और रूखे वचन सुनकर अपने शरीरके बचानेकी इच्छासे उस दुःखको स्मरण करती हुई लज्जा और भयसे भरकर वनकी ओर भागी और विचारने लगी, हाय मेरे ऊपर ब्रह्माका कैसा घोर क्रोध हुआ है कि जिससे कल्याण प्राप्ति नहीं होती, यह कौनसे कर्म्मका फल है? मैं अपने कर्म्मको अच्छी प्रकार स्मरण करती हूं, परन्तु मैंने कभी मन बचन और कर्म्मसे थोड़ाभी पाप नहीं किया है, न जाने कौन से कर्म्मका फल है? निश्चय मेरे पूर्व जन्मका यह महापाप उदय हुआ है, जिससे इस प्रकार दुर्दशामें पड़ी हूं। पतिके राज्यका नाश मित्रोंसे वियोग, पति और सन्तानोंसे छूटना, नाथसे रहित होना, बहुत सांपोंसे भरे हुए बनमें वास यह क्या आपत्ति है! अनन्तर जब दूसरा दिन हुआ तो उस दलमें जो मरनेसे बचे थे, वे उस दुःखको शोचते हुए उस बनसे भागे और पिता पुत्र तथा मित्रोंका शोच करने लगे। हे नरनाथ! विदर्भराजपुत्री वहां शोच करने लगी कि, न जानूं मैंने कौनसा पाप किया है। देखो, इस निर्जन बनमें एक आदमियोंका महाझुण्ड मुझको मिला था, मेरे मन्दभाग्यके कारण उसकोभी हाथियोंके झुण्डने मार डाला, अवश्य अभी मुझको औरभी दुःख भोगना शेष है। मैंने बूढ़ोंसे सुना है, कि बिना समयके कोई पुरुष नहीं मरता। इसीसे इन हाथियोंनेभी मुझको नहीं मारा। मैंने बाल्यावस्थामें भी मनसे और कर्म्मसे कोई पाप नहीं किया, जिसका फल यह दुःख हुआ है, इससे जान पड़ता है, कि बिना प्रारब्ध पुरुषकी कुछ फलप्राप्त नहीं होता। मुझे निश्चय होता है, कि स्वयम्बरमें जो लोकपाल लोग आये थे, मैंने नलके अर्थ उनका निरादर किया था, अवश्य उनही देवतोंके प्रभावसे मुझे यह वियोग हुआ है। वह दुःखसे भरी हुई पतिव्रता, सुन्दरी दमयन्ती इस प्रकार रोती हुई विलाप करने लगी। अनन्तर मरनेसे जो बचे थे, उनमेंसे थोड़े वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंने शरत्कालकी चन्द्रमाकी कलाके समान दमयन्तीको मार्गमें देखा। अनन्तर वह बाला दमयन्ती बहुत कालतक चलती चलती

एक दिन सन्ध्या समय चेदि देशके राजा सत्यदर्शी सुवाहुके नगरमें पहुंची, और एकही वस्त्र पहने हुए उस उत्तम नगरमें गई। उस विह्वल, दुर्व्वल, दीन, खुले केशवाली, मलिन दमयन्तीको उन्मत्तके समान आते हुए सब नगरवासियोंने देखा उस नगरमें प्रवेश करती हुई दमयन्तीके पीछे खिलनेवाले नगरके लड़के चले, वह उनके सहितही राजाके स्थानके समीप पहुंची। लड़कोंसे घिरी हुई दमयन्तीको महलमें बैठी हुई राजमाताने देखके धायसे कहा, कि तू इसको हमारे घरमें बुला ला, देखो इस शरण चाहनेवाली बालाको यह लड़के दुःख दे रहे हैं, इसके रूपसे मेरा घर चांदना हुआ जाता है; यह विशालनैनी लक्ष्मीके समान रूपवाली कल्याणी, उन्मत्तके समान फिर रही है। वह धाय सब लड़कोंको दूरकर दमयन्तीको उत्तम महलमें लेगई, उससे आश्चर्य्य सहित राजमाताने पूछा कि, हे दिव्यस्वरूपे! तुम इस आपत्तिमें पड़करभी ऐसी उत्तम शोभाको धारण करती हो, जैसे बादलोंमें बिजली चमकती है, हमसे कहो कि तुम कौन और किसकी हो? भूषणोंसे रहितभी तुम्हारा स्वरूप मानुषीके ऐसा नहीं दीखता। तुम्हारा कोईभी सहाय नहीं है? क्या तुम पुरुषोंसे नहीं घबराती हो? राजमाताके ऐसे वचन सुनकर दमयन्ती बोली, मैं पतिव्रता, मानुषी, अन्तःपुरके रहनेवाली, अपनी इच्छासे निवास करनेवाली दासी हूं, केवल फल मूल खाकर जहां सन्ध्या हो वहीं रह जाती हूं, मेरा पति असंख्य गुणोंसे भरा हुआ और मेरा प्रिय है, मैंभी उस वीरकी वैसीही भक्त हूं, और नित्यही छायाके समान उनके पीछे चलती हूं। प्रारब्धसे उनको जुएकी अत्यन्त इच्छा हुई, वह जुएमें सब कुछ हार गये, और अकेले वनको चल दिये, मैंभी उन व्याकुल और उन्मत्तके समान अपने वीर पतिके सङ्गही उनको धैर्य्य बंधाती हुई सङ्गही वनको चली। एक दिन वह वीर वनमें भूखसे अत्यन्त व्याकुल हुए और उस एक वस्त्रकोभी इसी कारणसे खो बैठे। अनन्तर मैं उस विमना, नङ्गे, और चेतना रहित पतिके सङ्गही एक वस्त्र धारण किये हुए वनमें घूमने लगी और कई राततक नहीं सोई, अनन्तर एक दिन मुझको सोती हुई छोड़ मेरा आधा कपड़ा फाड़ वह कहीं को चले गये। अब मैं वियोगसे जलती हुई, अपने पतिको ढूंढ़ती हुई, उस अपने प्यारेको कमलकी गुठलीके समान अपने हृदयमें देखती हुई फिर रही हूं। उन देवतोंके समान रूपवाले प्राणनाथको कहींभी नहीं पाती हूं। उस रोती हुई आंसुवोंसे पूर्ण आंखवाली दमयन्तीके ऐसे वचन सुन राजमाता बोलीं। हे कल्याणि! हे भद्रे! तुम यहीं निवास करो, मेरा तुमसे परम प्रेम है, तुम्हारे पतिको मेरे पुरुष ढूंढ़ेंगे अथवा इधर उधर घूमता हुआ वह आपही यहां आजायगा। हे भद्रे! तुम यहां रहकर अपने पतिको प्राप्त करोगी। राजमाताके वचन सुन दमयन्ती बोली, हे वीरजननी! यदि आप मुझसे यह सब प्रण करें तो मैं रह सकती हूं। मैं जूठा नहीं खाऊंगी, पैर नहीं धोऊंगी और यदि कोई मेरी इच्छा करे तो वह आपसे प्राणदण्ड पावे! यह मेरा प्रण है। और अपने पतिके ढूंढ़नेवाले ब्राह्मणोंको मैं रोज देखा करूं। यदि आप यह सब स्वीकार करें तो मैं निःसन्देह यहां रह सकती हूं। इसके अन्यथा मेरा निवास हृदयमेंभी सम्भव नहीं है। यह सुन राजमाता प्रसन्न हो बोली, जो तुम्हारा प्रण है, सो सब मैं ऐसेही करूंगी! हे राजन्! राजमाता दमयन्तीसे ऐसा कहकर अपनी पुत्री सुनन्दासे बोलीं, हे सुनन्दे! यह सैरिन्ध्री साक्षात् देवरूपिणी है, और तुम्हारी समान अवस्थावालीभी है, इस हेतु तुम इसको अपनी सखी बनालो। इसके सङ्ग रहकर तुम प्रसन्न-

चित्तसे सदाही आनन्द करो। सुनन्दा माताके वचन सुन परम प्रसन्न हुई, और अपनी सब सखियोंके सहित दमयन्तीको सङ्ग ले अपने स्थानको गई। दमयन्ती वहां सब भोगोंको प्राप्त करके राजपुत्रीसे पूजित हो, आनन्दसे रहने लगी।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे प्रजानाथ युधिष्ठिर! राजानल दमयन्तीको छोड़कर महावनमें घूमने लगे, अनन्तर एकस्थानमें जलती हुई आगको देखा और उसके बीचमेंसे उसने यह शब्द सुना। हे नल! पुण्यश्लोक! शीघ्र आओ, दौड़ो, कुछ भय मत करो। यह सुनतेही नल उस आगके बीचमें घुस गया और वहां जाकर देखा कि एक सर्पोंका राजा कुण्डलाकार बैठा था। नलको देखतेही वह नाग हाथ जोड़ कर कांपता हुआ ऐसा बोला, कि हे नरनाथ! मेरा नाम कर्कोटक नाग है। मैंने महातपस्वी महर्षि नारदका दर्शन किया, था, उन्होंने क्रोधमें भरके मुझको शाप दिया कि जबतक राजानल यहां न आवें, तबतक तू स्थावरके समान यहीं पड़ा रह, जब तू उनको देखेगा तबही मेरे शापसे छूटेगा। हे महाराज मैं उनके शापसे एक चरणभी नहीं चल सकता हूं। आप मेरी रक्षाकीजिये, मैं आपको कल्याणका उपदेश करूंगा। मेरे समान कोईभी नाग नहीं है; मैं आपका मित्र हूंगा, अब मैं हलका बन जाता हूं, तुम मुझको उठाकर शीघ्र ले चलो। ऐसा कहकर वह नागराज अंगूठेके समान शरीरवाला हो गया। नल उसको उठाकर अग्निरहित देशमें लेगये; वह सांप अग्निसे छूटा। जब नलने उसके छोड़नेको इच्छा की, तो वह सर्प आकाशमें जाकर कहने लगा कि, हे नल! तुम अपने चरणोंको गिनगिनकर कुछ दूर चलो, हे महाबाहो! हम तुम्हारे वास्ते कुछ कल्याणका उपदेश करेंगे। तब नल अपने पैरोंको गिनने लगा, तब उस नागने दशवें चरणपर नलको काट लिया, उसके काटतेही नलका वह सुन्दर स्वरूप नष्ट हो गया। नलने अपने शरीरको कुरूप देख महा आश्चर्य किया! अनन्तर रूपधारी सर्पको देखा। तब कर्कोटक नाग नलको शान्त करता हुआ ऐसा कहने लगा, जिसमें पुरुषलोग तुमको न जान सकें, इसीलिये तुम्हारे रूपको मैंने नष्ट कर दिया है, हे नल! तुम जिसके कारणसे छलमें पड़कर इस दुःखको भोग रहे हो, मेरे विषसे वही कलि दुःख पावेगा। हे महाराज! मेरे दुःखसे भरे शरीरवाला कलियुग जबतक तुमको नहीं छोड़ेगा, तबतक महा दुःख सहैगा। हे महाराज! जिसने तुमको विना अपराधके दुःख दिया है, वह स्वयम्ही दुःख पावेगा, तुमने हमारी रक्षा की है, तुमने अपने क्रोधसे उसकी हानि नहीं चाही, अब तुमको सिंहादि तीक्ष्ण दाढ़वाले और शत्रुयोंसेभी कुछ भय नहीं होगा। हे नरनाथ! मेरे प्रसादसे तुमको वेद जाननेवालासेभी भय नहीं होगा। हे राजन्! मेरे विषकी पीड़ाभी तुमको नहीं होगी। तुम युद्धमें निरन्तर जीततेही रहोगे, हे राजन्! अब तुम इस दिशाको चले जाओ और अपना नाम बाहुक सूत बताना, राजा ऋतुपर्णके पास जाना, क्योंकि वह जुएकी विद्यामें बहुत निपुण है। हे निषधराज! वह रम्य नगरी अयोध्याका राजा है। तुमसे घोड़ेकी विद्या सीखकर तुमको जुएकी विद्या सिखला देगा। इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुए श्रीमान् राजा ऋतुपर्ण तुम्हारे मित्रभी हो जायंगे। तब तुम पाशोंकी विद्याको जान जाओगे, तो परम कल्याणको प्राप्त होगे। तब तुम अपने पुत्र और राज्यको प्राप्त करोगे, मैं तुमसे सत्य कहता हूं, मनमें कुछ शोक मत

करो! हे राजन्! जब तुम अपने रूपको चाहो तो इस वस्त्रको ओढ़कर मेरा स्मरण करना, इस वस्त्रके ओढ़तेही तुम अपने रूपको प्राप्त हो जाओगे, ऐसा कहकर उसने नलको दो दिव्य वस्त्र दिये। हे कौरव! हे राजन्! नागराज नलसे ठीक ऐसा कहकर और वस्त्र देकर वहीं अन्तर्ध्यान हो गये।

६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले. नागके अन्तर्द्धान होनेके पश्चात् राजा नल वहांसे चले और दसवें दिन राजा ऋतुपर्णके नगरमें पहुंचे और राजाके पास जाकर ऐसा बोले, मेरा नाम वाहुक है, घोड़ोंके हाकनेकी विद्यामें मेरे समान पृथ्वीमें कोई नहीं है, बड़े कठिन धन-चयके समयमें मैं मन्त्र दे सकता हूं और भोजन बनानाभी सबसे अच्छा जानता हूं, जगत्में जितनी शिल्पविद्या हैं, उन सबको अच्छी प्रकार जानता हूं, औरभी जो कठिन कर्म्म हैं, सबको कर सकता हूं। हे ऋतुपर्ण! आप हमको नौकर रख लीजिये। ऋतुपर्ण बोले हे वाहुक! तुम्हारा कल्याण हो, तुम हमारे यहां रहो, रथके शीघ्र चलानेमें सदाही बुद्धि रहती है। हे सूत! तुम ऐसा उपाय करो जिससे मेरे रथके घोड़े शीघ्र चल सकें, तुम आजसे मेरी घुड़शालके स्वामी हुए, आजसे तुमको दश सहस्र सोनेकी मुद्रा प्रति मास मिला करेगी, वार्ष्णेय और जीवल तुम्हारी आज्ञामें रहा करेंगे। हे वाहुक! इन दोनोंके सङ्ग आनन्द करते हुए तुम मेरे यहां रहो।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, कि राजाके ऐसे वचन सुन, सत्कार पाकर राजा नल वार्ष्णेय और जीवलके सङ्ग अयोध्यामें निवास करने लगे। राजा नल वहां निवास करते हुए सदा दमयन्तीहीकी चिन्ता करते रहते थे, सन्ध्याके समय नित्य यह बात कहा करते थे, "वह तपस्विनी भूख प्यास, और थकाईसे व्याकुल होकर कहां सोती होगी? और अपने मन्दभाग्यका स्मरण करती हुई कौनसे स्थानमें सोती होगी?" नलको यह बात प्रति दिन कहते सुनकर, एकदिन जीवलने पूछा, कि हे वाहुक! तुम रातको किसका नित्य स्मरण करते हो? सो मैं सुननेकी इच्छा रखता हूं, हे आयुष्मन्! तुम किसकी स्त्रीका स्मरण करते हो। प्रश्नको सुनकर नल बोले, कि किसी मन्दबुद्धिवाले पुरुषकी एक बहुत प्यारी स्त्री थी, यह क्षुद्र वचन उसीका है। कभी वह मूर्ख पुरुष किसी प्रयोजनसे उस स्त्रीसे बिछुड़ गया; बिछुड़नेके पश्चात् वह मूर्ख दुःखसे पीड़ित होकर शोकसे जलता हुआ रात दिन निद्रारहित घूमता है, और रात्रिमें उसका स्मरण करके इस श्लोकको गाया करता है, वह समस्त पृथ्वीको घूमकर कुछ जीविका प्राप्त करके उसीका स्मरण करता हुआ दुःखमें अयोग्य होने परभी पुनः पुनः उसीका स्मरण करता है; क्योंकि वह स्त्री महादुःखके समयभी उसके सङ्ग महावनको चली गई थी। उस पापीने उसको बनमें अकेली छोड़ दिया। यदि प्रारब्धवश दुःखसे जीतीभी होगी, तो वह अकेली मार्गोंको न जाननेवाली उस दुःख सहनेके अयोग्य बाला भूख और प्याससे व्याकुल होकर सिंहोंसे भरे हुए घोर वनमें घूमती होगी। हे आर्य्य! इस प्रकारसे उस मन्दभाग्य मन्दबुद्धिने अपनी स्त्रीको छोड़ दिया। इस प्रकार राजा नल दमयन्तीका स्मरण करते हुए उस राजाके घरमें छिपकर रहने लगे।

६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, जब राजा नल अपनी स्त्रीके सहित वनको चले गये, तो राजा भीमने नलके दर्शनकी इच्छासे अनेक ब्राह्मणोंको भेजा। बहुत धन देकर कह दिया कि तुम लोग नल

और मेरी पुत्री दमयन्तीको हेरो; इस कर्मके सिद्ध हो जाने पर अर्थात् नलका पता लग जाने पर तब जो कोई दोनोंको यहां ले आवेगा वह एक सहस्र गौ पावेगा, और उसको ब्रह्मोत्तरमें नगरके समान गांव मिलेगा। यदि नल वा दमयन्तीको यहां न ला सके और केवल पताही लगा दे, तौभी एक सहस्र गौका मूल्य पावेगा। ऐसे वचन सुन ब्राह्मण लोग प्रसन्न हो सब ओर को चल दिये। वे लोग नगर और राज्योंमें स्त्रीके सहित नलको ढूढ़ने लगे परन्तु कहीं भी नल वा दमयन्तीका पता न पाया। अनन्तर सुदेव नामक ब्राह्मण उनको ढूंढ़ता चेदिपुरीमें जा निकला। उसने वहां राजाके स्थानमें दमयन्तीको देखा, कि राजाके पुण्याह वाचनके समय सुनन्दाके सहित बैठी थी, परन्तु वह असाधारण रूप मन्द होनेसे दमयन्ती ऐसे जान नहीं पड़ती थी जैसे धूएंसे छिपे हुए सूर्य्यकी किरण। उस विशाल नैनोंको अधिक दुर्ब्बल और मलिन देख सुदेव ब्राह्मणने अनेक कारणोंसे निश्चय किया कि यही दमयन्ती है। सुदेव बोला, कि जैसा इस स्त्रीको मैंने पहले देखा था वैसीही अबभी है। आज इस लोक-सुन्दरीको लक्ष्मीके समान देखकर मैं कृतार्थ हो गया। यह पूर्णचन्द्रमाके समान रूपवाली, थोड़ी अवस्थावाली, सुन्दर पयोधरवाली, सब दिशाओंको अपने तेजसे अन्धकाररहित कर रही है; यही उत्तम कमलसमान बड़े नेत्र-वाली साक्षात् लक्ष्मीके समान है; यही चन्द्रमा की किरणके समान सबलोगोंकी प्यारी है; यही विदर्भरूप तड़ागसे दैवके दोषसे मनरूपी-कीचड़से भरी हुई साक्षात मृनालिनी (कमलकी डण्डीके) समान है, इसका रूप पतिके शोकसे दीन होनेसे ऐसा जान पड़ता है, जैसे राहुसे ग्रसित चन्द्रमा सहित पूर्णमासीकी रात्रिहो, अथवा सूखी हुई नदीका तट। इसका रूप कैसा होगया है? जैसे टूटे पत्रवाले कमलोंसे भरी हुई, डरे हुए पक्षियोंके हाथीकी सूंड़से टूटी हुई कमलनीका रूप हो। रत्न-गठित स्थानोंमें रहनेके योग्य, यह सुकुमारी, कोमलाङ्गी, इस समय ऐसी आपत्तिमें पड़ी है, जैसे सूर्य्यकी किरणसे जली हुई कमलकी मृनाली (डण्डी)। रूप और उदारतासे भरी हुई, भूषणोंके योग्य दमयन्ती इस समय विना भूषणोंके, आकाशमें नीले बादलोंसे छाई हुई चन्द्रमाकी किरणके समान शोभित हो रही है, यह काम, भोग, और प्यारे वस्तुओंसे रहित होकरभी केवल पतिके दर्शन की इच्छासे अपने दुःखी जीवनको धारणकर रही है, विना आभूषणोंकेभी स्त्रीको पतिही आभूषण है, यह सुन्दरी होनेपरभी विना पतिके शोभित नहीं होती। यदि इसको त्यागकर नल जीता है, और इसके शोकसे व्याकुल नहो तो बड़े कठोर कर्म्मको कर रहा है। इस नीलकेशी कमल-नैनी सुखके योग्य, दमयन्तीको दुःखिनी देखकर मेरा मनभी दुःखसे व्याकुल हुआ जाता है, यह सुन्दरी साध्वी अपने पतिसे मिलकर इस दुःखके पार कब जायगी? जैसे रोहिणी चन्द्रमासे मिलकर सुखी होती है, तैसे यह कब होगी? निश्चय राजा नल इससे मिलकर अपने छूटे हुए राज्य और पृथ्वीको पाकर प्रसन्न होंगे। अवस्था, शील और कुलसे राजा नलही इस कमलनैनीके योग्य है। मुझे उचित है कि उस अप्रमेय बलवान राजा नलकी स्त्रीको धीरज दूं; क्योंकि यह अपने पतिके दर्शनकी अत्यन्त इच्छा रखती है, मैं इस पूर्णचन्द्रमुखी, दुःख न देखने-वाली, दुःखसे व्याकुल, शोकवती, दमयन्तीको आश्वासित करूंगा।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, सुदेव ब्राह्मण अनेक कारणोंसे अपने मनमें निश्चय कर और उसको लक्षणोंसे पहचान दमयन्तीके पास जाकर ऐसा बोला। हे विदर्भराजनन्दिनि! मैं तुम्हारे भाईका मित्र सुदेव नामक ब्राह्मण हूं,

राजा भीमके वचनसे तुम्हें यहां ढूढ़नेको आया हूं। हे रानी! तुम्हारे माता पिता और वहां रहनेवाले चिरंजोव तुम्हारे दोनों वालक कुशलसे हैं, परन्तु केवल तुम्हारेही निमित्त तुम्हारे भाईलोग निर्ब्बलके समान होगये हैं, और तुम्हें ढूढ़नेवाले सैकड़ों ब्राह्मण पृथ्वीमें घूम रहे हैं।

श्रीवृहदश्व सुनि बोले, हे युधिष्ठिर! दमयन्तोने सुदेवको पहचानकर क्रमसे अपने सब वन्धुओंका समाचार पूछा, अनन्तर अपने भाईके मित्र, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ, सुदेवको देखकर शोकसे व्याकुल दमयन्ती बहुत रोई। अनन्तर उसको रोती हुई, और सुदेवसे एकान्तमें कुछ वात करती हुई देखकर सुनन्दा शोकसे व्याकुल होगई, और अपनो मांसे कहने गयी कि आज एक ब्राह्मणके सङ्ग वात करतो हुई सैरिन्ध्री बहुत रोरही है। यदि तू जान सके तो जान। अनन्तर चेदिराजकी माता रनवाससे निकलकर उस स्थानपर पहुंची जहां दमयन्ती ब्राह्मणसे वात कर रही थी, हे राजन्! अनन्तर राजमाताने सुदेव को एकान्तमें बुलाकर पूछा, कि यह सुन्दरी किसकी पुत्री और किसको स्त्री है, अपने वन्धु और पतिसे कैसे अलग होगई? हे ब्राह्मण! तुम इस पतिव्रताके सब चरित्रको जानते हो, सो सब मैंभी सुननेकी इच्छा रखती हूं, इस देवरूपिणीका सब वृत्तान्त हमसे कहो हे राजन्! ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ सुदेवने राजमाताके ऐसे वचन सुनकर सुखसे बैठकर दमयन्तीका सब वृत्तान्त इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

६८ अध्याय समाप्त।

सुदेव वोले, कि महा तेजस्वी धर्म्मात्मा भीम नामक विदर्भके राजा हैं। यह कल्याणी उन्हींकी पुत्री है। निषध देशके राजा वीरसेनके पुत्र बुद्धिमान पवित्रकीर्त्ति राजा॰ इसकी स्त्री है, उस महाराजको भाईने जुएमें हराके राज्यसे निकाल दिया, वह दमयन्तीके सङ्गही वनको चले गये, अब न जाने कहां हैं। सो हम लोग दमयन्तीके निमित्त पृथ्वीमें घूमते हैं, आज हमने इसको तुम्हारे स्थानमें पाया, मानुषियोंमें इसके समान रूप वाली कोई नहीं है। इसके भौंहोंके बीचमें जो मसा दीखता है, सो जन्म होसे है, मैंने इस सुन्दरीके पद्मतुल्य मुखपर यह छिपा हुआ मसा देखा, यह मैलसे ऐसा छिप गया है, जैसे मेघसे चन्द्रमा; ब्रह्माने ऐश्वर्य्यके निमित्त यह इसका चिह्न वना दिया है। प्रदिपदाकी मन्द कान्ति चन्द्रमाकी कला शोभित नहीं होती है। इसका रूप शरीरमें मैलके भरनेसेभी अभी नष्ट नहीं हुआ है, देखो स्नानादि न करने परभी यह सोनेके समान प्रकाशित हो रही है। यह देवी इस शरीरसे केवल इस मसेसेही पहचानी जाती है। जैसे किसी वस्तुसे ढकी हुई आग उष्णतासे पहचानी जाती है। हे राजन्! सुदेवके ऐसे वचन सुनकर राजमाताने दमयन्तीके मुखका मैल दूर करके उसके मसेको देखा। मैलके दूर होनेसे उसका मुख ऐसा शोभित होने लगा जैसे मेघरहित आकाशमें चन्द्रमा। हे भारत! राजमाता और सुनन्दा उस मसेको देखकर दमयन्तीसे लपटकर कुछ समयतक रोती रहीं। अनन्तर आंसुवोंको पोंछकर राजमाता धीरेसे ऐसा व.लो, इस चिह्नसे मैंने पहचान लिया तू मेरी वहनकी पुत्री है, हे सुन्दरी! मैं और तुम्हारी माता दशार्ण देशके राजा महात्मा सुदामाकी पुत्री हैं, उसने तुम्हारी माताको राजा भीमसे और मुझको राजा सुवाहुसे व्याहा था। तुम जब मेरे पिताके घरमें उत्पन्न हुई थी तबही मैंने तुम्हें देखा था। हे भामिनी! जैसा तुम्हारे पिताका घर और ऐश्वर्य्य है, वैसा मेरे घरकोभी जानो। दमयन्ती

उसकी बचकी सुन अत्यन्त प्रसन्न हुई। हे राजन्! अनन्तर दमयन्ती अपनी मौसीको प्रणाम करके ऐसा बोली। मैं छिपकरभी तुम्हारे घरमें सुखसे रही; तुमने मेरे सब मनोरथोंको पूर्ण किया; तुम मेरी सदा रक्षा करो। हे माता! मुझको यह निश्चय है, कि अब मुझको इस सुखसे अधिक सुखका स्थान नहीं मिलेगा, अब मैं बहुत दिनसे परदेशमें घूमती हूं। अब मुझे आज्ञा दो, मेरे दोनों बालक पिता और मातासे रहित दुःखसे व्याकुल वहां न जाने कैसे रहते हैं। यदि तुम मेरा कुछ प्रिय काम करना चाहती हो, तो मैं विदर्भ देशको जानेकी इच्छा करती हूं, अतएव शीघ्र वाहनकी आज्ञा दो। हे राजन! दमयन्तीको मौसीने प्रसन्न होकर कहा कि बहुत अच्छा। अनन्तर अपने पुत्रकी आज्ञासे भारी सेनासे रक्षित करके पालकीमें बिठलाकर श्रीमती दमयन्ती-को विदर्भ देशको भेज दिया। हे भरतश्रेष्ठ! उसके सङ्गही खानेपीने और पहननेकी वस्तु भेजी। अनन्तर दमयन्ती वहांसे चलकर थोड़ेही दिनके पश्चात् विदर्भनगरमें पहुंच गई। सब बन्धुलोग उसको देखकर बहुत प्रसन्न हुए, और उसका सन्मान करने लगे। यशस्विनी देवी दमयन्तीने बान्धव, दोनों बालक माता पिता, और सब सखीवर्गको सुखी देखकर परम विधिसे देवता और सब ब्राह्मणों-की पूजा करी। राजा भीमने सदैव ब्राह्मण-को एक सहस्र गौ, गांव और बहुत द्रव्य देकर प्रसन्न किया, यह दान राजाने अपनी पुत्रीको देखतेही दिया। हे राजन्! थकी हुई दमयन्तीने उस रात्रिको अपने पिताहीके घरमें बिताया। अनन्तर सुन्दर दमयन्ती अपनी मातासे कहने लगी। दमयन्ती बोली, हे माता मैं तुमसे सत्य कहती हूं कि यदि तुम मेरा जीना चाहती हो तो पुरुषोंमें वीर नलको ढूंढनेका यत्न करो। दमयन्तीके ऐसे वचन सुनकर उसकी माता अत्यन्त दुःखित हुई, रोने लगी, कुछभी उत्तर न दे सकी, रानीकी ऐसी दशा देखकर सब रनवासमें हाहाकार होने लगा और सब अत्यन्त रोने लगी। अनन्तर राजा भीमसे रानीने कहा कि तुम्हारी पुत्री दमयन्ती अपने पतिका शोच करती है, हे राजन्! उसने लज्जाको त्यागकर मुझसे आप ऐसा कहा है, कि तुम्हारे दूत लोग नलको ढूंढनेका यत्न करें। यह सुनकर राजा भीमने अपने वशमें रहनेवाले ब्राह्मणोंको आज्ञादी कि तुम लोग राजा नलको ढूंढनेका यत्न करो। राजाने उनको सब ओर भेज दिया। अनन्तर दमयन्तीने उनसे ऐसा कहा कि तुमलोग सब राज्योंमें जाकर बार बार इसी वचनको कहना। कि, "हे प्यारे! तुम छलसे मेरे वस्त्रको फाड़कर निर्जन वनमें प्यारी और पीछे चलनेवाली मुझे वनमें सोती हुई छोड़कर कहां चले गये? तुमने जैसे उसको देखा था, वह बाला वैसेही आधा वस्त्रपहरे अत्यन्त दुःखसे जलती हुई अब तकभी वैसीही है। हे वीर! हे राजन! उस रोती हुई अपने शोकसे व्याकुल स्त्रीको प्रसन्न करो, और उसके वचनका उत्तर दो।"

इसीके समान औरभी तुम अनेक वचन कहना कि, जिससे वे हमारे ऊपर कृपा करें। जैसे वायुके सङ्ग होकर अग्नि वनको जलाता है, तैसेही मेरा शरीरभी विरहसे जलता है। और यहभी कहना कि स्त्री सदाही पतिसे रक्षा और पोषण करने योग्य है, सो धर्म्म जाननेवाले आप इन दोनों बातोंको किस लिये नष्ट करते हैं? आप तो पण्डित कुलीन और दयावान, सदासे प्रसिद्ध हैं, मुझे शङ्का होती है, कि मेरेही भाग्यसे आपने यह निर्दय कार्य्य किया। हे नरव्याघ्र! हे पुरुषर्षभ! आप मेरे ऊपर कृपा कीजिये, क्योंकि मैंने आपहीसे सुना है, कि दया करनाही परम

धर्म्म है।" ऐसा कहनेपर यदि तुमलोगोंसे कोई कुछ कहे तो उसका पता लगाना कि यह कौन है, और यहां क्या करता है? हे ब्राह्मण-श्रेष्ठो! यदि तुम्हारे वचन सुनकर कोई कुछ उत्तर दे तो उसका वही वचन स्मरण करके मुझसे आकर कहना; तुमलोग आलस्य रहित होकर ऐसा उपाय करना कि जिसमें वह पुरुष ऐसा न जाने कि यह लोग दमयन्तीकी आज्ञासे इन वचनोंको कहते फिरते हैं, और तुम शीघ्र हमारे पास आना। चाहे वह धनवान वा निर्धन अथवा असमर्थही क्यों न हो, उसका सब समाचार जान लेना। वे ब्राह्मण दमयन्तीके वचनोंको सुनकर दुःखी नलके ढूंढनेको सब ओर चले गये। हे राजन्! वे ब्राह्मणलोग नगर, राज्य, गांव और आश्रमोंमें वेही वचन कहते हुए नलको ढूंढ़ने लगे, परन्तु कहींभी न पाया। हे प्रजानाथ! दमयन्तीने जैसे उन वचनोंको कहा था, वे ब्राह्मणलोगभी वैसेही सबको सुनाने लगे।

६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, बहुतकाल बीतनेपर पर्णाद नामक ब्राह्मण लौटकर विदर्भ नगरमें जाय दमयन्तीसे ऐसा वचन बोला। हे भीम-पुत्री! मैंने ढूंढ़ते ढूंढ़ते भङ्गासुरीके पुत्र राजा ऋतु-पर्णके यहां राजा नलको देखा। हे महाभागे! महाजनोंके बीचमें मैंने तुम्हारे वचन सुनाये, सुनकर राजा ऋतुपर्ण कुछभी न बोले और कोईभी उनका सभासद कुछभी न बोला, परन्तु राजाकी आज्ञा लेकर एक बाहुक नामक राजाका नौकर एकान्तमें जाकर मुझसे कहने लगा। वह उस राजाका सूत है, और छोटे हाथवाला कुरूप था, परन्तु भोजनोंके उत्तम बनाने और रथके शीघ्र हांकनेमें बहुतही चतुर है; रोकर बार बार श्वांस लेता हुआ मुझ से कुशल पूछकर ऐसा बोला, जो कुलीन स्त्री दुःखोंमें पड़केभी अपनेहीसे अपनी रक्षा करती हैं, निःसन्देह उन्ही पतिव्रताओंने स्वर्गको जीत लिया है; उत्तम स्त्रीलोग पतिसे छूटनेपर भी क्रोध नहीं करती हैं; और उसके चरित्रोंको कहकर प्राणोंको धारण करती हैं; उस मूर्खने सुखोंसे भ्रष्ट होकर तो उसको छोड़ दिया; इससे उसको क्रोध करना उचित नहीं। भोजन चाहनेवाले जब उसके वस्त्रको पक्षी लोग लेकर उड़ गये और वह दुःखोंसे जलने लगा तो उस निर्दोषी पर क्रोध करना उचित नहीं, चाहे वह सत्कारको पाती हो या न पाती हो, तौभी राजसे भ्रष्ट, लक्ष्मीसे हीन और दुःखोंसे पीड़ित पतिपर क्रोध करना अनुचित है। उसके यह वचन सुनकर मैं शीघ्रही यहां चला आया। अब तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो, और राजासेभी निवेदन कर दीजिये। हे प्रजानाथ! पर्णादके ऐसे वचन सुनकर रोती हुई दमयन्ती अपनी माताको एकान्तमें बुलाकर ऐसा बोली। हे माता! यह बात तुम राजासे मत कहियो, मैं तुम्हारे सामने ब्राह्मणश्रेष्ठ सुदेवको बुलाती हूं, यदि तुम मेरा प्यारा काम करना चाहती हो, तो ऐसा उपाय करो कि जिसमें इस बातको मेरे पिता न जानें; जैसे सुदेवने मुझको बान्धवोंसे मिला दिया, तैसेही यह पुनःभी जाय, देर न करें। हे माता! अयोध्या नगरीमें राजा नल ठहरे हैं, उनको लेनेको सुदेवही जाय। अनन्तर पर्णादका श्रम दूर होनेके पश्चात् सुन्दरी दमयन्तीने उनको बहुत धन देकर प्रसन्न किया और कहा कि नलके आनेपर तुमको औरभी धन दूंगी। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! मैं तुम्हारे इस कार्य्यसे शीघ्रही अपने पतिसे मिलूंगी; तुमने यह हमारा बड़ा कार्य्य किया जो दूसरेसे नहीं हो सकता था, ब्राह्मणने उसके वचन सुन दमयन्तीको बहुत धीरज दिया; और अच्छे आशीर्वादोंसे प्रसन्न करके धन और मानसे कृतार्थ होकर अपने घरको गया। हे

युधिष्ठिर! अनन्तर दुःख और शोकसे भरी हुई दमयन्तीने अपनी माताके आगे सुदेवको बुलाकर ऐसा कहा। हे सुदेव! तुम अयोध्यामें मनके समान शीघ्र जाकर वहांके राजा ऋतुपर्णसे ऐसा कहना कि भीमकी पुत्री दमयन्ती पुनः अपना स्वयम्वर करना चाहती है, वहां सब राजा और राजपुत्र जा रहे हैं, हे शत्रुनाशन! मैंने दिन गिन लिये हैं,वह स्वयम्वर कलहीको होगा, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो शीघ्र जाओ; क्योंकि दूसरे दिनका सूर्य्य निकलतेही वह पतिको वरण कर लेगी। वीर नल अभीतक जीते हैं, वा मर गये इसका कुछ पता नहीं है। हे महाराज! दमयन्तीके वचनको स्वीकार कर सुदेव अयोध्यामें पहुंचा और राजा ऋतुपर्णसे सब बात कह सुनाई।

७० अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! सुदेवके ऐसे वचन सुनकर राजा ऋतुपर्ण वाहुकसे मीठे वचनोंसे शान्तिपूर्व्वक ऐसा बोले, हे घोड़ोंके तत्व जाननेवाले वाहुक! दमयन्तीका स्वयम्वर है, सो हम एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुंचना चाहते हैं, कहो यह हो सकता है? हे कौन्तेय! राजाके ऐसे वचन सुन राजा नलका हृदय फटने लगा, परन्तु महामना नल धीरज धारण करके स्थिर रह गये, और ऐसा विचारने लगे, कि क्या दमयन्ती ऐसा कह सकती है? क्या सचही वह स्वयम्वर करती है? या उस दुःखसे मोहित स्त्रीने हमारे ही लिये यह बड़ा उपाय रचा है? हाय बड़े दुःखकी बात है कि तपस्विनी कृपण दमयन्तीभी मुझ क्षुद्र पापबुद्धिसे छूटकर दूसरा पति करना चाहती है। स्त्रियोंका स्वभाव बड़ा चञ्चल होता है, और मेरा दोषभी घोर था। अथवा हो सकता है, कि इतने दिन अलग रहनेसे दमयन्तीको मेरा प्रेम न रहा हो। वह पतलीकमरवाली मेरे शोकसे घबड़ा रही होगी, परन्तु मुझसे निराश होने परभी वह ऐसा कर्म्म नहीं कर सकती, विशेषतः सन्तान रहते। इसमें जो सत्य वा झूठ होगा वहां जाकर सब निश्चय जान लूंगा, ऋतुपर्णकी इच्छासे मैं अपना कार्य्य सिद्ध करूंगा। ऐसा विचारकर, दीन मनवाले वाहुकने हाथ जोड़कर राजा ऋतुपर्णसे ऐसा कहा, हे महाराज! मैंने आपके वचनको माना; अब मैं आपके सहित एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुंचूंगा। हे युधिष्ठिर! अनन्तर राजा ऋतुपर्णकी आज्ञासे वाहुकने घुड़सालमें जाकर घोड़ोंकी परीक्षा करी। राजा ऋतुपर्णने कहा कि, शीघ्रता करो। उनकी ऐसी आज्ञा सुन, नलने वार वार विचारकर घोड़ोंकी अच्छी प्रकार परीक्षा करी। अनन्तर मार्ग चलनेमें समर्थ दुबले दुबले घोड़ोंको बाहर निकाल लाये। वे घोड़े तेज बल और शीलसे भरे हुए, अच्छे खेतके उत्पन्न, बुरे लक्षणोंसे रहित, मोटी नाक, भारी ओठवाले, दश भौरियोंसे रहित, सिन्धु देशके उत्पन्न हुए, और वायुके समान शीघ्र जानेवाले थे। उनको देखकर राजा कुछ क्रोधकरके बोले कि, तू यह क्या करना चाहता है? हम तुमसे धोखा खाने योग्य नहीं हैं। ये थोड़े बलवाले घोड़े हम लोगोंको कैसे लेजा सकते हैं? और इनसे हम इतनी दूर कैसे पहुंचेंगे? वाहुक बोले, जिस घोड़ेके माथेमें एक, सिरमें दो कांखमें और हृदयमें दो दो भौरी हों, वही घोड़ा बलवान और चलनेमें असाधारण होता है; निश्चय ये घोड़े एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुंचेंगे, अथवा जिन घोड़ोंको आप आज्ञा दें उन्हींको मैं जोतूं। ऋतुपर्ण बोले, हे वाहुक! तुम घोड़ोंके तत्व जाननेमें निपुण हो, जिनको तुम समर्थ जानो उनहीको शीघ्र जोत लाओ। अनन्तर रथविद्यामें निपुण नलने कुल और

शीलसे भरे हुए उत्तम चार घोड़ोंको रथमें जोता। अनन्तर राजा ऋतुपर्णा शीघ्रता सहित उस रथपर चढ़े। उनके चढ़तेही चारों घोड़े पृथ्वीपर बैठ गये। तब श्रीमान् पुरुषोंमें श्रेष्ठ राजा नलने उन घोड़ोंको ठोंका चुचकारा, और लगाम पकड़कर ठीक किया; तब वे घोड़े तेज और बलसे भर गये। अनन्तर नलने घोड़ोंको हांका। जब वे अत्यन्त वेगसे चलने लगे, तो वार्ष्णेय सूतको हांकनेके स्थानपर बैठा दिया। अनन्तर वाहुकके हांकनेसे वे घोड़े ऋतुपर्णाको मोहित करते हुए रथको लेकर आकाशमें पहुंच गये। उन घोड़ोंको वायुके समान चलते हुए देखकर श्रीमान् अयोध्याके राजा परम आश्चर्य करने लगे। नलके सारथी वार्ष्णेयने वाहुकके उस रथके शब्दको सुनकर, लगाम पकड़नेकी रीति देखकर तथा वाहुककी अश्वविद्या देखकर विचारा, क्या यह इन्द्रका सारथी मातली है? क्योंकि वीर वाहुकमें भी वैसेही सब लक्षण दीखते हैं। अथवा घोड़ोंके कुलके तत्वको जाननेवाले साक्षात् शालिहोत्र है। उन्होंनेही यह उत्तम पुरुषका शरीर धारण किया है; अथवा शत्रुओंके जीतनेवाले यह साक्षात् नलही हैं? जान पड़ता है, कि महाराजहीने यह रूप धारण किया है, क्योंकि जिस विद्याको महाराज नल जानते थे, उसीको वाहुकभी जानता है, और राजा नल और वाहुको वुद्धिभी समानही दीखती है; तथा नल और वाहुककी अवस्थाभी एकही जानपड़ती है। यदि यह महापराक्रमी नल नहीं हैं, तो उनहीके सिखाये हुए कोई हैं। अनेक महात्मालोग इस पृथ्वीपर अपने रूपको छिपाकर दैवविधानको ग्रहण करके शास्त्रकी विधिके अनुसार घूमते हैं; अतएव, इनके शरीरको कुरूप देखकर मेरी वुद्धिका भेद नहीं होना चाहिये; परन्तु प्रमाणहीन होनेसे वुद्धिभी नष्ट हो सकती है। देखो इसकी अवस्था नलहीके समान है। अन्तको मैं निश्चय कह सकता हूं कि सब गुणोंसे भरे हुए नलहीने अपना नाम वाहुक रख लिया है। हे महाराज! राजा नलके सारथी वार्ष्णेयने ऐसा विचारकर अपने हृदयमें निश्चय कर लिया कि राजा नल येही हैं। अनन्तर राजा ऋतुपर्णा वाहुककी अश्वविद्याको देखकर वार्ष्णेय सारथीके सहित वहुतही प्रसन्न हुये। उस एकाग्रता उत्साह घोड़ोंका पकड़ना और परम यत्नको देखकर राजा अत्यन्तही प्रसन्न हुए।

७१ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अनन्तर वह रथ पक्षीके समान आकाशमें चलता हुआ शीघ्रही नदी, पर्व्वत, वन और तड़ागोंके पार हो गया। इस प्रकार चलते हुए रथपर बैठे हुए शत्रुनाशन राजा ऋतुपर्णाने अपने दुपट्टेको पृथ्वी में गिरा हुआ देखा। अनन्तर राजाने बहुत शीघ्र प्रसन्न होकर नलसे कहा कि मैं अपना दुपट्टा लेना चाहता हूं, हे महावुद्धे! तुम इन बहुत शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको इतने समयतक रोको कि जबतक वार्ष्णेय मेरे दुपट्टे को उठा लावे। नलने ऋतुपर्णासे कहा कि आपका दुपट्टा बहुत दूर गिरा है; उसको कोई लानेमें समर्थ नहीं है; क्योंकि वह चारकोश पीछे रह गया। ऐसे कहते हुए राजा ऋतुपर्णने उस वनमें एक फले और फूले हुए वहेड़ेके वृक्षको देखा। उसको देखकर राजाने शीघ्रता सहित कहा कि हे सूत! तुम मेरी अङ्क विद्याको कुशलताको देखो, सब कोई सब विद्याको नहीं जानता, एक पुरुषमें सब ज्ञान नहीं रहते हैं। हे वाहुक! इस वृक्षमें जितने फल और पत्ते हैं; उनको छोड़कर जितने गिर गये हैं, उन सबमें एकसो एक पत्ते हैं। हे वाहुक! दोनो शाखाओंमें पांचकरोड़ पत्ते हैं, इन दोनों

शाखाओंसे जो छोटी शाखा चली हैं, उन सबमें दो हजार एक सौ उनचास फल हैं। तब बाहुकने रथको रोककर राजासे कहा, हे राजन्! आप परोक्षको बातको कहते हैं, मैं इस बहेड़ेके वृक्षको काटकर आपकी बातका निश्चय करूंगा, क्योंकि इस गणित विद्यामें परोक्षवाद नहीं है। हे महाराज! मैं आपके आगेही इस वृक्षको काटता हूं; क्योंकि मैं नहीं जानता कि यह सत्य है, वा झूठ? हे नरनाथ! मैं आपके सामने वृक्षको काटता हूं, कुछ देर-तक वार्ष्णेय घोड़ोंकी लगाम पकड़े रहे। तब राजाने नलसे कहा कि हे सूत! यह समय देर करनेका नहीं है। परम यत्नवान् बाहुकने कहा कि कुछ थोड़ी देर आप ठहरिये, अथवा आपके मार्गमें ईश्वर कल्याण करे, वार्ष्णेयको सारथी बनाकर चले जाइये। हे कुरुनन्दन! बाहुकके ऐसे वचन सुनकर राजाने उससे शान्त्वनापूर्वक कहा कि हे बाहुक! जगतमें तुमही एक सारथी हो, दूसरा नहीं। हे हयकोविद! तुम्हारेही कर्तव्यसे मैं विदर्भ नगरको जा रहा हूं। मैं तुम्हारो शरण हूं, तुम विघ्न मत करो, यदि तुम सूर्य्यके रहते रहते विदर्भ नगरमें मुझे पहुंचाओगे, तो जो तुम कहोगे सोई तुम्हारा काम करूंगा। बाहुकने कहा कि मैं इस वृक्षके पत्तोंका निश्चय करके अगाड़ी चलूंगा। आप मेरे इस वचनको स्वीकार कीजिये। अनन्तर राजाने इच्छा न रहतेभी कहा कि अच्छा गिनो। हे पापरहित! मैं वृक्षको एक शाखाके काटनेकी आज्ञा देता हूं। हे अश्वतत्वज्ञ! तुम एक शाखाके पत्ते गिनकर प्रसन्न हो। अनन्तर नलने रथसे उतरकर शोघ्रही उस वृक्षको काटडाला और उसके फलोंको गिना, राजाने जितने बतलाये थे, ठीक उतनेही पाया। तब आश्चर्य करके राजासे कहने लगे, हे राजन्! मैंने यह आपका बल अद्भुत देखा। हे नरनाथ! मैं इस विद्याको यथावत सीखना चाहता हूं। शोघ्र चलनेकी इच्छावाले राजाने कहा कि तुम मुझको जुवा और गिननेकी विद्यामें निपुण जानो! बाहुक बोले, हे पुरुषर्षभ! यह विद्या मुझे सिखला दीजिये और मुझसे घोड़ेकी विद्या सीख लीजिये। राजा ऋतुपर्णने भारो काम और घोड़ेकी विद्याके लाभसे उसके वचनको स्वीकार कर लिया। अनन्तर राजाने कहा कि हे बाहुक! यह जुवेकी हृदय विद्या तुम हमसे यथावत ग्रहण करो, और घोड़ेकी विद्या तुम्हारेही हृदयमें रहे। ऐसा कह ऋतुपर्णने नलको जुएकी सब विद्या सिखला दो। जुएका तत्व सोखतेही नलके शरीरसे कलियुग निकल गया। तब निषधराज नलने क्रोध करके कलियुगको शाप देना चाहा। अनन्तर कलियुगने हाथ जोड़कर डरते हुए ऐसा कहा, हे महाराज! आप क्रोधको शान्त कीजिये, मैं आपको बहुत बढ़ाऊंगा। आपसे छुटते समय इन्द्रसेनकी माताने मुझको शाप दिया था, उससे मैं बहुत पोड़ित हुआ हूं। हे अपराजित! मैंने आपके शरीरमें कर्कोटक नागके विषसे रात दिन जलते हुए महा दुःखसे वास किया है; मैं आपको शरण हूं; आप मेरे वचन सुनिये; जगतमें जो कोई आलस्य रहित होकर आपका चरित्र वर्णन करेगा, उसको मुझसे उत्पन्न हुआ दुःख कदापि न होगा। यदि शरण आये भयसे पोड़ित मुझको आप शाप न देंगे, तो मेरा कहा हुआ वचन सत्य होगा। राजा नलने ऐसा सुनकर अपने क्रोधको शान्त किया। तब कलियुग भयसे पोड़ित होकर उसी बहेड़ेके वृक्षमें घुस गया, परन्तु कलियुग और राजा नलको इन बातोंको किसोने भी न सुना और न कलियुगको किसीने देखा। अनन्तर शत्रुनाशन निषधराज तेजस्वी नल सब दुःखोंसे रहित हो फलोंकी

गिन कलियुगको दूरकर परमतेज और आनन्दसे पूर्ण हो रथपर चढ़ शीघ्रता सहित घोड़ोंको हांकने लगे। उस दिनसे कलियुगके प्रविष्ट होनेसे वहेड़ेका वृक्ष नीच होगया। अनन्तर वे घोड़े फिरभी पक्षियोंके समान उड़ने लगे। महा यशस्वी राजा नलने अपने अन्तःकरणसे घोड़ोंको विदर्भ देशकी ओर चलाया, राजा नलके जानेके पश्चात् कलियुगभी वृक्षसे निकल अपने घरको चला गया। हे राजन्! राजा नलभी कलियुगके निकलनेसे सुखी होगये, परन्तु केवल कुरूपहीसे दुःखी रहे।

७२ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, अनन्तर सत्य पराक्रम राजा ऋतुपर्ण सन्ध्या समय विदर्भ नगरके द्वारपर पहुंचे, और द्वारपालोंने यह समाचार राजा भीमको दिया। राजा ऋतुपर्ण, राजा भीमकी आज्ञा पाकर कुण्डलपुरमें गये, उस समय नलने रथमेंसे ऐसा शब्द निकाला जिससे दशो दिशा पूर्ण होगई। उस रथके शब्दको सुनकर नलके घोड़े ऐसे प्रसन्न हुए, जैसे पहले नलको देखकर होते थे। दमयन्तीने नलके उस रथ शब्दको ऐसा सुना जैसे वर्षा कालमें मेघ गर्ज्जता है। दमयन्तीको रथका महाशब्द सुनकर परम आश्चर्य हुआ। जैसे नलके हांकनेसे शब्द होता था, तैसेही घोड़ोंका शब्द यहभी था। उस महाराजके रथके शब्दको महलोंपर बैठे हुए मोर और अपने स्थानोंमें बंधे हुए हाथी और घोड़ोंने सुना, सुनतेही मोर और हाथी घोड़े उधरहीको मुह करके ऐसा शब्द करने लगे, जैसे मेघके गर्ज्जनेसे करते हैं। दमयन्ती बोली, यह रथका शब्द पृथ्वीको पूर्ण करता हुआ मेरे हृदयको प्रसन्न कर रहा है, निश्चय यही राजा नल हैं। अब यदि राजा नलके चन्द्रमाके समान मुखको न देखंगी, यदि उस असंख्य गुणवाले वीरको न प्राप्त करूंगी, तो निःसन्देहही मर जाऊंगी। यदि आज उस वीरके कोमल हाथोंके बीचमें प्रविश न करूंगी, तो निःसन्देह पृथ्वीमें न रहूंगी। यदि आज मेघके समान गम्भीर वाणीवाले निषधराजको न पाऊंगी, तो सोनेके समान अग्निमें जल मरूंगी। यदि आज सिंहके समान तेजस्वी, मतवाले हाथी के समान बली राजा नल मुझको न प्राप्त होंगे, तो अवश्यही प्राण देदूंगी। मैं उनके झूठे वचन, अपकार, और पुरानी बातोंको एकान्तमें भी उनकी इच्छासेभी स्मरण नहीं कराऊंगी। हमारा निषधराज समर्थ, क्षमावान, वीर, दाता, और सब राजोंसे बड़ा है; और वह नीच कर्म्मको नहीं करता, तथा दूसरी स्त्रियोंके सङ्ग नपुंसकके समान है। मैं रात दिन उसके गुणोंको स्मरण करती हुई समय विताती हूं। उस प्यारेके बिना मेरा हृदय शोकसे फटा जाता है। हे राजन्! दमयन्ती इस प्रकार रोती हुई चेतना रहितसी हो गई। अनन्तर नलके देखनेकी इच्छासे ऊंची अटारीपर चढ़ गई। तब नगरके बीचकी सड़कमें वार्ष्णेय सारथीके सहित रथमें बैठे हुए राजा ऋतुपर्ण और बाहुकको देखा। बाहुक और वार्ष्णेय रथसे उतरे, घोड़ोंको रथसे अलग करके रथको स्थापन किया। महाराज ऋतुपर्णभी रथसे उतरकर महा पराक्रमी भीमसे मिलनेको चले। राजा भीमने उनका बहुत आदर और सत्कार किया, राजा ऋतुपर्ण उनसे आदर पाकर मनोहर कुण्डिनपुरमें रहे और बार बार स्वयम्बरकी सामग्रीको देखनेका यत्न करने लगे, परन्तु कुछ न जान पड़ा। अनन्तर राजा भीमने उनको बुलाया और स्त्रियोंकी करतूतको न जाननेवाले राजा भीमने ऋतुपर्णसे कहा कि आपका स्वागत हो, महाराज! किस निमित्त यहां आये हैं सो कहें। राजा भीम यह नहीं जानते थे, कि यह हमारी पुत्रीके निमित्त आये हैं। बुद्धिमान सत्यपरा-

क्रम कौशलराज राजा ऋतुपर्णने भी किसी राजा और राजपुत्रको वहां न देख स्वयम्बरका कोई समाचार न जान, राजा भीमसे ऐसा कहा कि मैं केवल आपको प्रणामही करनेको आया हूं। राजा भीम भी आश्चर्य युक्त होकर मनमें चिन्ता करने लगे, कि चार सौ कोससे भी अधिक दूर पर इनका स्थान है, इतने दूरसे अनेक गांवोंको नांघकर थोड़े कार्य्यके निमित्त यह क्यों आये? अवश्य यह कारण नहीं है, जो हो प्रातःकाल सबही जान जायंगे। विचारकर ऋतुपर्णसे बोले, आप बहुत थके हुए हैं, अब विश्राम कीजिये। ऐसा कह कर उनको विसर्जन किया। राजा ऋतुपर्ण भी भीमसे सत्कार पाकर प्रसन्न हुए। अनन्तर राजसेवकोंके सहित उस स्थानको गये जो उनके ठहरनेको ठीक किया गया था। राजा ऋतुपर्णके जानेके पश्चात् बाहुक भी वार्ष्णेयके सहित रथ लेकर रथशालामें गये। वहां जाकर रथसे घोड़ोंको खोल कर शास्त्रके अनुसार घोड़ोंकी सेवा करके घोड़ोंको प्रसन्न करके आप रथके जुए पर बैठ रहे। दमयन्तीने भी रथमें ऋतुपर्ण और वार्ष्णेयको देखकर शोकसे व्याकुल होकर शोचा कि यह कौनसे सारथीके रथका शब्द हुआ? यह शब्दतो नलहीके रथका है परन्तु निषधराजको नहीं देखती। जान पड़ता है कि वार्ष्णेयने भी इस विद्याको सीख लिया है, इसीसे इस रथका महाशब्द नलके रथके समानही हुआ है; अथवा राजा ऋतुपर्ण भी उनही गुणोंसे भरे हैं, जो राजा नलमें थे; क्योंकि इस रथका शब्द नलके रथके समान हुआ है। हे राजन्! सुन्दरी दमयन्तीने इस प्रकार अनेक तर्क वितर्क करके राजा नलके ढूढ़नेको एक दूती भेजी।

७३ अध्याय समाप्त।

दमयन्ती बोली, हे केशिनि! तुम जाकर देखो कि यह विरूप छोटे हाथोंवाला सूत कौन है, जो रथके जुवे पर बैठा है? हे भद्रे! हे अनिन्दिते! तुम इस पुरुषके पास जाकर यथायोग्य सावधान होकर मीठे बचनसे कुशल पूछना; मुझे बहुत शङ्का होती है कि महाराज नल यही हैं। तुम इस प्रकार बात बना कर कहना कि इसका मन और हृदय सन्तुष्ट हो, और बातोंके अन्तमें वही पर्णादकी बात कहना। हे सुश्रोणि! हे अनिन्दिते! वह जो कुछ उत्तर दे, उसको तुम ध्यान देकर सुनना। दूती उसके बचनको सुनकर बाहुकसे जाकर बोली और कल्याणि दमयन्ती भी अटारीपर चढ़कर देखने लगी। केशिनी बोली, हे मनुष्येन्द्र! कहिये आप कुशलसे तो हैं? हे पुरुषसिंह! आगे दमयन्तीने आपसे जो अच्छे बचन कहे हैं सो सुनिये। आप लोग अपने घरसे कब चले थे? और यहां क्यों आये हैं? यह सब कहिये। यह सब सत्य सत्य कहिये, विदर्भराज पुत्री सुनना चाहती है। बाहुक बोले, कि महात्मा कौशलराज राजा ऋतुपर्णने आज प्रातःकाल किसी ब्राह्मणसे यह सुना था, कि दमयन्ती कलही दूसरा स्वयम्बर करना चाहती है। इसी निमित्त चारसौ कोस चलनेवाले वायुके समान शीघ्रगामी घोड़ोंको रथमें जोतकर महाराज यहां आये हैं और मैं इनका सारथी हूं। केशिनी बोली, यह जो तुम्हारे संग तीसरा पुरुष है,यह किसका सारथी और कौन है? तुम कौन और किसके सूत हो? यह कर्म तुमने कहां सीखा था? बाहुक बोले, यह पुण्यश्लोक राजा नलका सारथी है, हे भद्रे! इसका नाम वार्ष्णेय है; राजा नलके भाग जानेसे अब ऋतुपर्णके यहां नौकर है। मैंभी घोड़ोंकी विद्यामें निपुण हूं, राजा ऋतुपर्णने मुझको सारथी और भोजन बनानेके काममें प्रतिष्ठित किया है। केशिनी बोली,

हे बाहुक! क्या वार्ष्णेय जानता है, कि राजा नल कहां हैं और तुमसे यह सब बात उसने कैसे कही? बाहुक बोले, यह तो उत्तम राजा नलके बालकोंको यहां पहुंचाकर इच्छानुसार चला गया था, इसे निषधराजका समाचार क्या मालूम है? हे यशस्विनी! महाराज नलको इस लोकमें कोई पुरुष नहीं जानता है, क्योंकि वह अपने रूपको छिपाकर घूमते हैं, नल अपनेको आपही जानता है, क्योंकि उसके पहले चिह्न उसको कदापि नहीं बतला सकते। केशिनी बोली, जो ब्राह्मण अयोध्यामें पहले गया था, उसने जाकर स्त्रीके यह वचन वहां बार बार सुनाये थे, कि हे वीर! आप कलसे मेरे आधेवस्त्रको फाड़कर प्रीतिवाली अपनी प्यारी मुझको वनमें सोते हुए छोड़कर कहां चले गये? आपने उसको जैसी आज्ञा करी थी, वैसेही वह आपका मार्ग देख रही है, वह विरहसे जलती हुई उसी आधे वस्त्रको ओढ़े हुए है। हे राजन्! उस दुःखसे सदा रोती हुईके ऊपर कृपा कीजिए। हे वीर! उसके वचनका उत्तर दो"। हे महामते! उसी वचनको तुम अपने मुखसे कहो, अनिन्दिता दमयन्ती सुनना चाहती है, और तुमने जो उसका उत्तर दिया था, राजपुत्री वहभी सुनना चाहती है।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, हे कुरुनन्दन! केशिनीके ऐसे वचन सुनकर राजा नलका हृदय फटने लगा, और आंखें आंसुवोंसे भर गईं, राजा नल अपने दुःखको सम्हालकर सकते हुए कण्ठसे रोते हुए ऐसा कहने लगे। बाहुक बोले, जो पतिव्रता कुलीन स्त्री दुःखोंमें पड़केभी अपनी रक्षा अपनेहीसे करती हैं, निःसन्देह वह स्वर्गको जीत लेती हैं। कुलीन स्त्रियां पतिसे दूर रह करभी क्रोध नहीं करती हैं, उत्तम स्त्रियां अपने पतिके चरित्रोंको कहकर प्राणोंको धारण करती हैं। यदि दुःखमें पड़े हुए मूर्ख राज्य और सुखसे छूटे हुए भोजन चाहनेवाले पक्षियोंसे छीने वस्त्रवाले दुःखसे जलते हुए पतिने उसको छोड़भी दिया, तो उसपर क्रोध करना उचित नहीं! ऐसी अवस्थामें कोईभी सुन्दरी पतिपर क्रोध नहीं कर सकती। राज्य और लक्ष्मीसेही नहीं बल्कि सुखोंसेभी भ्रष्ट, भूख और प्याससे व्याकुल पतिपर कोईभी स्त्री क्रोध नहीं कर सकती है, चाहे वह पतिसे सत्कार पाये हो वा न पाये हो।" इस प्रकार केशिनीसे वचन कहते हुए नल परम दुःखी हुए। अपने आंसूको रोक न सके और अधिक रोने लगे। हे भारत! तब केशिनीने दमयन्तीके पास जाकर सब बात कह सुनाई और उसकी चेष्टाभी सुना दी।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, हे राजन! नलके वचन सुनकर दमयन्तीको अत्यन्त शोक हुआ, और नलके प्रति शङ्का करके केशिनीसे बोली, हे केशिनी! तू फिर जा और बाहुककी परीक्षा कर। उसके पास जाकर उसके सब चरित्र देख और उससे बातचीत करती रह। हे भामिनि! वह जो कुछ काम करे उसके कारणको खूब विचार करना, वह जो काम करे उसकी भली भांति देखना। हे केशिनी! वह तुझसे यदि बहुत हठसेभी आग और पानी मांगे तौभी मत देना। यह सब उनको बातें देख और जानकर उनका सब कारण चाहे दैव वा मानुष हो मुझसे सब कहना औरभी उसमें जो असंख्य गुण तुझे जान पड़े वह सब मुझसे आकर कहना। दमयन्ती के वचन स्वीकार करके केशिनी पुनः बाहुकके पास गई और उसके सब लक्षण देख और सुनके दमयन्तीके पास आई और जो कुछ देखा था, सो सब कारणोंके सहित कह सुनाया।

केशिनी बोली, हे दमयन्ती! मैंने ऐसा पुरुष पहले कभी न देखा और न सुना था। यह सब जल और स्थलमें परम शुद्धिसे रहता है; छोटे द्वारमेंभी नीचा होकर नहीं जाता, परन्तु उसमेंभी सुखहीसे प्रविश करता है। बहुत छोटा रहने परभी जिसके वास्ते बड़ा मार्ग हो जाता है। राजाने ऋतुपर्णके निमित्त अनेक प्रकारके भोजनकी सामग्री और अनेक पशुओंके मांस भेजे थे, और उनको धोनेके घड़े भी भेजे थे सो बाहुकके देखतेही वे घड़े सब जलसे भर गये। तब बाहुकने उसी जलसे सब वस्तुओंको धोया। अनन्तर उसने एक मुट्ठी तिनके लेकर सूर्य्यको दिखाया, तब उनमें अग्नि जल उठी। यह सब आश्चर्य भरे उसके काम देखकर यहां आई हूं। हे शुभे! और भी मैंने उनमें एक आश्चर्य देखा कि अग्नि छूनेसे उनका शरीर नहीं जलता और जल उसकी इच्छासे शीघ्र बहता है। इससेभी अधिक एक आश्चर्य उसमें देखा, कि फूल उठाकर वह अपने हाथसे धीरे धीरे मलने लगा, परन्तु पुष्प मलने परभी वैसेही रहे; वरन ज्यों ज्यों मलता था, त्यों सुगन्धि बढ़ती जाती थी, यह सब अद्भुत बात देखकर मैं तुम्हारे पास दौड़ी हुई आई हूं। श्रीवृहदश्व मुनि बोले, दमयन्तीने उसके वचन सुनकर कर्म्म और चेष्टासे जान लिया कि नल आगये। उसने अपने पतिके लक्षण बाहुकमें पाकर शङ्कासे भरकर रोते हुए मीठी वाणीसे केशिनीसे कहा; हे भामिनि! तू पुनः जा और उन्मत्त बाहुकने जो मांस बनाया है, उसमेंसे जो कुछ चौकेके बाहर गिरा हो उसको यहां लेआ। वह दमयन्तीकी प्यारी केशिनी वहां गई और गिरा हुआ मांस जो अत्यन्त उष्ण था उसे शीघ्रही ले आई। हे कुरुनन्दन! उसने मांस दमयन्तीको दे दिया; दमयन्तीने पहले अनेक बार नलका पकाया हुआ मांस खाया था, अतएव उस स्वादको जानती थी, अनन्तर उसको खाकर दमयन्तीने निश्चय जान लिया कि यह सारथी नहीं नलही हैं। तब बहुत रोने लगी, अनन्तर पानीसे मुखको धोकर बहुत दुःख करके अपनी लड़की और लड़केको केशिनीके सङ्ग नलके पास भेजा। हे भारत! नलने इन्द्रसेन और इन्द्रसेना को देख कूदकर दोनोंको लपटा लिया। अनन्तर उन्हें अपनी गोदीमें बैठा लिया। देवतोंके समान दोनों बालकोंको अपनी गोदमें बिठलाकर दुःखसे भरे हुए बाहुक ऊंचे स्वरसे रोने लगे। अनन्तर अपने इस विकारको दिखलाकर राजा नल लड़कोंको अलग करके केशिनीसे बोले, हे भद्रे। यह दोनों बालक मेरे बालकोंके समान हैं, इसी लिये इन दोनोंको देखकर मैं रोने लगा। हे भद्रे! तुमको यहीं बार बार आते देख लोग हममें किसी दोषकी शङ्का न करें, क्योंकि हम परदेशी अतिथि हैं, इस लिये तुम्हारी जहांको इच्छा हो तहां चली जाओ।

७५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन! केशिनीने बुद्धिमान पुण्यश्लोक नलका सब समाचार दमयन्तीसे कह दिया, दमयन्तीने वह सब समाचार सुनकर दुःखसे भरे नलके दर्शनकी इच्छासे केशिनीको अपनी माताके पास भेजा, कि मैंने नलकी शङ्कासे बाहुकको सब परीक्षा करी, अब केवल रूपही में सन्देह रह गया है, सो मैं आप जाकर परीक्षा करना चाहती हूं। हे मातः! या तो उसको यहां बुला दीजिये, चाहे पिता जानें वा न जाने, इस कार्य्यको कीजिये। पुत्रीके ऐसे वचन सुनकर रानीने राजाको सब कह सुनाया, तब राजाने अपनी पुत्रीके उस अभिप्रायको जाना और राजकी आज्ञा पाकर नलको वहां बुलाया, जहां दमयन्ती

रहती थी। राजा नल दमयन्तीको देखतेही शोक और दुःखसे भर गये और आंसूसे भीज गये। सुन्दरी दमयन्तीने नलको उस अवस्थामें देखकर महा शोक किया। हे महाराज! अनन्तर कषाय-वस्त्र पहने जटाधारिणी मैलसे भरी हुई दमयन्ती वाहुकसे ऐसा बोली, हे वाहुक! तुमने पहले कभी कोई ऐसा धर्म्मज्ञ पुरुष सुना है, जो अपनी स्त्रीको वनमें सोती हुई छोड़ कर चला जाय? पवित्रकीर्त्ति राजा नलके सिवा ऐसा कौन होगा जो निरपराधिनी थकाईसे पीड़ित अपनी प्यारी स्त्रीको शून्य वनमें छोड़कर चला जाय? मैंने उस राजाका मूर्खता वश न जानें कौन अपराध किया था, जिससे वह मुझको वनमें सोती हुई छोड़ गया? मैंने साक्षात् देवतोंको छोड़कर उसको स्वयम्वर में पहले वरण किया था, न जानूं पुत्रवाली, भक्तिवती मुझको उसने कैसे छोड़ दिया? देवतोंके सामने अग्निको साक्षी देकर उसने कहा था कि मैं तेरा हूं। परन्तु न जानें वह प्रतिज्ञा कहांको चली गई? हे शत्रुनाशन युधिष्ठिर! राजा नल दमयन्तीके ऐसे वचन सुन शोकसे भरी आंसुओंसे अपने मुखको वार वार भिगोने लगी; अत्यन्त काली आंखोंसे अधिक आंसू वहाती हुई शोक पीड़ित दमयन्तीसे नल ऐसा बोले, हे भीरु! जिस कर्म्मसे मेरा राज्य नष्ट हुआ है, वह मैंने नहीं किया था, और जिससे तुमको छोड़ा था, वह कर्म्मभी कलियुगनेही किया था जिसको रात दिन मुझको शोचते हुए वनवासके समय दुःखिनो तुमने शापसे नष्ट किया था, वही कलियुग तुम्हारे शापसे जलता हुआ मेरे शरीरमें वास करता था, वह तुम्हारी शापकी अग्निसे जलकरभी मेरे शरीरमें अग्निके समान शत्रु होकर वास करता था। हे शुभे! मेरे पापसे और तपस्या न करनेसे हमारे इस दुःखका अन्त ऐसेही होनेको था। हे विपुलश्रोणि! जब वह पापी मेरे शरीरसे निकल गया तो मैं तुम्हारेही निमित्त यहां आया हूं, और मेरा कुछभी प्रयोजन नहीं था। स्त्री अनुरक्त और व्रतधारी पतिको छोड़कर दूसरा पति कैसे कर सकती है? हे भीरु! यह काम तुम्ही ऐसोसे हो सकता है, क्योंकि राजाकी आज्ञासे सब पृथ्वीमें दूत लोग यह कहते फिरते हैं, कि भीमपुत्री अपनी इच्छासे कामके अनुकूल अपने योग्य दूसरा पति वरण करेगी। इसही बातको सुनकर राजा ऋतुपर्ण यहां आये हैं। दमयन्ती रोते हुए नलकी यह बात सुन हाथ जोड़कर डरसे कांपती हुई यों कहने लगी, दमयन्ती बोली, हे कल्याण! हे नरनाथ! आप मुझमें दोषकी शङ्का करनेके योग्य नहीं हैं, क्योंकि मैंने देवतोंको परित्याग कर आपको पति बनाया है। आपहीके निमित्त ब्राह्मणलोग सब ओर गये हैं, उन्होंने मेरे वचनको जिस रूपसे दशोदिशाओंमें गाया है। हे राजन्! उनहीमेंसे एक विद्वान् पर्णाद नामक ब्राह्मणने राजा ऋतुपर्णके घर अयोध्यापुरीमें आपको देखा उसने आपसे जोकहा और आपने जो उसको उत्तर दिया वही आपके बुलानेमें मुझको उपाय जान पड़ा। हे पृथ्वीनाथ! आपके सिवा पृथ्वीमें कोई पुरुष ऐसा नहीं है, जो एक दिनमें घोड़ोंके द्वारा चारसौ कोस चल सके। हे नरनाथ! मैं अपने सत्यसे आपके चरण छूकर कसम खाती हूं, कि मैंने घूमते हुए मनसेभी कुछ पाप नहीं किया, यदि मैंने कभी कुछ पाप किया हो तो यह लोकमें घूमनेवाले वायु मेरे प्राणको नाश करें, यदि मैंने पाप किया हो तो यह सब जगतमें घूमनेवाले सूर्य्य मेरे प्राणको नाश कर दे। यदि मैंने कुछ पाप किया हो तो यह चन्द्रमा जो सबके मनमें साक्षीके समान घूमते हैं, ये तीनो देवता सबलोकोंको धारण करते हैं, यह सत्य कहें, यदि मैंने झूठ कहा हो तो यह मुझको छोड़

हैं। जब दमयन्तीने ऐसा कहा तो आकाशमें घूमनेवाले वायु बोले कि हे नल! हम तुमसे सत्य कहते हैं, कि इसने कुछभी पाप नहीं किया, हे राजन्! दमयन्तीका सुन्दरशील समुद्र रक्षित ही है। हे नल! इसने कुछभी पाप नहीं किया, इसके तीनवर्षके हमलोग साक्षी है, हे राजन्! इसने यह भारी उपाय आपहीके निमित्त किया है, क्योंकि तुम्हारे सिवाय कोईभी चार सौ कोस एक दिनमें नहीं चल सकता है, हे पृथ्वीनाथ? आप दमयन्तीसे दमयन्ती आपसे मिली अब आपको कुछभी और सन्देह नहीं करना चाहिये,अब स्त्रीको संग लेकर जाइये, पवनके ऐसे कहतेही आकाशसे फूल बरसने लगे,देवतोंने नगाड़े बजाये, और उत्तम पवन चलने लगा, हे भारत! राजा नलने यह अद्भुत बात देखकर दमयन्तीसे शङ्काओंको छोड़ दिया और उसको ग्रहण किया, अनन्तर राजा नलने नागराज कर्कोटकका स्मरण करके उस देव वस्त्रको ओढ़ा, उसके धारण करतेही नलने अपने पहले रूपको पाया। आनन्दिता दमयन्तीने अपने पतिको अपने रूपमें देखकर उससे लपटकर उच्च स्वरसे रोना आरम्भ किया। राजा नलभी अपनी स्त्रीसे लपट गये, अनन्तर पहले रूपसे शोभित होकर अपने पुत्रोंको लपटा कर आनन्दित किया, अनन्तर सुन्दररूपवाली विशाल नैनी दुःखसे भरी हुई दमयन्तीने नलके सिरको अपनी छातीसे लगाकर बहुत देरतक स्वांस लिया, तैसेही शोकसे भरे हुए पुरुषसिंह नलनेभी सुन्दर हंसनेवाली मैलसे भरी हुई दमयन्तीको लपटाकर बहुत देर निवास किया। अनन्तर दमयन्तीकी माताने प्रसन्न होकर नल और दमयन्तीका सब वृत्तान्त राजा भीमसे कह सुनाया। हे राजन्! तब राजा भीमने कहा कि मैं भोरको शौचसे पवित्र होकर दमयन्तीके रक्षित सुखसे बैठे हुए नलको देखूंगा। हे राजन्! अनन्तर नल और दमयन्तीने बहुत आनन्दसे उस रातको वनकी पुरानी कथा कहते कहते बिता दिया, वे दोनों परस्पर आनन्दकी इच्छासे प्रसन्न होकर राजा भीमके स्थानमें रहने लगे। राजा नल इस चौथे वर्षमें अपनी स्त्रीको पाकर और सब कामोंको सिद्ध करके परम आनन्दको प्राप्त हुए, दमयन्तीभी अपने पतिको प्राप्त करके इस प्रकार आनन्दमें मग्न हुई, जैसे आधा अन्न उत्पन्न होनेके समय पानीको प्राप्त करके पृथ्वी आनन्दित होती है, भीमपुत्री दमयन्ती अपने पतिको प्राप्त होनेसे सब दुःखोंकी शान्त करके निद्राको छोड़ आनन्दसे भर भर अपने मनको बढ़ाकर ऐसी शोभित हुई, जैसे चन्द्रमा निकलनेसे रात्रि।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, उस रात्रिको बिताकर प्रातःकाल होतेही राजा नल उत्तम वस्त्र और आभूषण पहन कर दमयन्तीके सङ्ग बैठे थे, उसी समय राजा भीमको आते देखा, नलने देखतेही विनयपूर्वक अपने श्वसुरको प्रणाम किया, तब सुन्दरी दमयन्तीनेभी अपने पिताको दण्डवत करी। राजा भीमने अत्यन्त प्रसन्न होकर राजा नलको लपटा लिया और पुत्रके समान यथायोग्य पूजा करके उनको बहुतही धीरज दिया, राजा नलको पतिव्रता दमयन्तीके सहित देखकर राजा भीमने उनकी बहुत पूजा करी। राजा नलनेभी उस पूजाको विधिपूर्वक ग्रहण किया और आपनेभी राजाकी यथोचित सेवा की। उस दिन उस नगरमें चारो ओर महा आनन्दके शब्द होने लगे। इस प्रकारसे नलके आनेके दिन सब पुरुषोंने बहुत आनन्दउत्सव नगर पताका और ध्वजाओंसे सजाया गया, राजमार्ग (बड़ी बड़ी सड़कें) जलसे छिड़की गई, दोनों ओर फूलोंसे शोभित किये गये, सब नगरवासियोंने अपने अपने द्वारपर वन्दन-वार

और फूलोंको माला लगा दीं, देवतोंके सब स्थानोंमें उत्सव होने लगी। राजा ऋतुपर्णने भी यह सुना कि बाहुक नलही था, उसको दमयन्तीसे मिला सुनकर ऋतुपर्णको बहुत आनन्द हुआ। अनन्तर राजा ऋतुपर्णने नलने मिल कर अपना अपराध क्षमा कराया, बुद्धिमान राजा नलनेभी अनेक हेतु दिखलाकर राजा ऋतुपर्णका अपराध क्षमा किया। कहनेवालोंमें श्रेष्ठ नलके जाननेवाले राज ऋतुपर्ण राजा नलसे आदर पाकर आश्चर्यसे ऐसा कहने लगे, हे निषधराज! हे पृथ्वीनाथ! आप प्रारब्धहीसे अपने कुटुम्बसे मिले हैं; कहिये जब आप छिपकर मेरे घरमें रहते थे, तब मैंने आपका कोई अपराध तो नहीं किया? अथवा यदि मैंने कभी कुछ जानकर वा विना जाने आपका कुछ अपराध किया हो, तो आप उसे क्षमा कीजिये। राजा नल बोले, हे राजन्! आपने मेरा कुछ अपराध नहीं किया, और यदि कियाभी हो, तो मैं क्षमा करता हूं क्योंकि आप हमारे पहलेसे सम्बन्धी और मित्र हैं। हे नरनाथ! आपका उचित है, कि अब हमसे औरभी प्रीति बढ़ावें, मैंने सब कामोंका प्राप्त करके आपके घरमें ऐसे निवास किया है, जैसे पहले अपने घरमेंभी नहीं किया था; यह घोड़ोंकी विद्या जो मुझमें हैं, सो आपहीकी है, हे राजन्! यदि आप चाहें, तो इसको सीख लीजिये, राजा नलने ऐसा कहकर घोड़ेको विद्या ऋतुपर्णको सिखा दी। ऋतुपर्णनेभी उस विद्याको विधिपूर्वक ग्रहण किया, भङ्गासुरीकेपुत्र राजा ऋतुपर्णने अश्वविद्याके तत्वका ग्रहण करके राजा नलको जुवेका तत्व सिखा दिया और दूसरा सारथी लेकर अपने घरको चले गये। हे राजन्! ऋतुपर्णके जानेके पश्चात् राजा नल कुण्डल पुरमें कुछ दिन रहे।

७७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन्! निषधराज नल एक महीना वहां रहकर राजा भीमकी आज्ञासे थोड़े मनुष्योंके सहित निषध देशको चले। एक सुन्दर रथ, सत्तर हाथी, पचास घोड़े और छःसौ पैदल उनके संग थे, राजा नल अपने वेगसे पृथ्वीको कंपाते हुए शीघ्रही अपने देशमें पहुंचे। वीरसेनके पुत्र महा मनस्वी राजा नल पुष्करके पास जाकर ऐसा बोले, कि मैंने बहुत धन कमाया है, पुनः जुआ खेलो, दमयन्तीके सहित और मेरा जो कुछ धन है सो सब एकही दांवपर लगा देता हूं, हे पुष्कर तुमभी अपने सब राज्यको एकही बार लगा दो। मैंने यह निश्चय कर लिया है, कि एकही दांवमें प्राणतक लगा देने चाहिये। अतएव पुनः जुआ खेलो, यह सदाका धर्म्म है; कि जुएमें दूसरेका धन वा राज्य जीतकर दूसरे दांव पर उसीको पुनः लगा देना चाहिये यदि तुम्हारी जुआ खेलनेकी इच्छा न हो तो युद्ध रूप जुआ खेलो, हे राजन्! एक रथपर तुम चढ़ो और एक पर मैं, या तुम मुझे मार डालो, या मैं तुम्हें, क्योंकि यह हमारे पुरखोंकी आज्ञा है, कि वंशके राज्यको जैसे हो तैसे प्राप्त करना चाहिये। हे पुष्कर! अब इन दोनों बातोंमेंसे एकको निश्चय कर लो। चाहे जुआ खेलो, चाहे युद्धमें धनुषको खींचो। राजा नलके ऐसे वचनको सुनकर पुष्कर हंसने लगा, और निश्चयही अपनी जीत समझके बोला हे नैषध! तुमने प्रारब्धहीसे जुएके निमित्त इस धनको उत्पन्न किया है, प्रारब्धहीसे तुम आजतक अपने कुटुम्बसे मिले हुए हो। हे राजन्! हे महाभुज! इस जीते हुए धनके सहित दमयन्ती भूषणोंके समेत अब मुझको ऐसे मिलेगी जैसे स्वर्गमें इन्द्रको अप्सरा। हे राजन्! मैं आजही तुम्हारा स्मरण करता था और मार्गभी देखता था, क्योंकि मुझे बिना मित्रोंके जुएमें सुख नहीं मिलता, अब मैं सुन्दर मुखवाली

अनिन्दिता दमयन्तीको जुएमें जीत कर कृतकृत्य हूंगा क्योंकि वह सदासे मेरे हृदयमें वास करती है, पुष्करके ऐसे सम्बन्ध रहित और निरर्थक बचन सुनकर राजा नलको महाक्रोध हुआ और खड्ग निकाल कर उसका सिर काटनेको उपस्थित हुए। महाक्रोधसे लालनेत्र करके राजा नल बोले, बिना ही जुआ खेले इतना क्यों बकता है? जुआ जीत कर बकना। तब नल और पुष्करका जुआ होने लगा। अनन्तर राजानलने एकही दांवमें पुष्करका राज, धन प्राण, और रत्न सब कुछ जीत लिया। अनन्तर पुष्करको जुएमें जीत, राजा-नल हंसकर पुष्करसे बोले, हे राजोंमें नीच! अब यह सब राज्य मेरा होगया, अब इसमें कुछ बाधा नहीं रही, तेरी शक्ति नहीं है जो दमयन्तीको देख सके। हे मूर्ख! अब तू अपने कुटुम्बके सहित उसी दमयन्तीका दास बन गया। रे मूढ़! तैने जो पहले मुझको जीता था, वह तेरा कर्म्म नहीं था वह कलि-युगका काम था, दूसरेका दोष तुझे नहीं देना चाहता, अतएव मैं तेरे प्राणको छोड़ देता हूं, तू सुखसे जीता रह, जो कुछ तेरा अंश और कार्य्य था सो सब तुझेही दे देता हूं। हे वीर! मैं तुमसे वैसाही प्रीति रखूंगा, तुम्हारा प्रेम मेरो ओरसे कम न होगा। हे पुष्कर! तुम मेरे भाई हो, सौवर्षतक जीते रहो। सत्यपरा-क्रम राजा राजा नलने अपने भाईको ऐसे प्रसन्न करके वार वार गलेसे लगाकर उसको अपने घर जानेको आज्ञा दी। पुष्करने राजा नलसे इस प्रकार प्रसन्न होकर हाथजोड़ प्रणामकर ऐसा कहा, हे राजन्! आपको कीर्त्ति अक्षय हो, आप सुखसे सहस्र वर्षतक जीते रहें क्योंकि आप मेरे प्राण और पृथ्वीको छोड़ते हैं। ऐसा कहकर राजासे सत्कार पाकर पुष्कर प्रसन्न होकर अपने पुरुषोंके सहित अपने नगरको चला, राजा नलने सेना और उत्तम नौकरोंके सहित सूर्य्यके समान तेजस्वी पुष्करको सुख और धनके सहित विदा करके लक्ष्मी और शोभासे भरे हुए अपने नगरमें प्रवेश किया, वहां जाकर निषधराजने अपने नगरवासियोंको प्रसन्न किया, नगरवासियोंकाभी रोवां रोवां प्रसन्न हो गया और मन्त्री आदि सब पुरवासी हाथ जोड़कर ऐसा बोले, हे राजान्! आज हम सब इस नगरमें ऐसे प्रसन्न हुए जैसे इन्द्रको पाकर देवता।

७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन! जब सब नगर शान्त हो गया, और वह उत्सव समाप्त हुआ तो राजाने बहुत सेना भेजकर दमयन्तीको वहीं बुला लिया, दमयन्तीको शत्रुनाशन पिताने अत्यन्त सत्कार करके विदाकर दिया। दम-यन्तीके पिता पराक्रमी और महात्मा थे, तब पुत्रके सहित दमयन्ती अपने नगरमें आई तो राजा नल ऐसे आनन्द करने लगे जैसे नन्दन-वनमें इन्द्र। महा यशस्वी राजा नल जम्बूद्वीपके राजोंमें प्रकाश करने लगे और फिर अपने राज्यका शासन पहलेके समान करने लगे। दक्षिणाओंके सहित अनेक यज्ञ करें, हे राजेन्द्र! वैसेही आपभी थोड़ेही दिनमें अपने मित्रोंसे मिलियेगा। हे नरश्रेष्ठ! हे पुरुष र्षभ! जुआ खेलकर शत्रुनाशन राजा नलने स्त्रीके सहित इस प्रकार महा दुःख पाया था, हे पृथ्वीनाथ! राजा नलने तो वनमें एकले रहकर ऐसा दुःख पाया और फिर आनन्दभी किया। हे पाण्डव! तुम तो अपने भाई और द्रौपदीके सहित इस वनमें आनन्द करते हुए धर्म्मकी चिन्ता करते हो। आपके सङ्ग तो वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले अनेक ब्राह्मण हैं, इसमें तुमको कौन दुःख है। कर्कोटक नाग, दमयन्ती, नल, और राजर्षि ऋतुपर्णकी कथा कलियुगको नाश करती है। हे प्रजा-

नाथ! यह कथा कलियुगकी नाशक है, आपके समान पुरुषोंकी उचित है, कि इसको सुनकर धीरज धारण करें। पुरुषार्थ स्थिर नहीं है, यह विचारकर आप उदय और हानिकी कुछ चिन्ता न कीजिये, हे नरनाथ! इस इतिहासको सुनकर धैर्य्यधारिये शोच मत कीजिये। आप दुःखमें पड़कर शोच करनेके योग्य नहीं हैं। बुद्धिमान पुरुष प्रारब्ध लौटने और पुरुषार्थ नष्ट होनेपर रोते नहीं हैं, जो कोई इस नलके इतिहासको कहेंगे या सुनेंगे, वे कभी दरिद्री न होंगे, उनको अनेक प्रकारके धन मिलेंगे। और उन लोगोंको सब कोई धन्य कहेंगे। इस उत्तम पुराणके सुननेसे पुरुषको पुत्र, पौत्र, उत्तम प्रतिष्ठा, यश, आरोग्यता प्राप्त होते हैं, और प्रेम बढ़ता है। जो तुम डरसे डरते हो कि दुर्य्योधन मुझे पुनः जुएमें बुलावेगा और जीत लेगा, सो यह डर तुम्हारा मैं दूरकर देता हूं। हे कुन्तीनन्दन! हे राजन! मैं जुएके तत्वको जानता हूं, सो प्रसन्न होकर तुम्हें देता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब राजा युधिष्ठिरने प्रसन्नचित्त होकर कहा कि हे भगवन्! मैं यथार्थ रूपसे जुएके तत्वको जानना चाहता हूं। अनन्तर वृहदश्व मुनिने महात्मा पाण्डवको जुएका तत्व सिखा दिया, और स्नान करनेको हयतीर्थ तीर्थमें चले गये। उनके जानेके पश्चात् युधिष्ठिरने आए हुए तपस्वी ब्राह्मणों और तीर्थ और वनोंसे आये हुए महात्माओंसे सुना कि बुद्धिमान अर्ज्जुन वायु भक्षण करके उग्र तपस्याकर रहे हैं, दृढ़ ब्रतवाले अर्ज्जुन जैसा तप करते हैं, वैसा किसीनेभी तप नहीं किया निश्चय ब्रतवाले कुन्तीनन्दन अर्ज्जुन ऐसे तपस्वी हुए हैं, मानो साक्षात् श्रीमान् धर्म्मही शरीर धारण करके तपस्याकर रहे हैं। पाण्डुनन्दन कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर अपने प्यारे भाई अर्ज्जुनको इस प्रकार महा वनमें तपस्या करते हुए सुनकर जलते हुए हृदयसे शरणकी इच्छा करके अनेक विधि ज्ञान जाननेवाले ब्राह्मणोंसे पूछने लगे।

७९ अध्याय समाप्त।

नलोपाख्यान पर्व्व समाप्त।

अथ तीर्थयात्रा पर्व्व प्रारम्भ।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! जब मेरे परदादे अर्ज्जुन काम्यक वनसे चले गये तब उनके विना पाण्डवोंने क्या किया? क्योंकि मुझे ज्ञान पड़ता है, कि जैसे देवतोंकी गति विष्णु हैं, वैसेही पाण्डवोंकी गति सेनाओंके जीतनेवाले महा धनुर्धारी अर्ज्जुन थे, मेरे प्रपितामह लोग उस इन्द्रके समान पराक्रमी, युद्धसे न हारनेवाले, वीर अर्ज्जुनके विना वनमें कैसे रहे?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे तात! जब काम्यक वनसे सत्यपराक्रम अर्ज्जुन चले गये, तो पाण्डव लोग शोक और दुःखसे व्याकुल हो गये। जैसे पक्षीके पंख काटके डोरमें बांध देते हैं और उसका मन प्रसन्न नहीं रहता तैसेही पाण्डवभी व्याकुल हो गये। उस कठिन कर्म्मकारी अर्ज्जुनके विना वह वन ऐसा हो गया जैसे कुवेरके विना चैत्ररथ (कुवेरका बाग)। हे जनमेजय! अर्ज्जुनके विना पुरुषसिंह पाण्डव दुःखसे उस वनमें वास करने लगे। हे भरतश्रेष्ठ! वे महा रथ पाण्डव पराक्रमसे दिन दिन ब्राह्मणोंके निमित्त खानेके योग्य अनेक हरिणोंको मारते थे। शत्रुनाशन पाण्डवलोग नित्यही यज्ञके निमित्त हरिणोंको मारकर ब्राह्मणोंको खिलाते थे। हे राजन्! अर्ज्जुनके जानेके पीछे पुरुषसिंह पाण्डवलोग अप्रसन्न होकर उस वनमें बसने लगे। एकदिन अपने मध्यम पति अर्ज्जुनकी स्मरण करती हुई द्रौपदी घबराये हुए युधिष्ठिरके पास आकर ऐसा बोली। जो दो हाथवाला अर्ज्जुन सहस्र हाथवाले अर्ज्जुनके

समान है, उसके विना यह वन मुझको नहीं सोहाता ; एक अर्ज्जुनके विना मुझे यह पृथ्वी शून्य दीखती है ; औ यहभी बहुत आश्चर्य है, कि यह फूले फले वृक्ष अर्ज्जुनके विना वैसे सुन्दर नहीं दीखते ; उस नीले मेघके समान सुन्दर, मतवाले हाथीके समान चलनेवाले, कमल नेत्र अर्ज्जुनके विना यह काम्यक वन मुझे नहीं सोहता। जिसके धनुषका शब्द वज्रके समान सुनाई पड़ता था, उस अर्ज्जुनके विना मुझे सुख नहीं मिलता। हे महाराज ! द्रौपदीका ऐसा वचन सुनकर शत्रुनाशन भीमसेन बोले, हे सुमध्यमे ! हे भद्रे ! तुम जो कहती सुननेमे सो बात हमारे ही मनकी है, उ... ...ते। ...जैसे अमृतके पीनेसे। जिसके हाथ लम्बे, मोटे, मुद्गरके समान कठोर, रोदेकी ठेटसे युक्त, धनुष और खड्गके धारण करनेवाले, सोनेके बाजू बन्दोंसे शोभित पांच फनवाले सांपके समान हैं, उस पुरुषसिंहके विना यह वन ऐसा दीखता है, जैसे विना सूर्य्यके आकाश। जिसके हाथोंके बलके आश्रयसे कुरुवंशी और पाञ्चाललोग इकट्टे हुए देवतोंकी सेनासेभी नहीं डरते हैं, जिस महात्माके हाथोंके आश्रयसे हमलोग शत्रुओंको जीते हुए और पृथ्वीको प्राप्तही समझते हैं, उस वीर अर्ज्जुनके विना इस काम्यक वनमें हम रहनेको समर्थ नहीं हैं। हमको सब दिशा अन्धेरेसे भरी हुई दीखती हैं। तब पाण्डुपुत्र नकुल रोते हुए ऐसा कहने लगे। नकुल बोले, जिस अर्ज्जुनके युद्धमें दिव्य कामोंको देखकर देवताभी प्रशंसा करते हैं, उसके विना वनमें कैसे चित्त लगेगा ? जिस महा तेजस्वीने उत्तर दिशामें जाकर महा बल गन्धर्व्वराजको जीत कर उत्तम घोड़े प्राप्त किये थे, जिसने बनहो तीरके समान रङ्गवाले तेजस्वी, वायुके समान चलनेवाले घोड़ोंको राजसूय महायज्ञमें अपने प्यारे भाईको प्रेमसे दिये थे, उस भीमके छोटे भाई, दृढ़ धनुवाले अर्ज्जुनके विना इस देव निवासके योग्य काम्यक वनमें रहनेकी हमारी इच्छा नहीं है। सहदेव बोले, जिस महारथने, पहले राजसूय यज्ञमें युद्धसे जीते हुए अनेक धन और कन्याओंको राजाको समर्पण किया था, और जिस महा तेजस्वीने कृष्णकी सम्मतिसे युद्धमें सब यादवोंको जीतकर सुभद्राको ग्रहण किया था, उस अर्ज्जुनके आसनको शून्य देखकर मेरा हृदय कभी भी शान्त नहीं होता। हे महाराज ! हे शत्रुनाशन ! उस वीरके विना यह वन ... हमारी इच्छा इस वनको छोड़ देनेकी है।

८० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार द्रौपदीके सहित अपने भाइयोंको अर्ज्जुनके दर्शनकी इच्छावाला जान और उनकी बातें सुनते हुए धर्म्मराज युधिष्ठिर बैठे थे, इतनेहीमें तेजकी लक्ष्मीसे प्रकाशमान, जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी देवर्षि नारदजीको देखा। उनको देखतेही धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके समेत खड़े हो गये, और महात्मा नारदजीकी यथा योग्य पूजा करी। कुरुकुल श्रेष्ठ, श्रीमान्, प्रकाशमान्, राजा युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित ऐसे शोभित हुए, जैसे देवतोंके सहित इन्द्र। जैसे सावित्री वेदोंको और पर्व्वतकी सूर्य्यकी किरण नहीं छोड़ती हैं, तैसेही द्रौपदीभी धर्म्म सहित अपने पतियोंके सङ्गही रहती थी। हे पापरहित ! भगवान नारदजीने उस पूजाको ग्रहण किया, और समयानुसार धर्म्मराजको समुझाने लगे। धर्म्मराज महात्मा युधिष्ठिरसे नारदजी बोले कि हे धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ ! आपको क्या इच्छा है ? कहिये हम आपको क्या दें ? ऐसा सुन धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित देव समान नारदजीको प्रणाम-कर हाथ जोड़ ऐसा बोले। हे सुव्रत ! हे

महाभाग! जब सब लोकोंसे पूजित आप मुझसे प्रसन्न हुए, तो आपकी कृपासे मैं अपने सब कार्य्योंकी सिद्धी समझता हूं। हे पाप-रहित! यदि आप भाइयोंके सहित मेरे ऊपर अनुग्रह करना चाहते हैं, तो मेरे सन्देहको यथायोग्य नाश कीजिये। जो पुरुष तीर्थ यात्राके निमित्त समूची पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करता है, उसको क्या फल होता है? यह आप पूर्ण रीतिसे कहिये। नारद बोले, हे राजन्! आप सावधान होकर सुनिये, जिस प्रकार बुद्धि-मान भीष्मने पुलस्त्य मुनिसे सुना था, सो मैं कहता हूं। पहले धर्म्मचारियोंमें श्रेष्ठ भीष्म पितरोंके व्रतको धारण करके मुनियोंके सहित गङ्गातीरपर बसते थे। हे राजन्! देव और ऋषियोंसे सेवित पवित्र और पुण्य देश गङ्गाके द्वारमें महा तेजस्वी भीष्म देवता, पितर और ऋषियोंको शास्त्र विधिके अनुसार तर्पण करते हुए निवास करते थे। एक दिन महा यशस्वी भीष्मने जप करनेके समय अद्भुत स्वरूपवाले पुलस्त्यमुनिको देखा। उन्होंने महातपस्वी पुलस्त्यको तेजसे प्रकाशित देखकर परम आनन्द प्राप्त किया और महा आश्चर्य्यमाना। हे भारत! वहां आये हुए पुलस्त्यमुनिको देख धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्मने विधिपूर्व्वक उनकी पूजा करी, पवित्र होकर अपने मनको स्थिरकर उनको अर्घ दे, शिरसे प्रणाम कर, ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ पुलस्त्यको इस प्रकार अपना नाम सुनाया। हे सुव्रत! आपका कल्याण हो, मैं आपका दास भीष्म हूं, आज आपका दर्शन होनेसे मेरे सब पाप छूट गये। हे महाराज! हे युधिष्ठिर! धर्म्मधारियोमें श्रेष्ठ भीष्म ऐसा कह हाथ जोड़ चुप हो बैठ गये। कुरुकुलश्रेष्ठ भीष्मको वेदपाठ और नियमसे दुर्व्वल देख पुलस्त्यमुनि अत्यन्त प्रसन्न हुए।

८१ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्य मुनि बोले, हे धर्म्मज्ञ! तुम्हारे इस परिश्रम इन्द्रिय निग्रह और सत्यसे हम परम सन्तुष्ट हुए हैं। हे महाभाग! हे पाप-रहित! तुम्हारा यह धर्म्म और पिताकी भक्ति देखकर हम बहुत प्रसन्न हुए हैं। हे पुत्र! हे भीष्म! हे कुरुकुलश्रेष्ठ! हे पापरहित! हम तीनों कालको देखते हैं, तुम जो कहोगे सोई तुमको देंगे, कहो हम तुम्हारा कौन काम करें! भीष्म बोले, हे महाभाग! सबलोगोंसे पूजित! जब आप हमसे प्रसन्न हुए, तो हम अपने सब कार्योंको सिद्धी समझते हैं, आपके देखनेसे सब कार्य्य सिद्ध हुए। हे धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ! यदि आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तो हमारे सन्देहको नाश कीजिये। हमारे हृदयमें तीर्थोंके विषयमें कुछ धर्म्म विषयक सन्देह हैं, उनको हम सुनना चाहते हैं, आप कहिये, हे देवतुल्य! हे ब्राह्मण ऋषि! जो पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करता है, उसको क्या फल होता है? सो आप निश्चय करके कहिये। पुलस्त्य मुनि बोले, हे पुत्र! हम तुमसे तीर्थके फलको कहते हैं, सावधान मनसे सुनो, यह ऋषियोंके सुनने योग्य है। जिसके हाथ, पांव, मन विद्या और कीर्त्ति वशमें होती हैं, वही तीर्थोंके फलको भोगता है; जो सब घरोंसे लौटकर एक किसी स्थानपर सन्तुष्ट होकर रहता है, जिसको अहङ्कार नहीं होता, वही तीर्थके फलको भोगता है; जो छल और कार्य्योंके आरम्भसे दीन, थोड़ा खानेवाला, इन्द्रियजित और सब पापोंसे रहित होता है, वही तीर्थोंके फलको भोगता है। हे राजेन्द्र! जो क्रोधसे रहित! सत्य और शीलसे भरा हुआ, पक्का व्रतधारी, अपने समान सब प्राणि-योंको देखनेवाला हो, वही तीर्थोंके फलको भोगता है। जो यज्ञ ऋषियोंने देवतोंके निमित्त कहा है, जिनका फल इस लोक और परलोकमें होता है, उन यज्ञोंको दरिद्री पुरुष

नहीं कर सकता; क्योंकि यज्ञमें अनेक सामग्री और बहुत वस्तुओंका विस्तार चाहिये। उन यज्ञोंको राजाही लोग कर सकते हैं, और कहीं कहीं धनवान पुरुषभी करनेमें समर्थ होते हैं; परन्तु थोड़े धनवाले, सहाय रहित, एकले, साधनहीन, पुरुष नहीं करसकते। हे नरनाथ! हे योद्धेमेंश्रेष्ठ! जो विधि दरिद्रोंके लिये यज्ञ फलके समान कही हैं, उसको सुनिये। हे भरतसत्तम! यह ऋषियोंका परम गुप्त मत है, कि पवित्र तीर्थोंमें जाना यज्ञोंसेभी अधिक फलदायक है, योर्थोंमें सोना और गऊदान न करकेभी तीन रात तीर्थोंमें रहनेसे दरिद्र पवित्र होता है, भारी भारी दक्षिणावाली अग्निष्टोमादि यज्ञ करनेसे जो फल होते हैं,सो इन तीर्थोंमें जानेसेभी होते हैं। देवतोंका तीर्थ पुष्कर नामक मर्त्यलोकमें है, वह तीनलोकमें विख्यात है, महाभागी पुरुषकी वहां जाना उचित है; हे महामति! पुष्कर तीर्थमें तीनों सन्ध्याओंके समय दश करोड़ तीर्थ इकट्ठे होते हैं, वहां सूर्य्य, वसु, रुद्र, साध्य, मरुत, गन्धर्व्व और अप्सरा सदाही निवास करते हैं। हे महाराज! जहां देवता, दैत्य और ब्रह्मर्षिलोग महा पुण्यके सहित तप करके दिव्य योगको प्राप्त होते हैं, उस पुष्करका जो मनस्वी पुरुष मनसेभी ध्यान करता है, वह सब पापोंसे पवित्र होकर स्वर्गमें जाकर पूजित होता है। हे महाराज! उस तीर्थमें सब लोकोंके पितामह परम प्रीतिके सहित सदाही निवास करते हैं। हे महाभाग। पुष्करमें पहले देवता और ऋषिलोग पवित्र पुण्यके सहित तप करके परम सिद्धिको प्राप्त हुए हैं; पितर और देवतोंको पूजा करनेवाला पुरुष यदि उसमें स्नान करे, तो अश्वमेध यज्ञसे बारह गुने फलको पाता है। यदि पुष्करमें रहनेवाले एक ब्राह्मणकोभी भोजन करावे, तो उस कर्म्मके प्रतापसे इसलोक और परलोक में आनन्द करता है, साग,नीन, फल याजो कुछ आप खाय, वही ब्राह्मणको श्रद्धा सहित खिलावे, उसो कर्म्मके फलसे बुद्धिमान पुरुष अश्वमेधके फलको प्राप्त करता है। हे राजसत्तम! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, कोई हो, उस तीर्थमें स्नान करके फिर गर्भमें नहीं आता, विशेष करके जो कार्त्तिकी पूर्णिमासीको पुष्करमें स्नान करता है, उसको अक्षय ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। हे भारत! जो सन्ध्या और प्रातःकाल हाथ जोड़कर पुष्करका स्मरण करता है। उसे तीर्थ स्पर्श करनेका फल होता है। चाहे पुरुष वा स्त्री हो उसने जन्म भरमें जो पाप किया हो, वह सब पुष्करमें स्नान करतेही नष्ट होजाते हैं। जैसे सब देवतोंमें पहले विष्णु हैं, तैसेही सब तीर्थोंमें आदि पुष्कर हैं। राजन्! जो पवित्र और इन्द्रियजित होकर बारह वर्ष पुष्करमें रहे, वह सायुज्य मोक्ष पाता है, और ब्रह्मलोकमें बसता है। जो सो वर्षतक अग्निहोत्र करे, और जो एक कार्त्तिकी पूर्णमासीमें पुष्कर स्नान करे, उन दोनोंको समान ही फल होता है। तीन सिखर और तीन पुष्करादि झरने सिद्ध हैं, किन्तु इसका कारण हम नहीं जानते पुष्कर में जाना, तप करना, दान करना बहुत कठिन है, जो थोड़ा भोजन करने वाला इन्द्रियोंको वशमें करके प्रदक्षिणाके पश्चात् बारह रोजतक पुष्करमें रहता है, वह जम्बुमार्गमें जाता है, देवता ऋषि और पितरोंसे सेवित मार्गमें जाकर सब काम पाकर अश्वमेधके फलको प्राप्त करता है। हे राजन्! जो पितर और देवतोंकी पूजा करनेवाला अगस्त्य सरमें जाकर तीन रात रहना है, उसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। जो शाक और फलोंकी खाता है, उसे कुमार भाव प्राप्त होता है। हे भरतर्षभ! वहांसे लक्ष्मीसे भरे हुए लोक पूजित कण्वमुनिके आश्रममें जाय। उसका

नाम धर्म्मारण्य है, वह पवित्र स्थान और आदिस्थान है, जहां जाते ही पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है; वहां इन्द्रियजित और अल्पाहारी होकर यदि पितर और देवतोंकी पूजा करे तो सब काम पूर्ण होते हैं, और यज्ञका फल मिलता है। उसकी प्रदक्षिणा करके ययातियन नामक तीर्थमें जाय, वहां जातेही अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। वहांसे अल्पाहारी और जितेन्द्रिय होकर महाकाल तीर्थमें जाय, वहां करोड़ तीर्थोंका स्पर्श होनेसे अश्वमेधका फल मिलता है। आगे धर्म्म जाननेवाला पुरुष भद्रवट नामक तीर्थमें जाय। यह स्थान पार्व्वतीनाथ शिवका है और तीनों लोकोंमें विख्यात है। वहां शिवके दर्शन करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, और शिवके प्रसादसे गणेशका फल मिलता है। लक्ष्मीके सहित, शत्रुओंसे रहित, बुद्धिसे भरा हुआ, पुरुषोंमें श्रेष्ठ यात्री वहांसे चलकर तीनों लोकोंमें विख्यात नर्मदा नदी पर जाय, वहां देवता और पितरोंको तर्पन करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर दक्षिण समुद्रके तट पर जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता है और चढ़नेको विमान प्राप्त होता है। आगे जितेन्द्रिय और जिताहार होकर चर्म्मणवती (चम्बल) नदीके तट पर जाय; वहां जानेसे रन्तिदेवकी करी हुई अग्निष्टोम-यज्ञका फल प्राप्त होता है। हे धर्म्मज्ञ! हे युधिष्ठिर! वहांसे हिमाचलके पुत्र अर्बुदमें जाय, जहां पहले पृथ्वीमें छिद था, वहीं तीनों लोकोंमें विख्यात वशिष्ठमुनिका आश्रम है, वहां एक रात रहनेसे हजार गौदानका फल मिलता है। हे नरश्रेष्ठ! यदि जितेन्द्रिय होकर वहां पिङ्ग तीर्थका स्पर्श करे तो सौ गौदानका फल पावे। हे राजन्! वहांसे उत्तम प्रवास तीर्थमें जाय, जहां भगवान अग्नि आपही निवास करते हैं। हे वीर! अग्निका सारथी ज्वलन जो देवतोंका मुख है, जो मनुष्य पवित्र हो मनको स्थिरकर वहां स्नान करे, और तीन रोज वास करे, तो अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है। वहांसे सरस्वती और समुद्रके सङ्गमको जाय, तो उसे सहस्र गोदानका फल होता है, और स्वर्ग मिलता है। हे भरतर्षभ! वह तीर्थ अग्निके समान तेजसे भरा हुआ है, वहां मनको स्थिर करके समुद्रमें स्नान करे, तीन दिन वहीं निवास करके पितर और देवतोंका तर्पण करे तो अश्वमेध यज्ञका फल पाता है और चन्द्रमाके समान तेजस्वी होता है। हे भरतसत्तम! वहांसे वरदान तीर्थको जाय। हे युधिष्ठिर! विष्णुने उसीस्थानमें दुर्व्वासाको वर दिया था। आगे पुरुष जिताहार होकर द्वारिका पुरीको जाय, वहां पिण्डारक तीर्थमें स्नान करे तो बहुत सुवर्ण प्राप्त होता है, हे महाभाग! हे शत्रुनाशन! उस तीर्थमें अब भी पद्मके समान एक मुद्रा दिखाई देती है। हे कुरुनन्दन! यह परम आश्चर्य है कि वहां त्रिशूल और पद्मके चिह्न दीखते हैं। हे पुरुषर्षभ! वहां महादेव निवास करते हैं। हे भारत! वहां सिन्धु और समुद्रके सङ्गममें जाय, वहां मनको स्थिर करके समुद्रमें स्नान करे और पितर देवता तथा ऋषियोंका तर्पण करे। यहां स्नान करनेसे अपने तेजसे प्रकाशित वरुणलोक मिलता है। हे युधिष्ठिर! वहां शङ्कुकर्णेश्वर महादेवको पूजा करनेसे महात्मा लोग कहते हैं कि अश्वमेधसे दशगुण फल होता है। हे भरतर्षभ! हे कुरुवरश्रेष्ठ! आगे प्रदक्षिणा करके तीन लोकमें विख्यात दमी नामक तीर्थमें जाय; वह सब पापोंका नाश करनेवाला है, वहीं ब्रह्मादिक देवता शिवको पूजा करते हैं। वहां स्नानकर जल पी देवतोंसे वेष्टित शिवकी पूजाकर पुरुष जन्म

भरके पापोंसे छूटता है। हे पुरुषव्याघ्र! हे नरश्रेष्ठ! इसी स्थानपर सब देवतोंने दमोकी स्तुति की थी। वहां स्नान करनेसे अश्वमेधका फल प्राप्त होता है! हे राजन! पहली लोक कर्त्ताविष्णुने दैत्य और दानवोंको मारकर इसी स्थानपर पवित्रता पाई थी। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे वसुधारा नामक तीर्थको जाय, उसकी सब देवता लोग स्तुति करते हैं, वहां जानेहीसे अश्वमेधका फल मिलता है। हे कुरुश्रेष्ठ! सावधान और जितेन्द्रिय होकर स्नान करना चाहिये, वहां देवता और पितरोंकी तपस्या करनेसे विष्णुलोक मिलता है। हे भरतर्षभ! इस तीर्थमें वसुओंका तड़ाग है, वहां स्नान करनेसे पुरुष वसुओंका प्यारा हो जाता है। हे नरश्रेष्ठ! आगे सिन्धुतम नामक तीर्थमें जाय, वहां स्नान करनेसे सब पापोंका नाश और बहुत सुवर्ण मिलता है। हे महाराज! आगे पवित्र और शीलवान पुरुष भद्रतुङ्ग नामक तीर्थपर जाय। वहां जानेसे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है, और मोक्ष होती है। आगे कुमारिका तीर्थ जो इन्द्रतीर्थके नामसे प्रसिद्ध है, जिसकी सिद्ध लोग सेवा करते हैं, वहां स्नान करनेसे पुरुषको स्वर्ग मिलता है। वहीं सिद्ध सेवित रेणुका तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे ब्राह्मण चन्द्रमाके समान निर्म्मल हो जाता है। आगे जितेन्द्रिय और जिताहार होकर पञ्चनद तीर्थपर जाय, वहां जानेसे पांच यज्ञका फल प्राप्त होता है, इसके नाम पहली कह चुके हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम भीमा स्थानपर जाय, वहां स्नान करनेसे पुरुष देवीका पुत्र होता है, उसका रङ्ग तपे हुए सोनेके समान हो जाता है; वहां जानेसे लाख गोदानका फल होता है। वहांसे तीनलोकमें विख्यात श्रीकुण्ड तीर्थपर जाय, वहां ब्रह्माको नमस्कार करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे उत्तम विमला तीर्थको जाय, जहां अबतकभी सोने और चांदीके रङ्गवाली मछली दीखती हैं, वहां स्नान करनेसे पुरुषको इन्द्रलोक मिलता है, वह पुरुष सब पापोंसे छूटकर मोक्षको पाता है। आगे वितस्ता नदीमें जाकर स्नान करे और वहां पितर तथा देवतोंका तर्पण करे। हे भारत! इस तीर्थमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है। हे महाराज! वहांसे काश्मीर देशको जाय, वहां तक्षक नागका वन जो सब पापोंका नाश करनेवाला है, उसमें जाकर वितस्ता नदीमें स्नान करे, ऐसा करनेसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है,औरसब पापोंसे छूटकर मुक्ति हो जाती है। वहांसे तीन लोकोंमें प्रसिद्ध वड़वा तीर्थमें जाय, यहां विधिपूर्व्वक सायंकालकी सन्ध्यामें स्नान करे,वहांपर शक्तिके अनुसार सूर्य्यको नैवेद्य दे। पण्डित लोग कहते हैं, कि पितरोंके निमित्त वहां जो दान किया जाय सो अक्षय होता है। हे नरनाथ! गन्धर्व्व ऋषि, पितर, देवता, अप्सरा, गुह्यक, किन्नर, यक्ष, सिद्ध, विद्याधर, पुरुष, राक्षस, दैत्य, रुद्र और ब्रह्मा उसी स्थानमें विष्णुका भोग लगाकर विष्णु को प्रसन्न करते हैं। उसी स्थानपर इन लोगोंने ऋग्वेदकी सात सात ऋचा पढ़कर विष्णुकी स्तुति की थी, और विष्णुजीने उनके ऊपर प्रसन्न होके उनको वहीं आठ सिद्धि दी थी। औरभी उनको इच्छानुसार अनेक सिद्धि देकर भगवान विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये थे, जैसे मेघोंमें बिजली। हे भारत! इसी लिये उस तीर्थका नाम सप्तचरू है। वहां पर सूर्य्यको नैवेद्य देनेसे लाख गो दान, हजार राजसूय यज्ञ, और हजार अश्वमेध यज्ञोंका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकर रुद्र तीर्थको जाय, वहां महादेवकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल मिलता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर मणिवन तीर्थको जाय वहां एक रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे लोक

विख्यात् देविका तीर्थ में जाय। हे भरतर्षभ! वहीं पर सब ब्राह्मण उत्पन्न हुए थे। आगे तीनों लोकमें विख्यात शूलपाणि रुद्रके स्थानमें जाय, वहां पर देवता लोग वास करते हैं। हे भारत! वहां स्नान करके पुरुषको शीघ्रही सिद्धि मिलती है, वहां यज्ञ करे और करावे, वहांकी बालु, फूल, और जलको छूनेसे पुरुष मरनेके पश्चात् शोचसे रहित होता है, अर्थात् मोक्ष पाता है देव और ऋषियोंसे सेवित पवित्र देवोका वह स्थान दो कोस चौड़ा और दशकोश लम्बा है। हे धर्म्मज्ञ। वहांसे क्रमके अनुसार दीर्घसत्र तीर्थ पर जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता, सिद्ध और महा ऋषिलोग दोक्षित हो कर बड़े बड़े यज्ञको करते हैं। हे राजेन्द्र! हे शत्रुनाशन! हे भारत! तीर्घसत्र तीर्थमें जानेहोसे राजसूय और अश्वमेधका फल है, आगे जिताहार नियमधारी पुरुष विनसन तीर्थमें जाय जहां मेरुके शिखर पर सरस्वती अन्तर्द्धान हुई हैं। आगे चमश शिवोद्भेद और नागोद्भेद तीर्थ दीखते हैं, तहां चमसोद्भेद तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता है। शिवोद्भेदमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, और नागोद्भेदमें स्नान करनेसे पुरुषको नागलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! आगे शशभिशयान तीर्थमें जाय, हे भारत! जहां कार्त्तिकीमें ईश्वर रूपधारी पुष्कर दीखते हैं। हे भरतश्रेष्ठ! हे महाराज! वे लोग प्रतिवर्ष सरस्वतीमें आते हैं। हे भरतर्षभ! हे पुरुषसिंह! वहां स्नान करनेसे पुरुष सदा दिनमें चन्द्रमाके समान प्रकाशित हो जाता है। हे कुरुनन्दन! वहांसे देवता और पितरोंकी पूजा करनेवाला नियमधारी पुरुष कुमार कोठी तीर्थमें जाकर स्नान करे, वहां स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, और उसके कुलकाभी उद्धार हो जाता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे सावधान होकर रुद्रकोटि तीर्थमें जाना चाहिये, जहां पहले मुनियोंका समूह शिवके दर्शनकी इच्छासे आया था, और उन्होंने वहां अत्यन्त प्रसन्न होकर हम पहले शिवजोका दर्शन करेंगे, हम पहले शिवजोका दर्शन करेंगे, ऐसा विवाद किया था, हे राजन्! हे भारत! उनलोगोंने ऐसाही विवाद किया था, हे राजन्! हे भारत! वे लोग ऐसाही विवाद करते हुए आगेको चले, हे महाराज! तब योगोश्वर शिवजीनेभी महात्मा ऋषियोंके क्रोधको अप्रकाश करनेके निमित्त सब ऋषियोंके आगे अपने अनेक स्वरूप बनाया और उनको सब ऋषि अलग अलग देखकर कहने लगे कि शिवको हमने पहले देखा। अनन्तर उन महात्मा मुनियोंकी परम भक्तिसे शिव प्रसन्न हुए और ऐसा वरदान दिया कि आजसे तुमलोगोंका धर्म्म बढ़ेगा। हे पुरुषव्याघ्र! उस रुद्रकोटि तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुष पवित्र होता है, और अश्वमेधका फल मिलता है, तथा कुलकाभी उद्धार होजाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे लोकविख्यात सरस्वतीके सङ्गमको जाय, जहां चैत्र शुक्ल चतुर्दशीके दिन विष्णुकी उपासना करनेके लिये ब्रह्मादिक देवता और तपस्वी ऋषिलोग आते हैं। हे महाराज! वहां स्नान करके बहुत सुवर्णको पाता है, और ब्रह्मलोकको जाता है और सब पापोंसे शुद्ध होजाता है। हे नरनाथ! वहां ऋषियोंके यज्ञ समाप्त हुए थे, वहां रहनेसे हजार गो दानका फल होता है।

८२ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्यमुनिबोले, हे राजेन्द्र! वहांसे प्रशंसित कुरुक्षेत्रको जाय, जहांके दर्शनहीसे सब प्राणी पापोंसे छूट जाते हैं, जो कोई सदा यही कहता रहै कि मैं कुरुक्षेत्रको जाऊंगा, वहां बसूंगा वह सब पापोंसे छूट जाता है,

वायुसे उड़तो ज्जई वहांकी धूलभी यदि पापीके शरीरसे लग जाय तो सब पापोंसे छुड़ाकर परम गतिको पज्जंचातो है। सरस्वतीसे दक्षिण और दृषद्वतीसे उत्तर कुरुक्षेत्रमें जो पुरुष बसते हैं, वह सब स्वर्गवासी हैं। हे युधिष्ठिर! वहां धीर पुरुष एक महीना रहे, जहां ब्रह्मादिक देवता, ऋषि, सिद्ध, चारण, गन्धर्व्व, अप्सरा, यक्ष, और सर्पलोग निवास करते हैं। हे भारत! वहींसे वे लोग महा पवित्र ब्रह्मक्षेत्रको जाते हैं। हे युधिष्ठिर! जो मनसेभी कुरुक्षेत्रकी इच्छा करते हैं, वे सब पापोंसे छूटकर ब्रह्मलोकको जाते हैं। हे कुरुनन्दन! श्रद्धायुक्त कुरुक्षेत्रमें जानेसे पुरुषको अश्वमेध और राजसूयका फल होता है, वहां मचक्रुक नामक यक्ष द्वारपालको नमस्कार करनेसे हजार गोदानका फल होता है, हे धर्म्मज्ञ! वहांसे अति उत्तम सतत नामक विष्णुके स्थानको जाय, हे राजेन्द्र! वहां सदाही नारायण वास करते हैं, वहां तोनलोकके कर्त्ता विष्णुको प्रणाम करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है, और विष्णुलोकभी प्राप्त होता है। हे भारत! वहांसे चलकर तीनलोक विख्यात परिप्लव नामक तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम और अतिरात यज्ञ का फल प्राप्त होता है। हे नरनाथ! वहांसे पृथिवीतीर्थ में जाकर हजार गोदानका फल लाभ करे। आगे तीर्थसेवो पुरुष सालूकिनो तीर्थमें जाय। वहां दशाश्वमेधमें स्नान करनेसे दश अश्वमेधका फल प्राप्त होता है। आगे सर्पोंके उत्तम तीर्थ नागदेवोमें जाय वहां जानेसे अग्निष्टोमका फल और नागलोक मिलता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे तरन्तु नामक द्वारपाल तीर्थको जाय वहां एक रात्रि रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। वहांसे पञ्चनद (पञ्जाब) देशमें जाकर कोटि तीर्थमें स्नान करै वहां अश्वमेधका फल होता है। अश्विनी कुमार तीर्थमें जानेसे पुरुष रूपवान होजाता है। वहांसे उत्तम वाराह तीर्थमें जाय, जहां वाराह रूपधारी विष्णुने वास किया था। हे नरश्रेष्ठ! वहां स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे जयन्तीमें जाकर सोमतीर्थका स्नान करे, वहां पुरुषको राजसूय यज्ञका फल मिलता है, यहां हंस तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। हे नराधिप! आगे तीर्थसेवी पुरुष कृतशौच तीर्थमें जाय वहां जानेसे कमलको प्राप्त होता है; और पवित्र होजाता है, वहांसे महात्मा शिवमुञ्जवट नामक स्थानको जाय, वहां एकरात रहनेसे गणेशका पद मिलता है, वहीं विख्यात यक्षिनी तीर्थ हैं, उसमें स्नान करनेसे पुरुष सब कामोंको प्राप्त होता है। हे भरतर्षभ! वही कुरुक्षेत्रका द्वार है आगे प्रदक्षिणा करके वहां स्नान करे आगे पुष्कर सम्मितो तीर्थमें स्नान करे, वहां पितर और देवतोंका तर्पण करे, वहीं यमदग्निके पुत्र महात्मा परशुरामने भारी काम किया था, हे राजन्! वहां जानेसे पुरुष कृतकृत्य हो जाता है, और अश्वमेधका फल मिलता है। आगे तीर्थसेवी पुरुष सावधान होकर रामसरमें स्नान करै, हे राजेन्द्र! तेजस्वो परशुरामने वहीं शीघ्रता सहित क्षत्रियोंको मारकर पांच तड़ाग बनाये हैं, हे पुरुषव्याघ्र! यह बात विदित है, कि उन्हीं तड़ागोंको परशुरामने रुधिरसे भरकर अपने पितर और पूर्व्व पितरोंका तर्पण किया था, तब उनके पितर उनसे प्रसन्न होकर बोले, हे राम! हे महाभाग! हे भार्गव! हे विभो! हे महातेजस्वो! हम तुम्हारे इस पितृभक्ति और पराक्रमसे बज्जत प्रसन्न ज्जए। हे महाभाग! तुम्हारा कल्याण हो, जो तुम्हारी इच्छा हो वरदान मांगो, हे राजेन्द्र! शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ परशुरामने आकाशमें खड़े

हुए पितरोंके ऐसे वचन सुनकर हाथजोड़कर कहा, यदि आपलोग मुझसे प्रसन्न हुए हैं, और मेरे ऊपर कृपा करना चाहते हैं, तो मैं आपकी प्रसन्नता चाहता हूं और पुनः आपलोगोंके तर्पण करनेकी इच्छा रखता हूं और यहभी वरदान मांगता हूं कि, मैंने जो क्रोधमें भरकर क्षत्रियोंका नाश किया है,आप लोगोकी कृपासे उस पापसे छूट जाऊं और मेरे यह तालाब जगत् विख्यात तीर्थ होजायं. परशुरामके ऐसे उत्तम वचन सुनकर पितरलोग परम प्रसन्न होकर आनन्दके सहित बोले, हमारे आशीर्व्वादसे तुम्हारा तप बढ़े और तुमने क्रोधमें भरकर जो क्षत्रियोंका नाश किया है, तुम उस पापसे छूट गये क्योंकि वे लोग अपने कर्म्मसे मरे हैं; और तुम्हारे यह तालाब निःसन्देह तीर्थ होजायंगे। जो कोई तुम्हारे इन तीर्थोंमें स्नान करके अपने पितरोंका तर्पण करेगा उसको पितर लोग प्रसन्न होकर जगत्में दुर्लभ कामनाको देंगे और सनातन स्वर्गमें पहुंचावेंगे। पितर लोग इस प्रकार परशुरामको वरदान देकर रामसे वार्त्तालापकर, वहां अन्तर्धान होगये। हे राजेन्द्र! महात्मा भृगुवंशी परशुरामके तीर्थोंमें इस प्रकार स्नान करके ब्रह्मचारी और व्रतधारी हो परशुरामकी पूजाकर बहुत सुवर्णको प्राप्त करता है। हे कुरुद्वह! वहांसे वंशमूलक तीर्थमें जाय, वहां स्नान करनेसे वंशका उद्धार होता है, वहांसे यशोधन तीर्थमें जाय, हे भरतसत्तम! उसमें स्नान करनेसे निःसन्देहही शरीर शुद्ध हो जाता है। शरीर शुद्ध होनेसे उत्तम और शुभ लोकोंकी प्राप्ति होती है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे तीनलोक विख्यात लोकोद्धार तीर्थमें जाय, जहां पहले जगतकर्त्ता विष्णुने लोकोंको धारण किया था। हे राजन्! उस उत्तम तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुष अपने लोगोंका उद्धार करता है, वहांसे मन स्थिर करके श्रीतीर्थमें स्नान करे, वहां देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे उत्तम लक्ष्मी मिलती है, आगे ब्रह्मचारी हो मनको स्थिर कर कपिला तीर्थमें जाय वहां स्नान करके पितर और देवतोंकी पूजा करे तो सहस्र कपिला गौके दानोंका फल मिलता है, फिर मन स्थिर करके पितर और देवतोंकी पूजा करे इससे अग्निष्टोम यज्ञका फल और सूर्य्य लोक मिलता है। आगे गोभवन तीर्थमें जाकर तीर्थसेवी पुरुष क्रमसे स्नान करे, तो हजार गोदानका फल पाता है। हे कुरुनन्दन! वहांसे तीर्थसेवी पुरुष शाकम्भरी तीर्थको जाय, वहां देवीके स्थानमें स्नान करनेसे उत्तम रूप मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे द्वारपाल मरत्तुक स्थानको जाय, यह तीर्थ सरस्वतीमें महात्मा यक्षराजका स्थान है। हे राजन्! उसमें स्नान करनेसे पुरुषको अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम पुरुष (ब्रह्मावर्त्त) विठुर तीर्थको जाय, वहां स्नान करनेसे पुरुषको ब्रह्मलोक मिलता है, हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम सुतीर्थकको जाय, वहांपर सदाही पितर और देवता निवास करते हैं। पितर और देवतोंका पूजक पुरुष वहां स्नान करे, तो अश्वमेधका फल और पितरलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! अम्बुमतिके बीचमें स्नान करके काशीश्वर तीर्थमें स्नान करे, तो सब दुःखोंसे छूटकर ब्रह्मलोकको जाता है, हे राजन्! वहीं मातृतीर्थमें स्नान करना चाहिये। उसमें स्नान करनेसे सन्तान और भारी धन बढ़ता है! आगे नियमधारी जिताहारी पुरुष शीत वनमें जाय, हे महाराज! उसमें महा तीर्थ है, जो अन्य पुरुषोंको दुर्लभ है, हे नरनाथ! वह जाते हुएही देखने मात्रसे पुरुषको पवित्र कर देता है। हे भारत! उसमें बार धोनेसे पुरुष पवित्र होता है। हे महाराज! वहां जो तीर्थ है, उसका नाम स्वाविल्लोमाप

है उसमें विद्वान् तीर्थपरायण मुनिलोग स्नान करके परम प्रसन्न होते हैं। हे राजेन्द्र! पवित्र आत्मावाले मुनीश्वर उस तीर्थमें प्राणायामोंके द्वारा अपने रजोंको दूर करके पवित्र हो मोक्ष पाते हैं, हे पुरुषसिंह उसही स्थानमें दशाश्वमेध नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे पुरुष मोक्ष पाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकर विख्यात मानस तीर्थमें जाय, जहां व्याधका सर लगनेसे तैरते हुए हरिन मनुष्य होगये थे, उस तीर्थमें ब्रह्मचारी और सावधान चित्त होकर स्नान करनेसे पुरुष सब पापोंसे छुटकर स्वर्गमें जाता है, हे पृथ्वीनाथ! मानस तीर्थसे एककोस पूर्व्वकी ओर सिद्ध सेवित आपगा नाम नदी है, वहां जाकर जो पुरुष देवता और पितोरोंका श्राद्ध करके समई खाता है, उसे बहुत फल होता है, वहां एक ब्राह्मणको भोजन करानेसे करोड़ ब्राह्मणोंका फल होता है, वहां स्नान देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे और एक रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे भारत! वहांसे चलकर ब्रह्मोदुम्बर नामक ब्रह्माके उत्तम स्थानपर जाय, हे राजेन्द्र! हे नरनाथ! वहां सप्तऋषियोंके और महात्मा कपिलके कुण्डमें स्नान करके पवित्र हो मनको स्थिरकर ब्रह्माके दर्शन करने चाहिये, उनका दर्शन करनेसे सब पाप छुटकर ब्रह्मलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे जाकर दुर्लभ कपिस्थल कुण्डमें स्नान करे, तो सब पाप जलकर अन्तर्धान होजाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकर लोक विख्यात शरक तीर्थपर जाय, वहां कृष्णपक्षकी चतुर्दशीमें शिवका दर्शन करनेसे सब कामोंको प्राप्त करसे स्वर्गको जाता है। हे कुरुनन्दन! स्वर्गतीर्थमें तीन करोड़ तीर्थ इकट्ठे हैं, वहां रुद्रकोटि कुए और तालावोंमें स्नान करना चाहिये। हे भरतसत्तम! वहीं इलास्पद नामक तीर्थ है, वहां स्नान, पितर और देवतोंकी पूजाकरनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और वाजपेय यज्ञका फल मिलता है। हे पृथ्वीनाथ! किम्दान और किञ्जप्य नामक तीर्थोंमें स्नान करनेसे अनन्त जय और दानका फल मिलता है। हे भारत! जितेन्द्रिय श्रद्धावान पुरुष को स्पर्श करके कलशी तीर्थमें स्नान करै तो अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है। हे भरतश्रेष्ठ! शरक तीर्थके पूर्व्वकी ओर महात्मा नारदका तीर्थ है, जिसका प्रसिद्ध नाम अम्बाजन्म है, उस तीर्थमें स्नान करके प्राण छोड़नेसे नारदकी आज्ञासे पुरुष उत्तम लोकोंको जाता है, शुक्लपक्ष की दशमीको पुण्डरीक तीर्थमें जाकर स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल मिलता है। हे महाराज! यहांसे त्रिविष्टप नामक लोक विख्यात तीर्थको जाय, वहां पाप नाशिनी तारिणी नामक प्रसिद्ध नदी बहती है, उसमें स्नान करके शूलधारी शिवकी पूजा करनेसे सब पापोंसे छूट पुरुष मोक्षको प्राप्त होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम फलकी वनमें जाय, वहां सदाही देवता लोग रहते हैं, वे लोक सहस्रों वर्षतक महा तप करते हैं, वहां दृषद्वती नदीमें स्नान करके देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे अग्निष्टोम और अतिरात यज्ञका फल मिलता है, हे भरतसत्तम! यह सब देवतोंका तीर्थ है। आगे पाणिखात तीर्थमें स्नान करके पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे पुरुषको हजार गो दानका फल मिलता है। हे भारत! वहां स्नान करनेसे अग्निष्टोम, अतिरात राजसूय यज्ञोंका फल और ऋषिलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम मिश्रक तीर्थमें जाय। हे राजशार्दूल! हमने सुना है, कि महात्मा व्यासने ब्राह्मणोंके निमित्त उस तीर्थमें सब तीर्थोंको मिला दिया है, जिस पुरुषने मिश्रकमें स्नान किया, मानो उसने सब तीर्थमें स्नान कर लिया, वहांसे चलकर

नियमधारी जिताहारी पुरुष व्यासके वनमें जाय, वहां मनोजव तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे पवित्र पुरुष मधुवटी तीर्थमें जाकर देवी तीर्थमें स्नान करै, वहां देवता और पितरोंको पूजा करनेसे देवीकी आज्ञासे हजार गोदानके फलको पाता है। हे भारत! जो दृषद्वती और कौशिकी-के सङ्गममें आहारको जीतकर स्नान करता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है आगे व्यास स्थली नामक तीर्थमें जाय जहां बुद्धिमान व्यासने पुत्रशोकसे व्याकुल होकर शरीर छोड़-नेकी इच्छा करी थी, और देवतोंने पुनः उठाया था, हे राजेन्द्र! उस स्थानमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे त्रिलो-चन नामक कुए पर जाकर तिल दान करनेसे सब ऋणोंसे छूट कर मोक्षको प्राप्त करता है। हे महाराज! वेदी तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल मिलता है। हे पुरुषसिंह! आगे हय और सुदिन नाम दो तीर्थ लोक विख्यात हैं, उनमें स्नान करनेसे सूर्य्यलोक मिलता है, आगे मृगधूम नामक लोकविख्यात तीर्थमें जाय। हे राजन्! वहां गङ्गामें स्नान करनेसे और शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। देवीके तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल मिलता है, वहांसे तीनों लोकमें विख्यात वामनक तीर्थमें जाय, वहां विष्णुपदमें स्नान करके जो पुरुष वामनकी पूजा करता है, वह सब पापोंसे शुद्ध हो विष्णु लोकको जाता है, कुलम्पुन तीर्थमें स्नान करनेसे कुल पवित्र होता है। आगे मरुतोंके पवन तड़ागमें स्नान करनेसे विष्णुलोक मिलता है। देवतोंके तीर्थमें स्नान करके इन्द्रकी पूजा करनेसे देवतोंके प्रतापसे स्वर्गलोक मिलता है। हे नरवरश्रेष्ठ! हे पुरुष व्याघ्र! शालिहोत्र और शालि सूर्य्य नामक तीर्थोंमें विधिपूर्व्वक स्नान करनेसे गोदानका फल होता है। हे नरश्रेष्ठ! हे भरत-सत्तम सरस्वतीके श्रीकुञ्ज नामक तीर्थ में स्नान करनेसे पुरुषको अग्निहोत्र यज्ञका फल होता हैं। हे कौरव! वहां से नैमिषारण्यको जाय हे राजेन्द्र! वहां नैमिषारण्यवासी तपस्वी लोग तीर्थयात्राके अभिप्रायसे पहले कुरुक्षेत्रको जाते थे, हे भरत सत्तम! जिस श्रीकुञ्जमें ऋषि-योंको बड़ा सन्तोष प्राप्त होता है, उस कुञ्जमें स्नान करनेसे मनुष्यको अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहांसे कन्या तीर्थ पर जाना चाहिये, कन्या तीर्थमें स्नान करनेसे दो हजार गोदान-का फल मिलता है। वहांसे ब्रह्माके तीर्थ पर जाय, वरदाणावरमें स्नान करके मनुष्य ब्राह्मण हो जाता है, शुद्धात्मा ब्राह्मण परम गतिको पाता है, हे नरश्रेष्ठ! वहांसे सोम तीर्थमें जाय, सोम तीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्य चन्द्र-लोकमें जाता है। हे नरपाल! वहांसे सप्त सारस्वत तीर्थमें जाय, जहां जगत् प्रसिद्ध महर्षि मङ्कण नामक ऋषि रहते हैं,। पहले समयमें मङ्कणक ऋषिके हाथमें कुशका कांटा लगनेसे शाकका रस निकला था, वह ऋषि शाकरसको देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ और नाचने लगा, उसे नाचता देखकर चर और अचर जो कुछ वहांपर थे सब नाचने लगे, तब ब्रह्मादिक देवतोंने महादेवसे विनती करी कि महाराज आप ऐसा उपाय कीजिये जिससे वह ऋषि न नाचे, महादेव उस नाचते हुए ऋषिके पास आये और देवतोंकी हितकामनासे ऋषिसे बोले, हे धर्म्मज्ञ महर्षि! तुम किसवास्ते नाचते हो? कौन सा तुमको आनन्द मिला है? ऋषि बोले, धर्म्ममार्गमें स्थित हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! तुम क्या नहीं देखते हो कि मेरे हाथसे शाक-का रस निकला जिसको देखकर मैं बड़े आन-न्दके साथ नाच रहा हूं, हंसकर महादेव उस ऋषिसे बोले, हे ब्राह्मण! मैं तो इसे देखकर

कुछ आश्चर्य नहीं मानता, हे नरश्रेष्ठ! ऐसा कहके बुद्धिमान महादेवने अपनी अंगुलीसे अपने अंगूठेको काटा अङ्गूठेमेंसे बर्फके समान सफेद भस्म निकली, उसको देखकर वह ब्राह्मण बहुत लज्जित हुआ और पैरोंमें गिरा, कहने लगा मैं आपसे उत्तम किसीको नहीं जानता, देव और दानवोंकी तुम्ही गति हो, हे शूलधारी! तुम्ही इस चराचर जगत्‌को प्रलयमें नाश करते हो, तुमको देवता लोगभी नहीं जान सकते हैं मेरी क्या कथा है। हे पाप रहित! सब ब्रह्मादिक देवता तुमहीको देखते हैं, हे लोकेश! तुमहीं सब लोकोंके कर्त्ता करानेवाले और सर्व्वरूप हो। तुम्हारेही आश्रयसे सब देवता लोग भय रहित होकर आनन्द करते हैं, ऐसे स्तुति करके ऋषि महादेवसे बोले, हे महादेव! तुम्हारी कृपासे मेरा तप नष्ट न हो। ब्रह्मर्षिके वचन सुन महादेव प्रसन्न होकर बोले, हे ब्राह्मण! हमारे प्रसादसे तुम्हारा तप सहस्र गुणा बढ़े, हे महामुनि! हम आजसे तुम्हारे सहित इस आश्रममें वास करेंगे, जो पुरुष सप्त सारस्वत तीर्थमें स्नान करके मेरी पूजा करेंगे, उनको इसलोक और परलोकमें कोई वस्तु दुर्लभ न होगी, वे लोग निःसन्देह सरस्वतीके लोकमें जायँगे। ऐसा कहकर महादेव वहीं अन्तर्धान हो गये। हे भारत! वहांसे तीनलोक विख्यात औषनश तीर्थमें जाय, जहां शक्रके हितकी इच्छासे ब्रह्मादिक देवता तपस्वी ऋषि और भगवान कार्त्तिकेय नित्य नित्य संध्यामें निवास करते हैं। हे पुरुषव्याघ्र! वहांसे सब पाप नाशन कपालमोचन तीर्थमें जाय वहां स्नान करनेसे सब पाप छूट जाते हैं, हे पुरुषसिंह! वहांसे अग्नि तीर्थमें जाय, वहां स्नान करनेसे अग्निलोक मिलता है, और कुलका उद्धार होता है। हे भरतसत्तम! वहीं विश्वामित्रका तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे पुरुष ब्राह्मण हो जाता है, ब्राह्मणके यहां जन्म लेकर पवित्र हो मनको स्थिरकर उसमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोकमें जाता है, और निःसन्देह सात पुरुषोंको पवित्र करता है, हे राजेन्द्र! हे नरपाल! वहांसे तीनलोक विख्यात कार्त्तिकेयके पृथूदक तीर्थमें जाय वहां नहाकर पितर और देवतोंकी पूजा करे, पुरुष या स्त्रीने जाने या विना जाने मनुष्य बुद्धिसे जो कुछ पाप किया हो वह सब वहां स्नान करनेहीसे नष्ट हो जाता है हे भारत! उसमें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और स्वर्गलोक मिलता है। ऋषियोंने कुरुक्षेत्रको पवित्र कहा है, कुरुक्षेत्रसे सरस्वती सरस्वतीसे तीर्थ और तीर्थोंसे भी पृथूदक तीर्थ पवित्र है। जो जप करता हुआ उत्तम पृथूदकतीर्थमें प्राण छोड़ता है वह मरनेके दुःखको फिर नहीं भोगता। हे राजन्! सनत्कुमार शक्ति और महात्मा व्यासने ऐसाही कहा है, अतएव नियमधारी पुरुष पृथूदक तीर्थमें जाय, हे कुरुकुल श्रेष्ठ! पृथूदकसे अच्छा तीर्थ कोई नहीं है, वह बुद्धिको बढ़ाता है और पवित्र है। हे नरश्रेष्ठ! महात्मा लोगोंने कहा है कि पृथुदक तीर्थमें स्नान करनेसे पापी पुरुष भी स्वर्गको चले जाते हैं, हे राजन्! हे भरत सत्तम? वहीं मधुस्रव नामक तीर्थ है, उसमे स्नान करनेसे हजार गौका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे कर्मके अनुसार पवित्र लोग विख्यात सरस्वती और अरुणाके सङ्गममें जाय, वहां तीन दिन व्रत करके रहनेसे ब्रह्महत्यासे छूट जाता है, अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है। हे भरतसत्तम! वहां स्नान करनेसे पुरुषके सात पुरुषा पवित्र होते हैं। हे कुरुकुलश्रेष्ठ! वहीं अर्द्धकील नामक तीर्थ है, उन तीर्थको ब्राह्मणोंके हितकी इच्छासे दर्भीने बनाया था, वहां व्रत और उपनयन

अथवा उपवास करनेसे क्रुपा और मन्त्रोंसे युक्त होनेसे पुरुष ब्राह्मण हो जाता है, और जो मन्त्र और क्रुपासे हीन पुरुषभीहों वेभो स्नान करनेसे चीर्णव्रती और विद्वान् हो जाते हैं, यह बूढ़े आदमियोंका देखा हुआ है, हे नरश्रेष्ठ! उस तीर्थमें दर्भोंने चारों समुद्र मिला दिये हैं, वहां स्नान करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और उस पुरुषको चार हजार गोदानका फल होता है। हे धर्मज्ञ! वहांसे सतसहस्र नामक तीर्थको जाय, वहीं लोक विख्यात सत और सहस्रक नामक दो तीर्थ हैं, दोनोंहोमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहां जो कुछ दान वा व्रत करते हैं, वह हजार गुणी होजाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम रेसाका तीर्थमें जाय, वहां पितर और देवताकी पूजा करनेवाला पुरुष स्नान करै तो सब पापोंसे शुद्ध होकर अग्निष्टोम यज्ञका फल प्राप्त होता है। आगे क्रोध और और इन्द्रियोंको जीतकर विमोचन तीर्थका स्पर्श करै वहां स्नान करनेसे दान लेनेके सब पाप छुट जाते हैं। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर पञ्चवटी तीर्थमें जाय, वहां जानेसे बहुत पुण्य होता है, और स्वर्गलोक मिलता है, जहां साक्षात् योगेश्वर वृषवाहन शिव निवास करते हैं। उनकी पूजा करनेसे और वहां जानेहोसे पुरुष सिद्ध हो जाता है। आगे अपने तेजसे प्रकाशित तेजसे और वारुणातीर्थमें जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता और तपोधन मुनियोंने मिलकर देवतोंके सेनापति स्वामकार्त्तिकका अभिषेक किया था, हे कुरुकुलश्रेष्ठ! तैजस तीर्थसे पूर्व्वकी ओर कुरु तीर्थ है, उसमें ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर स्नान करनेसे सब पापोंसे शुद्ध हो पुरुष ब्रह्मलोक को जाता है। आगे नियमधारी और जिताहारी होकर स्वर्गद्वार तीर्थमें जाय, वहां जानेसे स्वर्गलोक और ब्रह्मलोकमें जाता है, हे नरनाथ! वहांसे तीर्थसेवी पुरुष अनरक तीर्थ को जाय, हे राजन्! वहां स्नान करनेसे पुरुष दुर्गतिमें नहीं पड़ता। हे राजन्! वहां साक्षात् ब्रह्मा नारायणादि सब देवतोंके सहित निवास करते हैं। हे राजेन्द्र! हे कुरुकुलश्रेष्ठ! वहीं पार्व्वतीका स्थान है, उनके दर्शन करनेसे पुरुष दुर्गतिमें नहीं पड़ता है। हे राजन्! वहीं साक्षात पार्व्वतीनाथ शिवके दर्शन करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है। हे शत्रुनाशन! वहांसे जाकर पद्मनाभ नारायणके दर्शन करे, उनके दर्शन करनेसे पुरुष प्रकाशमान होकर विष्णुलोकको जाता है। आगे सब देवतोंके तीर्थमें स्नान करे, हे पुरुषसिंह! ऐसा करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट चन्द्रमाके समान प्रकाशित होता है। हे नरनाथ! तीर्थसेवी पुरुष स्वस्तिपुरको जाय, वहां प्रदक्षिणा करनेसे हजार गोदान का फल होता है। हे राजन! आगे पावन तीर्थमे जाय, वहा जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे भरतर्षभ, वहीं गङ्गाह्रद नामक कुवां है, हे पृथ्वीनाथ! उसमें तीन करोड़ तीर्थ पड़े हैं। हे राजन्! उससे स्नान करनेसे पुरुषको स्वर्गलोक प्राप्त होता है। हे राजन्! आगे नदियोंमें स्नान और शिवकी पूजा करनेसे गणेशका पद मिलता है, और कुलका उद्धार होता है, आगे तीन लोकमे विख्यात स्थाणुकटङ्कको जाय, वहां स्नान करनेसे और एक रात्री रहनेसे शिवलोक मिलता है। आगे वदरीपालन तीर्थमें जाय, वहां वशिष्टमुनिका आश्रम है, वहा तीन दिन व्रत करके बेरखाना चाहिये, और जो पुरुष बारह वर्ष निरन्तर बेरही खाता रहे उसको उतनाहो फल होता है, जितना उस तीर्थमें तीन दिन व्रत करनेसे, वहां रहकर जो सत्य बोले और नियमधारी होय तो ब्रह्मलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे

तीनलोक विख्यात तेजराशि महात्मा सूर्यके स्थान पराजयको जाय वहां स्नान करके सूर्य्यकी पूजा करनेसे पुरुष सूर्य्यलोकको जाता है, और अपने कुलका उद्धार करता है, हे नरनाथ! तीर्थ सेवी पुरुष आगे जाकर सोम तीर्थमें स्नान करे, उसमें स्नान करनेसे पुरुषको निःसन्देह चन्द्रलोक मिलता है। हे धर्मज्ञ! वहांसे दधीच मुनिके आश्रमपर जाय हे राजन्! यह तीर्थ तीनलोकोंमें बिख्यात और परम पवित्र है, इसी तीर्थमे स्नान करनेसे तपस्याके समुद्र अङ्गिरामुनि विद्वान होगये थे, उस तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है, और निःसन्देह सारस्वत गति प्राप्त होती है। वहांसे नियमधारी ब्रह्मचारी जिताहारी पुरुष कन्या तीर्थमें आकर तीन दिन व्रत करे, ऐसा करनेसे दिव्य सौ कन्या और स्वर्गलोक मिलता है। हे धर्मज्ञ! वहांसे सन्निहती तीर्थको जाय, जहां बहुत पुण्यवान ब्रह्मादिक देवता और तपोधन मुनि महीने महीने आते हैं, चन्द्रग्रहणमें कुरुक्षेत्रमें स्नान करनेसे सौ अश्वमेध का फल होता है, और सब इच्छा पूर्ण होती है। हे नरनाथ! जितने पृथ्वी और आकाशमें तीर्थ हैं, वे सब नदी, कुण्ड, तड़ाग, झरने, तलैया और बावड़ी तथा अन्य तीर्थभी निसन्देह अमावसके दिन प्रति मास कुरुक्षेत्रमें आते हैं, इसी निमित्त कुरुक्षेत्रका दूसरा नाम सन्निहिती है, पुरुष उसमें स्नानकर और जल पी ब्रह्मलोकमें जाता है! सूर्य्यग्रहणकी अमावसमें जो को कोई वहां श्राद्ध करता है, उसका फल सुनो; उत्तम रीतिसे करी हुई हजार अश्वमेध यज्ञोंका फल उस पुरुषको केवल स्नान करनेसे मिलता है। पुरुष वा स्त्रीने जो कुछ पाप किया हो सो निःसन्देह स्नान करनेसे नष्ट होजाता है। और पद्मके रङ्गवाले विमान पर बैठकर ब्रह्मलोकको जाता है। आगे द्वारपाल मचकुन्द नामक यक्ष को प्रणाम करके कोटि तीर्थमें स्नान करनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है। हे भरत सत्तम! वहीं गङ्गाह्रद नामक तीर्थ है, उसमें धर्म जाननेवाला ब्रह्मचारी पुरुष सावधान होकर स्नान करनेसे पुरुषको राजसूय और अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। पृथ्वीमें नैमिषारण्य आकाशमें पुष्कर और कुरुक्षेत्र तीनों लोकमें श्रेष्ठ है। कुरुक्षेत्रकी धूल जो वायुसे उड़ती हैं, उससेभी महापापी पुरुष मोक्ष पा सकता है सरस्वतीके दक्षिण और दृषद्वतीके उत्तर कुरुक्षेत्रमें जो पुरुष निवास करते हैं, वे स्वर्गवासी हैं, जो पुरुष एकवारभी कहे कि मैं कुरुक्षेत्रको जाऊंगा और वहां निवास करूंगा वह सब पापोंसे छूट जाता है। कुरुक्षेत्र पवित्र ऋषियोसे सेवित और ब्रह्मवेदी है, उसमें जो पुरुष रहते हैं वे सोचने योग्य नहीं हैं। तरन्तुक, परशुरामके तड़ाग और मचकुक तीर्थका जो बीच है, उसी पवित्र भूमिका नाम कुरुक्षेत्र है, इसीको समन्तपञ्चकभी कहते हैं। यह ब्रह्माकी उत्तर वेदी है।

८६ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्य मुनि बोले, हे महाराज! वहांसे उत्तम तीर्थपर जाय, जहां महाभाग धर्मने उग्र तपको किया था और उन्होंहीने इस पवित्र तीर्थको अपने नामसे विख्यात किया है, वहां स्नान करनेसे धर्म्मवान और सावधान पुरुष अपने सात कुलको पवित्र करता है। हे राजेन्द्र! वहांसे ज्ञानपावन तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल और मुनिलोक मिलता है, हे राजन्! वहांसे सौगन्धिक वनको जाय वहां ब्रह्मादिक देवता, तपोधन ऋषि, सिद्ध, चारण, गन्धर्व्व, किन्नर, और सर्प लोग निवास करते हैं, पुरुष वहां प्रवेश करनेसे सब पापोंसे छूट जाता है, हे राजन्! वहांसे नदियोंमें श्रेष्ठ प्लक्षा देवी नाम पवित्र सरस्वतीमें स्नान करे, वह जल

एक विलसे निकलता है, वहां पितर और देवतोंकी पूजा करने से अश्वमेधका फल मिलता है, वहीं अत्यन्त दुर्लभ ईशानाध्युषित नामक तीर्थ वल्मीकसे छः सम्या (यज्ञमें एक नापनेके लिये दण्ड बनाया जाता है, उसको सम्या कहते हैं) की दूरीपर है, जानेसे पुरुष को हजार कपिला दान और अश्वमेधका फल मिलता है। हे पुरुषव्याघ्र! हमने यह भविष्य पुराणादिक पुस्तकोंमें सुना है, कि इस तीर्थमें जाकर सुगन्धा, शतकुम्भा और पञ्च यज्ञा आदि तीर्थोंमें जानेसे स्वर्ग लोक मिलता है; हे राजन्! वहीं त्रिशूलखात नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करके देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे मरनेके पश्चात् निःसन्देह गणेशका पद मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम तीनलोकोंमें विख्यात उत्तम शाकम्भरी देवीके स्थानपर जाय, जहां दिव्य हजार वर्षतक व्रतधारिणी भगवतीने एक एक महीनेमें शाक खाके तप किया था। हे भारत! देवीकी भक्तिसे पूरित तपोधन मुनीश्वर वहां आये, भगवतीने उसी शाकसे उनकाभी सत्कार किया, उसी दिनसे उस देवीका नाम शाकम्भरी हुआ। शाकम्भरी देवीमें जाकर पुरुष पवित्र सावधान और ब्रह्मचारी होके तीन दिन शाक खाय, जो पुरुष बारह वर्षतक शाक खाकर रहै उसको जो फल होता है, वही फल वहां तीन रोज शाक खानेसे होता है। हे भारत! आगे तीनलोकमें विख्यात सुवर्ण तीर्थमें जाय, वहां पहले विष्णुने शिवको प्रसन्न करनेके निमित्त तप किया था और देवदुर्लभ वरदानों को पाया था। हे भारत! शिवने प्रसन्न होकर विष्णुसे कहा था कि तुम सबलोकोंके प्यारे होकर कृष्णावतार धारण करोगे। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि सब जगत् तुमहीको प्रधान मानेगा। हे राजेन्द्र! वहां जाकर शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल और गणेशका पद मिलता है, हे राजेन्द्र! आगे धूमावतीमें जाकर तीन दिन व्रत करै, ऐसा करनेसे निःसन्देह मनोवाञ्छा सिद्ध होती है। हे धर्म्मज्ञ! देवीके दहनी ओर रथावर्त्त (चक्र) तीर्थ है, वहां जितेन्द्री और श्रद्धावान होकर उस चक्रके उपर चढ़ै तो परम गतिको प्राप्त होता है। हे भरतकुलसिंह! उसकी प्रदक्षिणा करके सब पाप नाश करनेवाले धारा तीर्थमें जाय, वहां बुद्धिमान पुरुष स्नान करे। हे पुरुषसिंह! हे नरनाथ! ऐसा करनेसे वह पुरुष सोचसे रहित होजाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे महापर्व्वतको प्रणाम करके जो स्वर्गद्वारके समान गङ्गाद्वार नामक तीर्थ है, वहां जाय, वहां सावधान होकर कोटि तीर्थमें स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल मिलता है, और कुलका उद्धार होता है, वहां एक रात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे सप्त गङ्गा त्रिगङ्गा और शक्रावर्त्त तीर्थमें जाय, उन पवित्र तीर्थोंमें विधिवत पितर और देवतोंको पूजा करनेसे उत्तम लोक मिलते हैं। वहांसे चलकर कनखलमें स्नान करे वहां तीन दिन रहनेसे पुरुषको अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे नरनाथ! वहांसे तीर्थसेवी पुरुष कपिला वटको जाय, वहां एकरात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र! आगे महात्मा नागराज कपिलके तीर्थमें जाय, यह तीर्थ तीनों लोकमें विख्यात है, हे नरनाथ! हे कुरुश्रेष्ठ! उस नाग तीर्थमें स्नान करनेसे हजार कपिला गोदानका फल होता है। आगे शान्तनुके उत्तम तीर्थ ललित तीर्थमें जाय, हे राजन्! वहां स्नान करनेसे पुरुषको दुर्गति नहीं होती। जो पुरुष गङ्गा और यमुनाके सङ्गममें स्नान करता है उसको दश अश्वमेधका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे लोकविख्यात सुगन्ध तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुष सब पापोंसे छूट ब्रह्मलोकको जाता

है। हे नरनाथ! वहांसे तीर्थसेवी पुरुष रुद्रावर्त्त तीर्थको जाय वहां स्नान करनेसे स्वर्ग लोक मिलता है। हे नरश्रेष्ठ! आगे सरस्वती और गङ्गाके सङ्गममें जाय, वहांसे आगे चल कर विधि पूर्व्वक भद्रकर्णेश्वर महादेवको पूजा करे, ऐसा करनेसे पुरुषको दुर्गति नहीं होती और स्वर्गलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! आगे तीर्थसेवी पुरुष कुब्जाम्र देशमें जाय, वहां जानेसे हजार गोदानका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे नरनाथ! आगे तीर्थसेवी पुरुष अरुन्धतीवट तीर्थमें जाय, वहां ब्रह्मचारी होकर समुद्रके जलका स्पर्श करे वहां तीन रात रहनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और सहस्र गोदानका फल मिलता है, और कुलका उद्धार होजाता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर ब्रह्मावर्त्त तीर्थको जाय, वहां जानेसे अश्वमेधका फल और चन्द्रलोक मिलता है, वहांसे उस स्थान पर जाय जहांसे यमुना निकली है, और यमुनाके जलसे स्पर्श करनेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। आगे तीनलोक पूजित दर्वीसंक्रमण तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे उस स्थानमें जाय, जहांसे सिन्धु नदी निकली है, वहां पर सिद्ध और गन्धर्व्व रहते हैं, वहां पांच रात रहनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है। आगे पुरुष परम दुर्लभ वेदी तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। वहांसे ऋषिकुण्डमें जाय, वहां वशिष्ठमुनिका दर्शन करे उस वशिष्ठके आश्रमसे चल कर ब्राह्मणलोग ऋषिकुण्डमें जाय वहां स्नान करनेसे पुरुषके सब पाप छुट जाते हैं। वहां पितर और देवतोंको पूजा करनेसे ऋषिलोक मिलता है, हे नरनाथ! यदि शाक खाकर वहां एक महीना रहे तो ऋषिलोक मिलता है, वहांसे भृगुतुङ्ग तीर्थमें जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। आगे वीर प्रमोक्ष तीर्थमें जानेसे सब पाप छुट जाते हैं। हे भारत! यदि उस तीर्थमें मघा और कृतिका नक्षत्रमें जाय तो अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है, वहीं विद्या तीर्थमें सन्ध्या करनेसे और वहां स्नान करके सब पापनाश होते हैं उसी महा आश्रममें रातको रहे, यदि निराहार होकर एक रात वहां रहे तो उत्तम लोक मिलते हैं। दिनके छठें भागमें भोजन करके एक महीना उस स्थानमें रहनेसे सब पापोंसे शुद्ध होता है, और बहुत सुवर्ण मिलता है और दश पहले और दश अगाड़ीके वंशोंका उद्धार होता है। आगे ब्रह्माके स्थान बेतशिकामें जाय, तो अश्वमेधका फल होता है और शुक्राचार्य्यकी जाति मिलती है। आगे सिद्धोंसे सेवित सुन्दरिका तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुषका रूप सुन्दर हो जाता है। यह पुरुषोंने निश्चय किया है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर ब्राह्मणी तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पद्मवर्ण विमान पर बैठकर पुरुष ब्रह्मलोकको जाता है, वहांसे पवित्र ऋषिसेवित नैमिषक्षेत्रमें जाय, वहां देवताके साथ ब्रह्मा सदा बास करते हैं। नैमिषारण्यको ढूंढ़नेसे आधा पाप और जाननेसे सब नष्ट हो जाता है, वहांपर तीर्थसेवी धीरपुरुष एक महीना रहे क्योंकि पृथ्वीमें जितने तीर्थ हैं वे सब नैमिषारण्यमें रहते हैं। हे भारत! यदि जिताहार और नियमधारी होकर वहां स्नान करे तो गोमेध यज्ञका फल होता है, हे भरत सत्तम! जो पुरुष निराहार होकर नैमिषारण्यमें मरता है, उसके सात कुलका उद्धार होजाता है, और महात्मालोग ऐसाभी कहते हैं कि वह सब लोकोंमें जाकर आनन्द करता है। हे भरतसत्तम! नैमिषक्षेत्र नित्य और पवित्र है। आगे वहांसे गङ्गाभेद तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुषको

अश्वमेध यज्ञका फल होता है, और ब्राह्मण होजाता है। आगे सरस्वती नदीमें जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे निःसन्देह सरस्वती लोक मिलता है, वहांसे चलकर ब्रह्मचारी और सावधान हो कर वाहुदा नदीमें स्नान करे, वहां एक रात रहनेसे स्वर्गलोक मिलता है। हे कौरव! वहां रहनेसे देवसत्र नामक यज्ञका फल होता है, वहांसे पुण्यात्मा मुनियोंसे भरी हुई पवित्र सोखती नदीको जाय, वहां पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल होता है, वहांसे ब्रह्मचारी और सावधान होकर विमला वटको जाय, वहां एक रात रहनेसे स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे सरयूके उत्तम तीर्थ गोप्रतार (गुप्तारघाट) को जाय, हे महाराज! जहांसे राम अपने नौकर सेना और वाहनोंके सहित स्वर्गको गये थे, हे महाराज! उस तीर्थके तेज और रामकी कृपासे तथा निश्चयसे उस गुप्तार घाटमें स्नान करनेसे सब पापोंसे शुद्ध होकर स्वर्गलोक मिलता है। हे कुरुनन्दन! आगे गोमतीके राम तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है। हे भरतकुलसिंह! वहीं सतसाहस्रक तीर्थ है, यदि जिताहारी और नियमधारी होकर उसका स्पर्श करे तो पुरुषको हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकार उत्तम भर्तृस्थानको जायतो पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे नरनाथ! यदि कोटि तीर्थमें स्नान करके स्वाम कार्त्तिकी पूजा करे तो हजार गोदानका फल होता है, और वह पुरुष तेजस्वीभी होजाता है, वहांसे काशीपुरीकी जाय, और वहां शिवकी पूजा करे और कपिल कुण्डमें स्नान करनेसे राजसूय यज्ञका फल होता है,। हे कुरुनन्दन! वहांसे अविमुक्तेश्वर तीर्थमें जाय, उन देवका दर्शन करतेही पुरुष ब्रह्महत्यासे छूट जाता है; वहीं प्राण छोड़नेसे मोक्ष होती है, हे राजेन्द्र! आगे दुर्लभ मारकण्डेय तीर्थको जाय, आगे लोक विख्यात गङ्गा और गोमतीके सङ्गममें जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है, वहांसे ब्रह्मचारी और सावधान होकर गयाको जाय, वहां जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, वहीं तीनलोक विख्यात अक्षयवट तीर्थ है, वहां पितरोंके निमित्त जो कुछ दान किया जाता है, सो अक्षय होजाता है वहां महानदीमें स्पर्श करके पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अक्षय लोक होजाता है, आगे धर्म्मवनमें जाकर ब्रह्मसरमें स्नान करे वहां एक रात रहनेसे ब्रह्मलोक मिलता है, उस तालावमें ब्रह्माने उत्तम यज्ञकुण्ड बनाया था, उसकी प्रदक्षिणा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र! तहांसे लोक विख्यात धेनुक तीर्थमें जाय, वहां एक रात रहकर तिलकी गाय बनाकर दान करना चाहिये ऐसा करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट चन्द्रलोकको जाता है। हे राजन्! उस स्थानमें अवतक भी विचित्र गऊका चिह्न बछड़ेके सहित बना है, और वह चिह्न पर्व्वत पर चरती हुई गऊका है। हे भारत! वहीं बछड़े सहित गऊका पादुका अभीतक दीखती है। हे नृपसत्तम! हे राजेन्द्र! वहां उनका स्पर्श करनेसे जो कुछ पाप किया है, सब नष्ट हो जाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे गृध्रवटको जाय, वह वृद्धिमान देवका स्थान है, वहां भस्मसे स्नान करके शिवकी पूजा करनी चाहिये, वहां ब्राह्मण बारह वर्ष तक वकलेके वस्त्र पहन कर व्रत करे तो सब पाप नष्ट हो जाते हैं। वहांसे गीत शब्द युक्त उदात नामक पर्व्वतको जाय, हे भरतकुलसिंह! वह, सावित्रीकी पादुका दीखती हैं। वहां व्रतधारी ब्राह्मण सन्ध्योपसना करे, वह, एकदिन सन्ध्या करनेसे बारहवर्षकी सन्ध्याका फल होता है, वहां

जानेसे पुरुष जन्मके दुःखसे छूट जाता है, जो पुरुष एकमास तक गयामें रहता है, निस्सन्देह उसके कुलका उद्धार होता है, हे राजेन्द्र! यदि एक पुत्रभी गयाको चला जाय और अश्वमेध करे अथवा काली बैलको छोड़ देवे बहुत पुत्रोंकी इच्छा क्यों करे, हे राजन्! वहांसे तीर्थसेवी पुरुष फल्गुको जाय, वहां जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और महासिद्धि मिलती है, हे युधिष्ठिर! हे राजेन्द्र! हे महाराज! वहांसे सावधान पुरुष धर्म्मप्रस्थको जाय वहां सदाही धर्म्मवास करते हैं, वहां कुएंके पानीसे स्नान करनेसे पुरुष पवित्र होता है पितर और देवतोंका तर्पण करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट स्वर्गको जाता है, वहीं पर आत्मदर्शी महामुनि मतङ्गका आश्रम है, उस सुन्दर श्रम और शोकके नाश करनेवाले आश्रममें जानेसे पुरुषको गोमेध यज्ञका फल मिलता है, वहां धर्म्मका स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र! हे पुरुषसिंह! वहांसे ब्रह्माके उत्तम स्थानको जाय वहां ब्रह्माकी पूजा करनेसे अश्वमेध और राजसूय यज्ञोंके फल होते हैं। आगे तीर्थसेवी पुरुष राजगृह तीर्थको जाय वहां तीर्थोंका स्पर्श करनेसे पुरुषको कक्षीवानके समान आनन्द होता है, वहां पवित्र पुरुष यक्षिणीको नैवेद्य लगाके भोजन करे, तो यक्षिणीके प्रसादसे पुरुषकी ब्रह्महत्या छूट जाती है, मणिनाग तीर्थमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र! मणिनाग तीर्थकी उत्पन्न हुई वस्तुओंको जो पुरुष खाता है, उसको सर्प काटनेका विष नहीं चढ़ता, वहां एक रात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे ब्रह्मर्षि गौतमके प्यारे वनमें जाय, वहां अहल्या कुण्डमें स्नान करनेसे मोक्ष मिलती है, गौतमके आश्रममें जानेसे पुरुष अपनी शोभाको प्राप्त करता है। हे धर्म्मज्ञ! वहां तीनलोकोंमें विख्यात एक तड़ाग है, उसमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल होता है, वहांसे आगे राजर्षि जनकका कुवां है, उसकी देवता लोगभी पूजा करते हैं, उसमें स्नान करनेसे विष्णुलोक मिलता है, वहांसे सब पाप नाश करनेवाले विनसन तीर्थको जाय, वहां जानेसे वाजपेय यज्ञका फल और चन्द्रलोक मिलता है, हे धर्म्मज्ञ! वहांसे चलकर सब तीर्थोंके जलसे उत्पन्न गण्डकी नदीको जाय, वहांके जानेसे वाजपेय यज्ञका फल और सूर्य्यलोक मिलता है, वहांसे तीनलोक विख्यात विसल्या नदीको जाय तो अग्निष्टोम यज्ञका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे अधिवङ्ग वनको जाय, वहां जानेसे निःसन्देह गुह्यकोंके सहित आनन्द करता है, वहांसे सिद्ध सेवित कम्पना नदीको जानेसे पुण्डरीक यज्ञका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे पृथ्वीनाथ! माहेश्वरी धारमें जानेसे अश्वमेधका फल मिलता है और कुलका उद्धार होता है। हे नरनाथ! देवपोखरमें जानेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और अश्वमेधका फल होता है। अनन्तर ब्रह्मचारी और सावधान पुरुष सोमपद तीर्थको जाय, वहां महेश्वर पदमें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र! हमने सुना है, कि वहां करोड़ तीर्थ इकट्ठे हैं, पहले उन तीर्थोंको दुरात्मा राक्षस लेगया था तब जगत्कर्त्ता विष्णुने कच्छप रूप धारण करके उससे छीनकर वहीं स्थापन कर दिये हैं। हे युधिष्ठिर! उस तीर्थ कोटिमें स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल और विष्णुलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे नारायणके स्नानको जाय, हे भारत! वहां सदा विष्णु वास करते हैं, जहां ब्रह्मादिक देवता तपोधन ऋषि, आदित्य, वसु और रुद्र, विष्णुकी उपासना करते हैं, वहांपर अद्भुत कर्म्मवाले सालिग्राम नामक विष्णु निवास करते हैं, उस अव्यय, वरदान देनवाले, लोकनाथ विष्णुके दर्शन करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और

विष्णुलोक मिलता है, हे राजेन्द्र ! वहां दान करनेसे सब पाप नष्ट होते हैं, उस कुण्डमें चारों समुद्र वास करते हैं, वहां जलका स्पर्श करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती, वहीं वरदान देनेवाले अव्यय महादेवका स्थान है, उनका दर्शन करनेसे पुरुष ऐसा शोभित होता है, जैसे मेघसे छूटकर चन्द्रमा आगे जातिस्मर तीर्थको स्पर्श करनेसे और स्थिर चित्त तथा पवित्र होकर स्नान करनेसे पुरुष कामदेवके समान हो जाता है, वहांसे माहेश्वरपुरमें जाकर शिवकी पूजा करनी चाहिये, वहां व्रत करनेसे मनकी इच्छा पूरी होती हैं, वहांसे सब पापोंके नाश करनेवाले वावन तीर्थको जाना चाहिये वहां विष्णुके दर्शन करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती। वहांसे कुशिकके आश्रमको जाय, यहस्थान सब पापोंका नाश करनेवाला है, वहां सब पापोंका नाश करनेवाली कौशिकी नदीमें स्नान करने पुरुषको राजसूय यज्ञका फल मिलता है। हे राजेन्द्र ! वहांसे चम्पकारण्यको जाय, वहां एक राति रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे अत्यन्त दुर्लभ ज्योष्टिलतीर्थमें जाकर एकरात रहनेसे हजार गोदान का फल होता है, वहां पार्व्वतीके सहित महातेजस्वी शिवके दर्शन करनेसे पुरुषको मित्रावरुणका लोक मिलता है, वहां तीन रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहांसे कन्या सम्वेद्य तीर्थमें जाय वहां ब्रह्मचारी और स्थिर मन होकर रहनेसे मनु प्रजापतिका लोक मिलता है, हे भरतर्षभ! उत्तम व्रतधारी ऋषियोंने कहा है कि कन्या सम्वेद्यमें जो थोड़ा दानभी देता है, वह अक्षय होता है, वहांसे तीन लोक विख्यात सिवीरि तीर्थमे जाय, वहां जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और विष्णुलोक मिलता है। हे नरशार्दूल! जो पुरुष सिवीरा सङ्गममें कुछ दान देता है, वह दुःख रहित इन्द्रलोकमें जाता है, वहीं तीन लोकमें विख्यात वशिष्ठ मुनिका आश्रम है, उसमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, वहांसे देव और ऋषिसेवित देवकूट तीर्थमें जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और कुलका उद्धार होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे कौशिक मुनिके तड़ागको जाय जहां कुशिकपुत्र विश्वामित्र मुनिको महासिद्धि प्राप्त हुई थी। हे भरतर्षभ! हे वीर! वहां कौशिकीके कुण्डपर एक महीना रहनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, सब तीर्थोंसे उत्तम उस महा तड़ाग पर रहनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती, वहांसे तीन लोक विख्यात अग्निधारा तीर्थ पर जाय उसमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहांसे पर्व्वतके समीप ब्रह्म सरमें जाकर अनादि देव वर देनेवाले विष्णुके दर्शन चाहिये, ब्रह्मसरमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, उसही ब्रह्मसरसे निकल कर जगत्के पवित्र करनेवाली एक धारा है, उसमें स्नान करनेसे पुरुष समझ लेता है कि मैं कृतार्थ हुआ, वहां छटे कालका व्रत करनेसे पुरुष ब्रह्महत्यासे छूट जाता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे तीर्थ सेवी पुरुष तीन लोक विख्यात महादेवो गौरीके शिखर पर जाय, वहां शिखर पर चढ़के स्तनकुण्डमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, वहां स्नान करनेसे पितर और देवताओंकी पूजा करनेवाले पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल और इन्द्रलोक मिलता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर ताम्रारुण तीर्थको जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और ब्रह्मलोक मिलता है। हे नरनाथ! नन्दिनोमें देवकुण्डमें स्नान करनेसे नरमेध यज्ञका फल मिलता है, आगे कालिका कौशिको और अरुणाके सङ्गममें स्नान करके तिन दिन व्रत करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है, वहांसे पण्डित उर्व्वसी तीर्थ सोमाश्रम और कुम्भकर्णाश्रमको जानेसे पुरुष जगत्में पूजाके योग्य हो जाता है, आगे व्रतधारी होकर कोकामुख तीर्थमें जाय, वहां

जानेसे पुरुष कामदेवके तुल्य होजाता है, यह पुराने पुरुषोंने देखा है, ब्राह्मण प्राचीन नदीमें स्नान करनेसे पवित्रात्मा होजाता है, और सब पापोंसे छूटकर इन्द्रलोकमें जाता है, वहांसे पवित्र ऋषभद्वीपमें जाकर क्रौञ्चासुरके मारने वाले स्वाम कार्त्तिकका दर्शन करके सरस्वतीको दर्शन करके सरस्वतीका स्पर्श करनेसे पुरुष विमानमें चढ़कर शोभित होता है। हे महा-राज! वहांसे मुनि सेवित औद्दालक तीर्थमें जाय, वहांसे ब्रह्मर्षि सेवित धर्मतीर्थमें जानेसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है और विमानमें बैठकर पुरुषकी पूजा मिलती है, वहांसे चम्पामें जाकर गङ्गामें स्नान करे और उद्दार्त तीर्थमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है।

८४ अध्याय समाप्त।

पुलस्त्य मुनि बोले, हे राजेन्द्र! वहां उत्तम सन्ध्या तीर्थमें सन्ध्योपासन करे और वहांका जल स्थापन करनेसे पुरुषको निःसन्देह विद्या मिलती है। हे राजन्! जिस तीर्थको पहले रामने अपने प्रभावसे लालकर दिया था, उसमें जानेसे पुरुषको बहुत सवर्ण मिलता है आगे करतोया नदीमें जाकर तीन दिन व्रत करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है, यह नियम प्रजापतिका किया हुआ है। हे राजन्! पण्डित लोग कहते हैं, कि गङ्गा और समुद्रके सङ्गममें स्नान करनेसे दस अश्वमेधका फल होता है, हे राजन्! पुरुष गङ्गाके दूसरे पारमें जाकर स्नान करता है और वहां तीन रोज व्रत करता है, तो वह पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है, वहांसे सब पापोंके नाश करनेवाली वैतरणी नदी पर जाय, वहां विरजा तीर्थमें स्नान करनेसे चन्द्रमाके समान निर्मल होजाता है, सब उसका पाप नष्ट हो जाता है, हजार गोदानका फल मिलता है, और कुलका उद्धार होता है, वहांसे सोणा और ज्योतिरथी नदीके सङ्गममें जाय, वहां पवित्र होकर पितर और देवतोंका तर्पण करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजन्! आगे उस स्थानमें जाय, जहां सोणा और नर्मदा अलग हुई हैं, वहां वंसोंके भुण्डका स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे नरनाथ! आगे कोशल देशमें न जाकर ऋषभ तीर्थमें स्नान करे, वहां तीन दिन व्रत करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, वहां जानेसे हजार गोदानका फल होता है, और कुलका उद्धार हो जाता है, वहांसे कोशला देशमें जाकर काल तीर्थका स्पर्श करे तो निःसन्देह ग्यारह सांड़ छोड़नेका होता है। हे राजन्! पुष्पवतीका स्पर्श करके तीन दिन व्रत करनेसे सहस्र गोदानका फल और कुलका उद्धार होता है, वहांसे बदरिका फल तीर्थमें स्नान करे, हे भरत सत्तम! बदरिका तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषकी दीर्घ आयु होती है, वहांसे चलकर चम्पामें जाय, वहां गङ्गामें स्नान करके दण्ड तीर्थका दर्शन करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे पवित्र पुण्योंसे भरी हुई चपेटिकामें जाय, वहां जानेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, और सब देवता लोग उसको पूजा करते हैं; वहांसे परशुरामके आश्रम महेश्वर पर्व्वत पर जाय, वहां राम तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे कुरुनन्दन! हे कुरुश्रेष्ठ! वहींपर मतङ्गकेदार नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, वहांसे श्रीपर्व्वतमें स्नान करे वहां शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, महातेजस्वी शिव पार्व्वतीके सहित वहीं निवास करते थे और देवतोंके सहित ब्रह्मा वहीं निवास करते थे, वहां पुरुष पवित्र और स्थिर मन होकर देवह्रद स्नान करे तो अश्वमेध यज्ञका फल और परम सिद्धि मिलती है, वहांसे

पाण्ड्य देशमें जाकर देव पूजित ऋषभ पर्व्वत पर जाय तो वाजपेय यज्ञका फल और स्वर्गमें आनन्द मिलता है, वहांसे अप्सरागणोंसे सेवित कावेरी नदीको जाय, हे राजन्! उसमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, वहांसे चलकर समुद्रके तीरपर जाकर कन्या तीर्थका स्पर्श करे हे राजेन्द्र! उस जलके स्पर्श करनेहीसे सब पाप छूट जाते हैं। आगे तीन लोक विख्यात समुद्रके बीचमें स्थित सबलोक पूजित कम्भ तीर्थको जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता, तपोधन ऋषि, भूत, यक्ष, पिशाच, किन्नर, बड़े बड़े सर्प सिद्ध चारण, गन्धर्व्व, मनुष्य, सर्प, नदी, समुद्र और पर्व्वत आकर शिवकी उपासना करते हैं, वहां शिव की पूजा करके तीन दिन व्रत करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और गणेशका पद मिलता है, यदि वहां दस दिन रहे तो पुरुष परम पवित्र हो जाता है, वहांसे तीनलोक पूजित गायत्रीके स्थानमें जाय वहां तीन दिन रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, हे नरनाथ! हे राजन्! यह गायत्रीका प्रत्यक्ष उदाहरण दीखता है कि यदि कोई सङ्करजाति (जिसकी माता दूसरी हो और पिता दूसरी जाति हो) का उत्पन्न हुआ पुरुष अच्छी रीतिसेभी गायत्री पढ़े तोभी वह गायत्री स्वरसे हीन, छन्द रहित गांवके गीतके समान उच्चारण होती है! औरभी उदाहरण है, कि यदि ब्राह्मणके सिवा कोई दूसरा वर्ण वहां जाकर गायत्री पढ़े तो उसकी स्मरण नहीं होती, वहांसे चलकर दुर्लभ सम्वर्त्त मुनिकी बावड़ी में स्नान करे, वहां स्नान करनेसे पुरुष सुन्दर और ललित होजाता है, वहांसे वेणा तीर्थमें आकर यदि तीन रात व्रत करे तो पुरुषको मोर और हंस सहित विमान मिलता है, वहांसे सदाही सिद्धोंसे सेवित गोदावरी नदीको जाय, वहां स्नान करनेसे गोमेध यज्ञका फल और वासुकीका उत्तम लोक प्राप्त होता है, वहां वेणा नदीके सङ्गममें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर कुरुप्लव नामक तीर्थमें जाय, वहां तीन दिन रहकर स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, आगे वरदा-सङ्गममें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, आगे ब्रह्मस्थानमें जाकर व्रत करनेसे हजार गोदानका फल और स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे वनमें जाकर कृष्णावेणाके जलसे उत्पन्न हुए देवह्रद तीर्थमें स्नान करे, वहां जातिस्मर तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अपने पूर्व्व जन्मका स्मरण होजाता है, वहीं पर इन्द्र सौ यज्ञकरके स्वर्गको गये हैं। हे भारत! वहां जातेही अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, तब सर्व्वह्रद तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे चलकर पवित्र बावड़ी और नदियोंमें श्रेष्ठ पयोष्णि पर जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे हजार गोदानका फल मिलता है, हे भारत! हे राजन्! वहांसे चलकर दण्डकारण्यमें जाय पवित्र तीर्थका स्पर्श और स्नान करनेसे हजार गोदानका फल मिलता है, वहांसे शरभङ्ग और महात्मा शुकके आश्रम पर जानेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और कुल पवित्र होजाता है, वहांसे परशुराम सेवित शूर्पारक तीर्थमें जाय, वहां राम तीर्थमें स्नान करनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है, आगे जिताहारी और ब्रह्मचारी होकर सप्त गोदावर तीर्थमें स्नान करे, वहां स्नान करनेसे पुरुषको महापुण्य और स्वर्गलोक मिलता है, आगे ब्रह्मचारी और नियमसे भोजन करनेवाला होकर देवतोंके मार्गमें जानेसे पुरुषको देव सत्र यज्ञका फल होता है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर तुङ्ग कारण्यको जाय, वहीं पर पहले सारस्वत मुनि वेद पढ़ाते थे, जब वेद नष्ट हो गये तब अङ्गिरा मुनिके पुत्र सुखपूर्व्वक ऋषियोंके वस्त्रोंमें

तैठ गये, तहां विधिपूर्व्वक यथोचित उन्होंने ओंकारको उच्चारण किया ऐसा करते ही सब मुनियोंको यह पाठ याद हो गया, वहीं देवता, ऋषि, वरुण, अग्नि, प्रजापति, विष्णु शिव और सब देवोंके सहित महा तेजस्वी भगवान ब्रह्माने महा तेजस्वी भृगु ऋषिको यज्ञ करनेको बिठलाया था तब भगवान भृगु मुनिने विधिपूर्व्वक ऋषियोंके कार्य्योंको यथोचित ठहरा दिया वहां भृगुने विधिपूर्व्वक शिवसे अग्निको सन्तुष्ट किया, तब सब देवता और ऋषि अपने अपने घरको चले गये। हे राजन्! उस तुङ्गक नामक बनमें जातेही पुरुष या स्त्रियोंके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, उस स्थानमें नियमधारी धीर पुरुष थोड़ा भोजन करके यदि एक महीना रहै तो ब्रह्मलोकको जाता है; वहांसे मेधाविक तीर्थको जाय वहां पितर और देवतोंका तर्पण करे तो अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता है, और स्मरण शक्ति तथा धारणा शक्ति बढ़ती है, वहीं पर कालिञ्जर नामक पर्व्वत है, यहां देवह्रद तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। जो कोई कालिञ्जर गिरि पर्व्वतमें जाकर आप स्नान करे अथवा दूसरेको स्नान करावे तो निस्सन्देह स्वर्गलोकको जाता है। वहांसे पर्व्वतों में श्रेष्ठ चित्रकूटको जाय, वहां सब पापोंको नाश करनेवाली मन्दाकिनीमें स्नान करके पितर और देवतोंको पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और मोक्ष मिलती है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे अत्यन्त उत्तम भर्त्तके स्थानको जाय, वहां देवतोंके सेनापति स्वामि कार्त्तिक सदाही निवास करते हैं। हे नृपश्रेष्ठ! वहां जानेहीने सिद्धिलाभ होती हैं आगे कोटि तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, उसकी प्रदक्षिणा करके जेष्ठ तीर्थको जाय, वहां महादेवकी पूजा करनेसे पुरुष चन्द्रमाके समान प्रकाशित हो जाता है, हे भरतर्षभ! हे महाराज! हे युधिष्ठिर! हमने सुना है कि उस कुएमें चारों समुद्र बसते हैं। हे राजेन्द्र! पितर और देवतोंकी पूजा करनेवाला नियमधारी पुरुष वहां स्नान करनेसे पवित्र होकर मोक्षको प्राप्त होता है, हे राजेन्द्र! वहांसे शृङ्गवेरपुरको जाय, वहीं दशरथ कुमार रामचन्द्र गङ्गापार हुए थे। हे महाबाहो! उस स्थानमें ब्रह्मचारी और सावधान होकर गङ्गास्नान करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है और मोक्षको प्राप्त होता है। हे महाराज! वहांसे मंजुबटको जाय, वह बुद्धिमान शिवका स्थान है, वहां शिवकी पूजा और प्रदक्षिणा करनेसे गणेशका स्थान मिलता है और वहां गङ्गास्नान करनेसे सब पाप छूट जाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे ऋषि पूजित प्रयागको जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता, दिशा, दिगपाल, लोकपाल, साध्य, लोकपूजित पितर, सनत्कुमार आदिक महाऋषि, अङ्गिरादिक निर्म्मल ब्रह्मर्षि, नाग, सुपर्ण, सिद्ध, चक्रचर (सूर्यादिक आकाशचारी) नदी, समुद्र, गन्धर्व्व अप्सरा और प्रजापतिके सहित भगवान विष्णु निवास करते हैं, प्रयागमें तीन कुण्ड हैं, उनके बीचमें सब तीर्थोंके सहित अत्यन्त वेगवती गङ्गा और तीनलोक विख्यात भगवती यमुना बहती हैं, वहीं जगत्को पवित्र करनेवाली यमुना गङ्गासे आकर मिली है, जहां गङ्गा और यमुना मिली हैं, वह स्थान पृथ्वीको जङ्घा है, प्रयागको ऋषियोंने पृथ्वीकी योनि कहा है, प्रयाग प्रतिष्ठानपुर (झूंसी) कम्बलाश्वतर तीर्थ और भोगवती यह ब्रह्माकी वेदी है, हे युधिष्ठिर! उसमें यज्ञ और वेद मूर्त्ति धारण करके रहते हैं, हे राजन्! वहां ऋषि ब्रह्माकी उपासना करते हैं, चक्रवर्त्ती और देवता लोग यज्ञ करते हैं। हे भारत! हे राजन्! इसी लिये प्रयाग परम पवित्र है, मुनिलोग तीन लोकके तीर्थोंसे प्रयागको अधिक कहते हैं, उस तीर्थमें जानेसे और उसका नाम स्मरण

करनेसे पुरुष मृत्युके भय और पापोंसे छूट जाता है, उस लोक विख्यात गङ्गा और यमुना-सङ्गममें जो स्नान करता है, उसको राजसूय और अश्वमेधका फल होता है, हे भारत! यह संस्कार करी हुई देवतोंके यज्ञ करनेकी भूमि है, वहां थोड़ा दान देनेसे भी बहुत हो जाता है। हे तात! न वेदके वचनसे और न लोकके वचनसे प्रयागमें मरनेकी बुद्धिको त्यागना चाहिये, हे कुरुनन्दन! जो एक करोड़ दस हजार सात तीर्थ कहे हैं वे सब प्रयागहीमें निवास करते हैं, तीनों वेद आत्मविद्या और सत्य बोलनेका जो कुछ पुण्य होता है, सो पुण्य गङ्गा-यमुनाके सङ्गममें स्नान करनेसे पुरुषको मिलता है, वहां राजा वासुकीका स्थान है, उसका नाम भोगवती है, उस उत्तम तीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है वहीं तीनलोक विख्यात हंसप्रवत नामक तीर्थ, है। हे कुरुनन्दन! प्रयागहीमें गङ्गाके तटपर दशाश्वमेध नामक तीर्थ है, कुरुक्षेत्रके समान गङ्गाका जहां स्नान करें वहां ही फल होता है, परन्तु कनखलमें विशेष फल है और प्रयागमें बहुत अधिक फल है, यदि हजारों पाप करके भी पुरुष गङ्गाजलमें स्नान करता है, तो वह गङ्गाजल उसके पापको ऐसेही नष्ट करता है, जैसे अग्नि इन्धनको, सतयुगमें सब तीर्थोंमें स्नान करनेसे पुण्य होता था, त्रेतामें पुष्कर तीर्थ है, कलियुगमें तो गङ्गाही प्रसिद्ध है। पुष्करमें तप करे, महालयमें दान दे और मलयमें अग्निमें प्रवेश करे और भृगुतुङ्ग तीर्थमें भोजन करे, पुष्कर, कुरुक्षेत्र गङ्गा और मगध देशीय तीर्थोंमें स्नान करनेसे पुरुषके सात पुरखा पवित्र हो जाते हैं, गङ्गा देखनेहीसे पापोंको नाश करती हैं, कीर्त्ति और कल्याणको बढ़ाती है, स्नान करने और जल पीनेसे सात कुलको पवित्र करती है। हे राजन्! पुरुषकी हड्डी जब तक गङ्गाजलमें रहती हैं, तबतक वह पुरुष स्वर्गमें रहता है, जो पवित्र तीर्थ और पवित्र देवतोंके स्थानमें जानेसे पुण्य होता है, और उससे स्वर्ग मिलता है वह सब उतना चिर-स्थाई नहीं होता है, जितना गङ्गास्नान करनेसे होता है, गङ्गाके समान कोई तीर्थ, विष्णुके समान कोई देवता और ब्राह्मणोंके समान कोई पूज्य नहीं है, ऐसा ब्रह्माने कहा है, हे महा-राज! जहां गङ्गा हैं, वह देश तपोधन है जो देश गंगाके तटपर हैं, वह सिद्ध क्षेत्र हैं, यह सत्य बात ब्राह्मण, साधु, पुत्र, मित्र, शिष्य और नौकरके कानमें कह देनी चाहिये, यह गङ्गातट धन्य, पवित्र, स्वर्गदायक; उत्तम, पुण्यदायक, रम्य, पवित्र करनेवाला, धर्म्म बढ़ानेवाला, महा ऋषियोंके पाप नाश करनेवाला, गुप्त स्थान है, ब्राह्मणोंके बीचमें इस मन्त्रको पढ़नेसे पुरुष निर्म्मल हो जाता है, और स्वर्ग मिलता है, यह तीर्थोंकी वंशावली लक्ष्मी, स्वर्ग, पुण्य और बुद्धिको देने-वाली है, उसका कीर्त्तन करनेसे शत्रुओंका नाश होता है, अपुत्रको पुत्र और निर्धनको धन मिलता है, इसको पढ़नेसे क्षत्री विजय करता है, बनियेको धन मिलता है, शूद्रकी इच्छा पूरी होती है, ब्राह्मण पण्डित होजाता है। जो पुरुष पवित्र होकर इस तीर्थ माहा-त्म्यको सुनता है, वह अपने अनेक जन्मोंका स्मरण करके स्वर्गमें आनन्द करता है, जो तीर्थ जाने योग्य हैं, उनमें जाय और जो नहीं जाने योग्य हैं, उनमें सब तीर्थोंके दर्शनकी इच्छा करनेवाले पुरुष मनहीसे चला जाय। इन तीर्थोंमें वसु, साध्य, सूर्य्य, मरुत, अश्विनीकुमार देवतोंके समान ऋषि और पुण्यात्मा लोग स्नान करते हैं। हे कौरव! हे उत्तम व्रतवाले युधिष्ठिर! ऐसेही आपभी इन तीर्थोंमें जाइये! आप नियमोंको धारण करके पुण्योंसे पुण्योंको बढ़ाते हुए तीर्थोंको जाइये; आप निश्चित कार-णोंको देखकर, आस्तिकता देखकर और

वेदोंके प्रमाणको मानकर तीर्थयात्रा कीजिये। हे राजन्! जिन तीर्थोंको शास्त्रदर्शी महात्मा लोग जा सकते हैं, उन्होंको आप जाइये, क्योंकि उन तीर्थोंको अव्रती दुष्ट, अपवित्र और चोर नहीं जा सकते हैं। हे कौरव्य! उन तीर्थोंमें दुष्ट बुद्धिवाले पुरुष स्नान नहीं कर सकते; आप ही सदा धर्म और अर्थके जाननेवाले उन तीर्थोंमें जा सकते हैं। हे राजन्! आपने धर्मसे पिता पितामह, प्रपितामह, और उनसेभी पहले पुरखा तथा ऋषि लोगोंको सन्तुष्ट किया है। हे इन्द्रसमान! आपको वसुओंके लोक मिलेंगे। हे भीष्म! आपकी महाकीर्त्ति इस जगत्में बहुत दिनतक रहेगी।

नारद मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! इस प्रकार भीष्मसे कहकर प्रसन्नता पूर्वक प्रसन्न चित्तसे भगवान पुलस्त्य मुनि भीष्मकी सम्मतिसे वहीं अन्तर्धान होगये। हे कुरुशार्दूल! भीष्मभी शास्त्रोंको देखके पुलस्त्यके वचनसे पृथ्वीमें घूमने लगे। हे राजन्! इस प्रकारसे यह सब पापोंके नाश करनेवाली पुण्योंसे भरी हुई महा भाग्यवती तीर्थयात्रा प्रतिष्ठानपुर (झांसी) में समाप्त हुई। जो पुरुष इस प्रकारसे पृथ्वीके तीर्थोंमें घूमता है; उसको मरनेके पश्चात् सैकड़ों अश्वमेधोंका फल होता है। हे कुन्तीनन्दन! आपको उससे आठ गुण फल होगा, जैसे कुरुवंश सिंह भीष्मको हुआ था; क्योंकि तुम ऋषियोंके अगुआ हो, इसीसे तुमको आठगुण फल होगा; और आज कलके तीर्थ राक्षसोंसे भर गये हैं, हे कुरुनन्दन! हे राजेन्द्र! आपके सिवाय उन तीर्थोंमें और कोई नहीं जा सकता है। जो पुरुष इस देवर्षि कथित तीर्थमाहात्म्यको कथा-रूपसे पढ़ेंगे, उनके सब पाप छूट जायेंगे। हे महाराज! उन तीर्थोंमें ऋषियोंमें प्रधान वाल्मीकि कश्यप, आत्रेय, कुण्डजठर, विश्वामित्र, गौतम, असित, देवल, मार्कण्डेय, गालव, भरद्वाज, वशिष्ठ, उद्दालक मुनि सौनक व्यास तपस्वियोंमें श्रेष्ठ शुकदेव, मुनि-श्रेष्ठ दुर्वासा, और महातपस्वी जाबाली इत्यादि अनेक तपोधन महर्षि लोग आपका मार्ग देख रहे हैं। हे महाराज! तीर्थोंमें जानेसे इन मुनियोंके दर्शन होंगे। हे महाराज! यह देखो ये महा तेजस्वी लोमश ऋषि आपके पास चले आते हैं, आप इनके सङ्गही तीर्थोंको चले जाइये। हे राजन्! क्रमके अनुसार इस तीर्थोंमें आप मुझसेभी मिलेंगे, जैसे राजा महाभिषको कीर्त्ति हुई थी, वैसीही आपकीभी होगी। हे राजशार्दूल! जैसे राजा ययाति और राजा पुरोरवा धर्मात्मा थे, तैसेही आपभी अपने धर्मसे शोभित हैं। हे राजन्! जैसे राजा भगीरथ, और राजा राम विख्यात थे, वैसेही सूर्यके समान तेजस्वी आपभी विराजमान हैं। जैसे मनु इक्ष्वाकु महा यशस्वी पुरु और पृथु थे, तैसेही आपभी विख्यात हैं। हे महाराज! जैसे वृत्रासुरके मारनेवाले देवराज इन्द्रने सब शत्रुओंको मारकर जगत्का राज्य किया था, हे कमलनेत्र! तैसेही आपभी अपने धर्मसे पृथ्वीको जीत और शत्रुओंको मारकर प्रजाको पालियेगा, जैसे कृतवीर्यके पुत्र अर्ज्जुन प्रसिद्ध हुए थे, तैसेही आपभी धर्मसे प्रसिद्ध हूजियेगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान् नारद इस प्रकार युधिष्ठिरसे कहके युधिष्ठिरको सम्मति ले वहीं अन्तर्धान होगये। धर्मात्मा महाराज युधिष्ठिरभी उसको सुनकर उसका अर्थ विचारकर ऋषियोंसे उस पुण्यको कहने लगे।

८५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने बुद्धिमान नारदकी और अपने भाइयोंकी सम्मति जानकर अपने पितामहके समान धौम्य मुनिको बुलाकर ऐसा कहा, कि मैंने सत्यपराक्रम पुरुष-

सिंह महावाहु आचारवान् पराक्रमी अर्ज्जुनको अस्त्रोंके लिये भेजा है ; वह तपोधन हमारा अत्यन्त भक्त है, और शस्त्रोंके जाननेमें महात्मा कृष्णके समान है। हे ब्रह्मण ! मैं शत्रुनाशन महातेजस्वी अर्ज्जुन और कृष्णको वैसाही जानता हूं, जैसा कि प्रतापवान व्यास जानते हैं, यह कमलनेत्र और नारायणके अवतार हैं, भगवान नारदभी इनको ऐसाही जानते हैं, और मुझसे सदा कहा करते हैं, और मैंभी जानता हूं, कि ये नरनारायण ऋषिके अवतार हैं। हमने अर्ज्जुनको समर्थ जानकरही भेजा है ; हमने यह जान लिया था, कि यह इन्द्र-पुत्र अर्ज्जुन इन्द्रसे कम नहीं हैं; अतएव इन्द्रको दर्शन करने और उनसे शस्त्र लेनेको भेजा है। देखिये भीष्म और द्रोण महारथ हैं ; कृपा-चार्य्य और अश्वत्थामा सहजहोमें जीतने योग्य नहीं हैं ; यह सब महारथलोग दुर्य्योधनके सङ्ग युद्धमें आवेंगे ; यह सब लोग वेदोंके जान-नेवाले और शस्त्रोंके पण्डित हैं, औरभी जितने महा बलवान पुरुष हैं, वे सब अर्ज्जुनहीसे युद्ध करनेको इच्छा करते हैं। देखिये यह दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाला सूतपुत्र कर्णभी महारथ है, वह सब शस्त्रोंके जाननेवाला वायुके समान बली, शस्त्र हैं ज्वाला जिसकी और तालियोंका शब्द है, अग्नि शब्द जिसका वह प्रलय कालकी महा अग्निके समान कर्ण दुर्य्योधनरूपी वायुसे प्रेरित होकर मेरी सेना समूहको निःसन्देह भस्म कर देगा। उस कर्णरूपी महा अग्निको कृष्ण वायुसे प्रेरित दिव्य अस्त्र अग्निवाला सफेद घोड़िरूपी वकमाला सहित गाण्डीव इन्द्र धनुषवाला अर्ज्जुन मेघ, अपने वाणधारा रूपी पानीसे युद्धमें बुझा देगा, अर्ज्जुन इन्द्रसे सब शत्रुओंके नाश करनेके निमित्त दिव्य अस्त्रोंको प्राप्त करेगा, वह सब शत्रुओंके नाशकरनेमें समर्थ है। मुझे यह निश्चय है, विना उसके हम शत्रुओंको नहीं जीत सकते। हमलोग उस पाण्डुपुत्र शत्रुनाशन अर्ज्जुनको शस्त्र लानेके समय तक देखते हैं, क्योंकि वह इस भारको लेकर कुछभी दुःखी नहीं हुए। हे ब्राह्मण ! हम लोग उस वीर अर्ज्जुनके विना इस काम्यक वनमें द्रौपदीके सहित सुख नहीं पाते हैं। अतएव आप कोई ऐसा वन वतलाइये जो उत्तम पवित्र फल और अन्नसे भरा हो, और जो परम रमणीय हो, जिसमें ऋषिलोग रहते हों, जिस वनमें रहकर हम लोग सत्य-पराक्रम वीर अर्ज्जुनका मार्ग देखें। हमलोग उसको ऐसाही चाहते हैं, जैसा किसान मेघको, अथवा अनेक प्रकारके ऋषि-योंसे सुने हो। तलाव और पर्व्वतोंका हमसे वर्णन कीजिये। हे ब्राह्मण ! मुझको विना अर्ज्जुनके इस वनमें रहना अच्छा नहीं लगता अतएव मैं दूसरी दिशाको जाना चाहता हूं।

८६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि उन सब पाण्डवोंको उदास और उत्सुक देखकर वृह-स्पतिके समान धौम्य मुनि धैर्य्य देकर ऐसा बोले, हे पापरहित ! हे भरतर्षभ ! ब्राह्मणों-से कहे हुए आश्रम, दिशा, तीर्थ और पवित्र पर्व्वतोंको मैं कहता हूं, तुम सुनो। हे नरेश्वर ! जिनके सुननेसे आप अपने भाई और द्रौपदीके सहित स्वस्थ हूजियेगा, हे पाण्डव ! हे नरो-त्तम ! जिनको सुननेसे आपको वहुत पुण्य होगा और वहां जानेसे सौगुण पुण्य होगा। हे युधिष्ठिर ! अव मैं आपसे स्मृतिके अनुसार राजर्षिसेवित पूर्व्व दिशाका वर्णन करता हूं, हे भारत ! उस राजर्षिसेवित पूर्व्व दिशामें नैमिषारण्य नामक तीर्थ है, जहां सब देवतोंके अलग पवित्र तीर्थ है, जहां रमणीय, पवित्र देव और ऋषियोंसे सेवित गोमती नदी वहती है, वही देवतोंकी यज्ञका स्थान और यहीं यज्ञके निमित्त यमराजने पशुओंको मारा था।

उसी पूर्व्व दिशा में पवित्र राजर्षि जयका सत्कार किया हुआ एक पर्व्वत है, वहीं पर देवता और ऋषियोंसे सेवित ब्रह्मसर तीर्थ है, हे पुरुषसिंह! उस स्थानमें जाने के निमित्त पुराने लोग कहते हैं, कि बहुतसे पुत्रोंकी इच्छा करनी चाहिये, कोई भी तो गयाको जायगा! हे राजन्! चाहे अश्वमेध करे चाहे काले रङ्गका सांड़ छोड़े, चाहे गयाको जाय इन तीनों कर्म्मोंका महा फल है, कि दश अगली पीढ़ियोंका उद्धार होजाता है। हे नरनाथ! वहीं महानदी और गयसिर नामक तीर्थ है, वहीं पर ब्राह्मण लोग अक्षयवट बतलाते हैं, जहां पितरोंको पिण्ड देनेसे अक्षय होता है, हे नरनाथ! वहीं पर पवित्र जलवाली फल्गु नामक महानदी है। हे भरतर्षभ! उसी दिशामें बहुत फल और मूलवाली कौशिकी नामक नदी है, तपोधन विश्वामित्र वहीं ब्राह्मण बने थे; उसी पूर्व्व दिशामें जलवाली गङ्गा बहती है, जहां राजा भगीरथने भारी दक्षिणावाली अनेक यज्ञ करी थीं। हे कौरव्य! पाञ्चाल देशमें उत्पलवन नामकतीर्थ है, जहां कुशिक-पुत्र विश्वामित्रजी मनुष्योंसे अधिक बुद्धि देखकर गये थे, कान्यकुब्ज देशमें विश्वामित्रने सोमपान किया था और ब्राह्मण बने थे हे वीर! उसही पूर्व्व दिशामें पवित्र ऋषिसेवित लोक-विख्यात गङ्गा और यमुनाका उत्तम सङ्गम है, जहां पहिले भगवान ब्रह्माने यज्ञ करी थी, इसीसे उसका नाम प्रयाग हुआ है। हे राजेन्द्र! हे नरनाथ! वहीं पर अगस्त्य मुनिका आश्रम है वही तपस्वियोंसे सेवित तापस वन तीर्थ है। आगे कालिञ्जर गिरि पर हिरण्य बिन्दु नामक तीर्थ है, वहीं पवित्र पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ कल्याणदायक अगस्त्य मुनिका पर्व्वत है, हे कौरव्य! वहीं महात्मा भार्गवका आश्रम महेन्द्र पर्व्वत है। हे कुन्तीनन्दन! ब्रह्माने पहले वहीं यज्ञ करी थी; हे प्रजानाथ युधिष्ठिर! पहले वहां पवित्र गङ्गा एक तालावमें भरी थीं उस पवित्र कुण्डका नाम ब्रह्मसर है, वहां पर अनेक पापरहित महात्मा लोग रहते हैं, उसका दर्शन परम पवित्र है, उसके नामको महात्मा लोग मङ्गलदायक और पवित्र बतलाते हैं, वहीं मतङ्ग ऋषिका कुण्ड है, और वहीं उनका उत्तम आश्रम भी है, वहीं कुण्डका जल तथा बहुत फल फूल और जलसे रम्य पर्व्वत भी है, जहां पर राजा नल प्यासे होकर गये थे और उसके जलको पीकर आनन्दित हुए थे, यहीं तपस्वियोंसे सेवित देववन तीर्थ है, वहां पर्व्वतके शिखर पर बाहुदा नदी और गंगा बहती हैं, उस स्थानमें तीर्थ, नदी, पर्व्वत और पवित्र आश्रम हैं। हे महाराज! यह मैंने पूर्व्व दिशाके तीर्थ आपसे कहे। अब शेष तीन दिशाओंके तीर्थोंकी सुनिये, उनमें भी अनेक नदी पर्व्वत और पवित्र आश्रम हैं।

८७ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले, हे भारत! अब मैं दक्षिणके तीर्थोंकी बुद्धिके अनुसार विस्तार सहित कथा कहता हूं: आप सुनिये, उस दक्षिण दिशामें बहुत आश्रम जल और तपस्वियोंके सहित कल्याण देनेवाली गोदावरी नदी बहती है, उसी दक्षिण दिशामें पापके भयको नाश करनेवाली हरिण और पक्षियोंसे शोभित मुनियोंके आश्रमोंसे भरी हुई वेणा और भीमरथी नामक दो नदी बहती हैं। हे राजन्! उसही दिशामें राजर्षि नृगकी नदी है इसका नाम पयोष्णि है, वह अनेक पक्षियोंसे सेवित रमणीय और बहुत जलसे भरी है, उसी स्थानमें महायोगी और महा यशस्वी मार्कण्डेय मुनिने यजमान राजा नृगकी वंशावली वर्णन करी हैं, हमने सुना है, कि उस स्थानमें प्रत्यक्षही सोम पीकर इन्द्र और दक्षिणा पाकर

ब्राह्मण लोग आनन्दित हुए थे, वहीं पयोश्णीमें और उत्तम वारह तीर्थमें उठे हुए या पृथ्वीमें पड़े हुए अथवा वायुसे चलित पुरुषका, जन्म भरका पाप नाश होता है, जहां स्वर्गसे भी ऊंचा निर्म्मल शिवका त्रिशूल है, उसको देखनेसे पुरुष शिवपुरको जाता है। मेरा यह सिद्धान्त है, कि जलसे भरी हुई नदी और सब तीर्थ एक ओर और पयोश्णि एक ओर होय तौभी पयोश्णिही अच्छी है; वरुण स्रोत नामक पर्व्वतवहुत फूल और फलोंसे भरा हुआ पवित्र मटरका वन है, वहीं यूप भी बने हैं, हमने सुना है, कि प्रवेणीसे उत्तरकी ओर चलनेसे कण्व मुनिका पवित्र आश्रम मिलता है। और उधर मुनियोंके अनेक वन हैं। हे तात! उधरही महात्मा यमदग्निकी वेदी शूर्पारक नामक तीर्थ है, वहीं परम रमणीय पत्थरोंसे भरी पुनश्चन्द्रा नाम्नी नदी है। हे कौन्तेय! वहीं अशोक तीर्थ है, उस तीर्थमें मुनियोंके बहुत आश्रम हैं, हे युधिष्ठिर! आगे पाण्ड्यदेशमें अगस्त्य और वरुण तीर्थ हैं। हे भरतर्षभ! उसही पाण्ड्यदेशमें बहुत पवित्र स्त्री ऐसी हैं जो विवाहही नहीं करती हैं, वहीं ताम्रपर्णी नामक नदी है। हम उसका वर्णन करते हैं आप सुनिये। हे भारत! जिस स्थानमें देवता लोगोंने बहुत कल्याणकी इच्छासे आश्रम बनाकर तप किया था उसही देशमें तीन लोक विख्यात गोकर्ण महादेव हैं। हे तात! उधरही कल्याण-दायक सुन्दर बहुत ठण्डे जलसे भरा हुआ तड़ाग है; उसको पापी पुरुष नहीं छूसकते हैं। वहीं घास मूल और फलोंसे भरा हुआ देवतोंके पर्व्वतके समान अगस्त्य मुनिके शिष्यका आश्रम है। उधरही मणिमय शोभावान कल्याण दायक वैदूर्य्य पर्व्वत है, उसी स्थान पर बहुत फल मूल और जलसे शोभित अगस्त्य मुनिका आश्रम है। हे नराधिप! अब हम सुराष्ट्र देशके पवित्र स्थान, आश्रम, नदी और तड़ागोंका वर्णन करते हैं। हे युधिष्ठिर! वहां चमसोद्भेद नामक तीर्थ है, ब्राह्मणलोग उसका बहुत महात्मा करते हैं, आगे समुद्रमें देवतोंका प्रभास नामक तीर्थ है, वहां पिण्डारक नामक तीर्थ है, उसमें अनेक ऋषि लोग रहते हैं उधरही शीघ्र सिद्धि देनेवाला उज्जयन्त नामक तीर्थ है। हे युधिष्ठिर! उसी स्थानके लिये ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ नारदने यह पुराना श्लोक कहा है; उसको आप सुनिये, "जो पुरुष पक्षी और मृगोंसे भरे, हुए सुराष्ट्रदेशमें पवित्र उज्जयन्त पर्व्वत पर तप करता है, उसको स्वर्ग मिलता है। उसी देशमें पवित्र द्वारिकापुरी है, वहां साक्षात् सनातन धर्म्मरूपी कृष्ण निवास करते हैं। जो ब्राह्मण वेद और ज्ञानको जानते हैं, वे कृष्णको महात्मा और सनातन धर्म्म बतलाते हैं, कृष्ण पवित्रोंसे परम पवित्र पुण्योंमें परम पुण्य मङ्गलोंके मङ्गल, कमलनेत्र, देवतोंके देवता और सनातन हैं; कृष्ण अव्यय (अविनाशी) व्ययात्मा, क्षेत्रज्ञ (जीव) और परमेश्वर हैं; वेही मधुराक्षसके नाश करनेवाले अचिन्त्यात्मा भगवान कृष्ण द्वारकामें वास करते हैं।

८८ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले, हे राजन्! अब हम पश्चिम दिशाके आनर्त्त देशमें जो पवित्र और पुण्यसे भरे हुए स्थान हैं, उनको आपसे कहते हैं। हे भारत! उस देशमें प्रियङ्गु और नीपके वनोंसे वेष्टित पश्चिमको बहने वाली नर्म्मदा नामक नदी है, हे भारत! हे कुरुश्रेष्ठ! तीनलोकके सब तीर्थ पवित्र आश्रम, नदी, पर्व्वतोंके राजा, ब्रह्माके सहित सब देवता सिद्ध, ऋषि और चारण यह पुण्य में भरे हुए नर्म्मदाके जलमें स्नान करनेको आते हैं, वहीं विश्रवा मुनिका आश्रम है। वहीं पर पुरुषवाहन कुवेरका जन्म हुआ था,"

उधरही पवित्र कल्याण-दायक, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ ! वैदूर्य्य शिखर नामक पर्व्वत है, जहां हरे पत्तोंवाले सदा फूले फले अनेक वृक्ष हैं, हे महाराज ! हे पृथ्वीनाथ ! उसही पर्व्वतकी चोटी पर देवता और गन्धर्व्वोंसे सेवित पवित्र फुल्लपद्म नामक तलाव है। हे राजन् ! उस देव और ऋषियोंसे सेवित पुण्यमय स्वर्गके समान पर्व्वतमें अनेक आश्चर्य्य दीखते हैं। उस पर्व्वतमें राज ऋषियोंके अनेक कुण्ड हैं, हे राजन् ! हे शत्रुनाशन ! वहीं विश्वामित्रकी पवित्र नदी है उसी नदीके तट पर नहुषके पुत्र राजा ययाति स्वर्गसे गिरे थे ; और पुनः सनातन धर्म्म लोकको गये थे। वहीं पवित्र तलाव और मैनाक पर्व्वत है, उधरही बहुत फल और मूलोंसे भरा हुआ नीलगिरि पर्व्वत है। हे युधिष्ठिर ! वहीं कच्छसेन मुनिका पवित्र आश्रम है। हे पाण्डव ! उधरही विख्यात च्यवन मुनिका आश्रम है, वहां पुरुष लोग थोड़ीही तपस्यासे सिद्ध हो जाते हैं। हे महाराज ! उधरही आत्मदर्शी मुनियोंका जम्बुमार्ग है। हे शान्तोंमें श्रेष्ठ ! उधरही बहुत पक्षी और हरिणोंसे भरा हुआ आश्रम है। हे महाराज ! उधरही सदा मुनियोंसे सेवित केतमाला और मे[illegible]ा नामक नदी हैं। हे पृथ्वीनाथ ! उधरही गङ्गाद्वार है, उसही ओर पवित्र ब्राह्मणोंसे भरा हुआ प्रसिद्ध सैन्धववन है, उधरही ब्रह्माका पुष्कर नामक तड़ाग है, वहीं वैखानस, सिद्ध और ऋषियोंके प्रिय आश्रम हैं ; वहां निवास करनेके निमित्त ब्रह्मा गये थे, हे कुरु-श्रेष्ठ ! हे धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ ! हमने यह कथा सुनी है, कि जो मनस्वी पुरुष पुष्कर जानेकी मनसे भी इच्छा करता है, उसके सब पाप नाश होजाते हैं, और स्वर्गका आनन्द मिलता है।

८६ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले, हे राजशार्दूल ! उत्तर दिशामें जो पवित्र स्थान हैं, उनका वर्णन हम आपसे करते हैं, सुनिये, हे वीर ! पृथ्वीनाथ ! अब जो हम कथा आपसे कहते हैं उसको सावधान होकर सुनिये और उस कथामें श्रद्धा कीजिये। हे पाण्डव ! उत्तर दिशामें महापवित्र सरस्वती और मालिनी नदी है, उसी ओर महावेगवती समुद्रगामिनी यमुना नदी है, जहां अत्यन्त पवित्र सुन्दर पलक्षावतरण तीर्थ है, जहां सारस्वत यज्ञ करनेसे ब्राह्मण लोग उत्तम लोकोंको प्राप्त करते हैं, हे पाप रहित ! जहां पवित्र कल्याणोंका देनेवाला अग्निसिर नामक तीर्थ है, हे भारत ! जहां सहदेवने सम्या (दण्डविशेष) लगाकर यज्ञ किया था। हे युधिष्ठिर ! इसही स्थानमें इन्द्रने यह कथा कही थी, जिसको लोकमें अभीतक ब्राह्मणलोग गाते हैं। हे पुरुषशार्दूल ! यमुनाके तट पर सहदेवने अग्नि सेवा करी थी, वहां उन्होंने सैकड़ों सहस्रों दक्षिणा सहित यज्ञ करे थे, हे राजन् ! उसी स्थानमें महायशस्वी चक्रवर्त्ती, राजा भरतने एकसौ अड़तालीस अश्वमेध करे थे। हे तात ! वहांसे आगे ब्राह्मणोंका कार्य्य सिद्ध करनेवाला अत्यन्त पवित्र शरभङ्ग मुनिका विख्यात आश्रम है, हे कुन्तीनन्दन ! सरस्वती नदीकी पण्डित लोग सदाही सेवा करते हैं। हे महाराज ! जहां पहले वालखिल्य मुनियोंने यज्ञ करी थीं। हे युधिष्ठिर ! उसी देशमें महापुण्यवती दृषद्वतीनदी है ; हे पुरुषश्रेष्ठ ! आगे पाञ्चाल देशमें पाञ्चाल्य वट है। हे कुन्तीनन्दन ! उसी पृथ्वीमें अनन्त यशवाले उत्तम व्रतधारी महा तेजस्वी महात्मा दालभ्य मुनिका दालभ्य घोष आश्रम है यह आश्रम परम पवित्र और तीनों लोकमें विख्यात है। हे महाराज ! उसी देशमें नर और नारायण ऋषि निवास करते हैं। हे भरतसत्तम ! यह तीनों वेदके जानने वाले वेदके पण्डित और वेद-

विद्याके जाननेवाले हैं, यह दोनों सदाही पवित्र वड़ी यज्ञोंकी क्रिया करते हैं, आगे विसाखयूप नामक तीर्थ है, जहां पहले इन्द्र वरुण आदि अनेक देवतोंने मिल कर तपस्या करी थी, इसीसे यह आश्रम बहुत पवित्र है, उसी देशमें महाभोग महायशस्वी, महामुनि यमदग्निने रमणीय पलास वनमें यज्ञ किये थे, यहां सब नदियोंसे श्रेष्ठ नदियां अपना अपना जल लेकर यमदग्नि ऋषिके पास आई थीं, हे महाराज! इस स्थानमें स्वयं विश्वावसुने महात्मा यमदग्नि-के यज्ञको देखकर यहश्लोक गाया था। "यह कहते हुए महात्मा यमदग्निके यज्ञमें देवता नदी और ब्राह्मण स्वयंही आये और सहदसे तृप्त हुए, उसी देशमें गन्धर्व्व, यक्ष राक्षस और अप्सराओंसे सेवित किरात और किन्नरोंका देश उत्तम पर्व्वत है। हे युधिष्ठिर! उसी देशमें वेगसे पहाड़को तोड़ कर गङ्गा निकली है उस स्थानका नाम गङ्गाद्वार है, हे राजन्! उसी देशमें ब्रह्मऋषियोंसे सेवित सनत्कुमारका स्थान पवित्र कनखल तीर्थ है उधरही पुरुरवा नामक पर्व्वत है वहीं राजा पुरुरवा गये थे, हे राजन्! उधरही महर्षि सेवित भृगुतुङ्ग नामक पर्व्वत है, वहीं महात्मा भृगुने तप किया था। हे भरतकुलसिंह! जो भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान कालमें स्थिर रहनेवाले सनातन नारायण विष्णु पुरुषोत्तम हैं, उनही महायशस्वी विष्णुकी पवित्र शिला भी उधरही है। हे राजन्! उसी देशमें तीनोंलोक विख्यात एवम् पवित्र आश्रम है, जहां गङ्गाका उष्णजल बहता है, यह जल पहले ठण्ढा था। हे राजन्! वदरिकाश्रमके पास सुवर्ण सिकता नामक तीर्थ है, जहांजाकर महाभाग महातेजस्वी ऋषि और देवता लोग परमेश्वर नारायणको प्रणाम करते हैं, जहां परमात्मा सनातन देवनारायण वास करते हैं, वहां सब जगत्के पवित्र तीर्थ रहते हैं, वह स्थान पवित्र ब्रह्मतीर्थ और तपका वन है, वह स्थान सब पुरुषोंका परमेश्वर और परमपवित्र है, वहां ही पर साक्षात परमेश्वर निवास करते हैं, जिनको जानकर शास्त्रको देखनेवाले महात्मा लोग सोचसे छूटजाते हैं, वेही सब जगतके उत्पन्न करने वाले सबसे उत्तम और सनातन देव हैं, जहां आदि योगी नारायण विराजमान हैं वहां सब देवता ऋषि, सिद्ध और तपोधन मुनि निवास करते हैं, हे महाराज! यह स्थान पवित्रोंसे भी अधिक पवित्र है, इस विषयमें आपको कुछ भी शङ्का न होनी चाहिये, हे पृथ्वीनाथ! इस पृथ्वीमें इतनेही पवित्र तीर्थ हैं। हे महाराज! हमने जो यह पवित्रतीर्थ आपसे वर्णन किये इन सबमें वसु, साध्य, सूर्य्य वायु, अश्विनी कुमार और महात्मा देवतोंके समान ऋषि लोग निवास करते हैं। हे कुन्तीनन्दन! इन तीर्थोंमें आप ब्राह्मण और महाभाग भाइयोंके सहित आनन्दसे घूमिये।

९० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कौरवनन्दन! जहां धौम्य मुनि युधिष्ठिरसे ऐसा कह रहे थे, उस स्थानमें महातेजस्वी लोमश मुनि आये उनको देखतेहीं राजा युधिष्ठिर अपने पुरुष और ब्राह्मणोंके सहित इस प्रकार खड़े हुए जैसे महाभाग इन्द्रको आते देख स्वर्गमें देवता लोग खड़े हो जाते हैं। धर्म्मराज महाराज युधिष्ठिरने उनकी यथा योग्य पूजा करके उनके घूमने और वहां आनेका प्रयोजन पूछा, महामनस्वी लोमश मुनिने पाण्डुपुत्रका प्रश्न सुनके पाण्डवोंको प्रसन्न करते हुए मीठी वाणीसे यों कहा, हे कुन्तिनन्दन! मैं अपनी इच्छासे सब लोकोंमें घूमता हूं, अभी इन्द्रके स्थानमें गया था, वहां इन्द्रको देखा, वहीं तुम्हारे भाई वीर अर्ज्जुनको इन्द्रके आधे आसन पर वैठे हुए देखा, हे पुरुषशार्द्दूल अर्ज्जुनको

ऐसा देखकर मुझे महा आश्चर्य्य हुआ, तब इन्द्रने मुझसे कहा कि तुम पाण्डवोंके पास जाओ, सो अब मैं महात्मा इन्द्र और अर्ज्जुनकी आज्ञासे भाइयोंके सहित आपके देखनेको आया हूं, हे पाण्डुनन्दन! हे तात! हे राजन्! जो कुछ मुझे कहना है सो आप द्रौपदी और ऋषियोंके सहित सुनिये, हे नाथ! हे भरतकुलसिंह! आपने अर्ज्जुनको जिस अस्त्रके निमित्त भेजा था, वह असाधारण अस्त्र उन्होंने शिवसे ले लिया, उन्होंने अपने तपसे शिवको वहीं बुलाया था, जो अस्त्र महा कठोर और अमृतसे उत्पन्न हुआ है वही ब्रह्मसिर अस्त्र अर्ज्जुनको शिवसे मिला है, हे युधिष्ठिर! अर्ज्जुनने उस अस्त्रको मन्त्र, संहार और प्रायश्चित्तके सहित सीखा है। हे कुरुनन्दन! अर्ज्जुनको इन्द्र, वरुण, यम, और कुवेरसे वज्र और दण्ड आदिक सब अस्त्र मिल गये हैं, महापराक्रमी अर्ज्जुनने औरभी दिव्य अस्त्र सीख लिये हैं और विश्वावसुपुत्रसे नाचने गाने और बजानेकी विद्याको अच्छी प्रकार सीख लिया है, इस प्रकार तुम्हारे छोटे भाईसे छोटा भाई कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन अस्त्रविद्या और गन्धर्व्व विद्याको सीखकर सुखसे स्वर्गमें रहते हैं और हे युधिष्ठिर। मुझको देवराज इन्द्रने जिस निमित्त आपके पास भेजा है, सो सुनिये मुझसे उन्होंने यों कहा है कि हे द्विजोत्तम! आप मनुष्य लोकमें जाकर मेरे वचनानुसार युधिष्ठिरसे ऐसा कहियेगा कि, आपके भाई अर्ज्जुन शीघ्रही अस्त्रोंको सीख और जो कार्य्य देवतोंसे नहीं हो सकता है, उस भारी देवकार्य्यको करके आपके पास आवेंगे, इतनेमें आपभी भाइयोंके सहित तप कीजिये, क्योंकि जगत्में तपके बराबर कोई वस्तु नहीं है, तपहीसे परम पद मिलता है, हे भरतकुलसिंह! हम सत्यधारी महा वीर्य्यमान, महायुद्धमें असमान पराक्रमी महायुद्धोंके जाननेवाले महाधनुषधारी वीर महा अस्त्रवाले सुन्दर स्वामिकार्त्तिक समान सूर्य्यके पुत्र कर्णको अच्छी प्रकार जानते हैं, तैसेही ऊंचे कन्धोंवाले जन्महीसे महापराक्रमी अर्ज्जुनकोभी हम भली भांति जानते हैं। हे वीर! यह निश्चय है कि कर्ण अर्ज्जुनसे सोलह भागके समानभी योद्धा नहीं है, जब अर्ज्जुन आवेंगे तब वह भय जो कर्णकी ओरसे आपके हृदयमें है, सबही निकल जायगा। हे शत्रुनाशन आपके मनमें जो तीर्थ यात्राकी इच्छा है, सो निःसन्देह लोमश ऋषि आपसे सब वर्णन करेंगे। हे भारत! तपकरनेसे और तीर्थोंमें जानेसे क्या क्या फल होते हैं, सो सब महर्षि लोमश आपसे कहेंगे, परन्तु आप उनके वचनोंको झूठा न समझियेगा।

९१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! अब अर्ज्जुनने जो कुछ आपसे कहा है सो आप सुनिये, उन्होंने कहा है, कि हे लोमश! आप मेरे भाई युधिष्ठिरको धर्म्मकी शोभाका उपदेश कीजिये, हे तपोधन! आप परम धर्म्म तप और श्रीमान् राजा लोगोंके सनातन धर्म्मको अच्छी प्रकार जानते हैं, आप परम पवित्र धर्म्मको उत्तम रीतसे जानते हैं, इसही लिये पुण्य तीर्थोंमें पाण्डवोंके सङ्ग जानेका कार्य्य आपको समर्पण करते हैं, जिस प्रकार महाराज तीर्थोंमें जायं और गौ दान करें, आप सब प्रकारसे वैसाही यत्न कीजियेगा, और यहभी कहा है कि, घोर वन और दुःखसे जाने योग्य स्थानोंमें आप राक्षसोंसे महाराजको रक्षा कीजियेगा, आपसे रक्षित होकर महाराज सब तीर्थोंमें जा सकेंगे. जिस प्रकार दधीच मुनि इन्द्रके सङ्ग और सूर्य्यके सङ्ग आङ्गिरा मुनि रहते हैं, हे द्विजोत्तम! तैसेही आपभी पाण्डवोंके सङ्ग रहकर उनकी रक्षा कीजिये, क्योंकि पर्व्वतोंके समान शरीरवाले अनेक राक्षस लोग वनोंमें

निवास करते हैं, राजाकी आपसे रक्षित देख-कर वे लोग उन्हें अपने घरोंमें न ले जा सकेंगे। सो अब मैं आपके सङ्ग सब तीर्थोंको जाऊंगा, और वहां सब भयोंसे आपकी रक्षा करूंगा। हे कुरुनन्दन! मैंने सब तीर्थोंको दो दो बार देखा है, अब तीसरी बार आपके सङ्ग चलकर देखूंगा, हे महाराज! हे युधिष्ठिर! यह तीर्थ-यात्रा पुण्य करनेवाले मनुआदिक राजऋषि-योंसे सेवित और भयकी नाशकरनेवाली है, हे कौरव्य! इन तीर्थोंमें टेढ़ा, पापी, मूर्ख, पातकी और दुष्टबुद्धि पुरुष स्नान नहीं कर सकता है, आप सत्य बोलनेवाले, धर्म्मज्ञ, और सदासे धर्म्मवृद्धि हैं, इन तीर्थोंको करनेसे आप फिरभी सबके सङ्गसे अलग हो जायंगे! हे पाण्डव! हे कुन्तीनन्दन! राजा भगीरथ, राजा ययाति और गय आदिक राजा लोग जैसे थे वैसेही तुमभी हो।

युधिष्ठिर बोले, मैं इतना प्रसन्न हुआ हूं कि आपकी इस बातका कुछ उत्तर नहीं दे सकता, क्योंकि जिसका स्मरण इन्द्र करे, उससे अधिक प्रारब्धी कौन होगा? जिसको आपका दर्शन हो, जिसका भाई अर्ज्जुन हो और जिनका इन्द्र स्मरण करे उससे अधिक प्रारब्धी और कौन होगा, जो भगवान इन्द्रने मुझको तीर्थ जानेकी आज्ञा दी है, सो तो धौम्य मुनिके बचनसे मैंने पहलेही बिचारा है। हे ब्रह्मण! मैंने यह निश्चय कर लिया है कि जिस दिन आप चलनेको इच्छा करेंगे मैंभी उसी दिन तीर्थ यात्राको चलूंगा, श्रीवैशम्पायन मुनि बोले युधिष्ठिरके चलनेकी इच्छा देख लोमश मुनि कहने लगे कि हे महाराज! आप थोड़े पुरु-षोंको अपने सङ्ग लीजिये, क्योंकि थोड़े पुरुष रहनेसे सुखसे चलना होगा। युधिष्ठिर बोले, जो यती और ब्रह्मण भीख मांगकर खाते हैं, और जो भूख प्यास मार्गका परिश्रम और शीतके दुःखको नहीं सह सकते, जो ब्राह्मण मीठा भोजन करते हैं, जो पकेहुए अन्नमें चटनीमें पीनेकी वस्तुओंमें और मांसमें अच्छे बुरेका बिचार करते हैं, वे सब लौट जायं और वे लोग भी हमारे संगसे लौट जायं जो रसोई बनानेवालोंके सहायक हैं, जो लोग हमसे यथोचित वृत्तिपाते हैं, वे भी हमारे संगसे लौट जायं, जो राज्यके लोग राजभक्तिके कारण हमारे सङ्ग हैं, वे सब महाराज धृतराष्ट्रके पास चले जायं, वे उन सबको समयके अनुसार जो जिसका वेतन है देंगे, यदि वे महाराज उन पुरुषोंको उचित वेतन नदेंगे तो हमारे प्यारे काम करनेवाले धृष्टद्युम्न सबका पालन करेंगे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय अनेक राज्यवासी लोग राजाकी आज्ञाके बोझसे पीड़ित होकर अनेक ब्राह्मण यती और प्रधान लोग हास्तिनापुरको चले गये, उन सबको राजा युधिष्ठिरके प्रेमसे अम्बिकापुत्र महाराज धृतराष्ट्रने अपने यहां रख लिया और धनदेकर सन्तुष्ट किया, अनन्तर कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर थोड़े ब्राह्मणोंके सहित प्रेमपूर्ब्बक लोमश मुनिके सङ्ग तीन दिन काम्यकवनमें और रहे।

९२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिरको चलते हुए देख बनवासी तपस्वी उनके पास आकर ऐसा बोले, हे राजन्! आप भाइयोंके सहित लोमश मुनिको संग लेकर पवित्र तीर्थोंको जानेवाले हैं, हे पाण्डव! हे महाराज! आपको उचित है कि हम लोगों-को भी सङ्ग ले चलिये, क्योंकि हम लोगोंके बिना आप सिंहादि जन्तुओंसे भरे हुए दुःखसे जाने योग्य घोर अगम्य तीर्थोंमें नहीं जा सकेंगे, हे नरनाथ! हे कौरव! आपके भाई लोग बड़े सूरवीर धनुधारियोंमें श्रेष्ठ हैं, आप लोगों-से रक्षा पाकर हम लोग भी तीर्थ कर लेंगे, हम लोग आपहीकी कृपासे तीर्थ, बन

और स्नानोंका पवित्र फल पावेंगे। हे नरनाथ! आपकी कृपासे हम लोग रक्षित होकर तीर्थोंमें स्नान करके पापोंसे छूट पवित्र होंगे; हे नरनाथ! आपभी महाराज कृतवीर्य्यके पुत्र, राजर्षि अष्टक, लोमपाद और चक्रवर्ती वीर राजा भरतकी गतिको प्राप्त हूजियेगा, वह लोक परम कठिनतासे प्राप्त होते हैं। हे पृथ्वीनाथ! हम लोग आपके सङ्ग जाकर प्रभास तीर्थ, महेन्द्र आदिक पर्व्वत, गङ्गा आदिक नदी और प्लक्ष आदिक वृक्षोंको देखनेकी इच्छा करते हैं, यदि आपको ब्राह्मणोंमें कुछभी प्रेम हो तो महाराज! हमारे इन बचनोंको स्वीकार कीजिये इससे आपका कृत कल्याण होगा, हे महाबाहो! वेसब तीर्थ तप नाश करनेवाले राक्षसोंसे भरे हैं। उन सबमें आप हमारी रक्षा करनेके योग्य हैं, जो तीर्थ धौम्यने और बुद्धिमान नारदने जो तीर्थ कहे थे, वेही महा तपस्वी देवर्षि लोमशनभी कहे, हे नरनाथ! आप विधिपूर्व्वक उन तीर्थोंका दर्शन कीजिये और हम लोगोंकोभी सङ्ग ले लीजिये, लोमश मुनि सबको रक्षा करेंगे। राजा उन मुनियोंके वचन सुनकर आंसुओंसे नहा गये, अनन्तर वीर भीमसेन आदिक भाइयोंकी सम्मती लेकर पाण्डव सिंह युधिष्ठिरने कहा कि बहुत अच्छा, अनन्तर लोमश और पुरोहित धौम्यकी आज्ञा लेकर अपने भाई और सुन्दराङ्गी द्रौपदीके सहित महाराजने उस बनसे चलनेका विचार किया, उसी समय महाभाग व्यास, पर्व्वत और नारद, काम्यक बनमें युधिष्ठिरको देखनेको इच्छासे आये, महाराज युधिष्ठिरने उन सबकी पूजा उचित विधिसे करी। अनन्तर महाभाग मुनीश्वर लोग युधिष्ठिरसे पूजित होकर ऐसा कहने लगे, ऋषि लोग बोले, हे युधिष्ठिर! हे भीम! हे नकुल! हे सहदेव! आपलोग अपने मनको शान्त कीजिये, मनको पवित्र करके शुद्ध होकर तीर्थोंको जाइये, मुनियोंने कहा है। कि शरीर शुद्ध होनेहीसे व्रत हो सकता है, ब्राह्मणोंने कहा है कि मन पवित्र होनेसे जो बुद्धि शुद्ध होती है, उसीको मुनीश्वर लोग देवव्रत कहते हैं, हे नरनाथ! शुद्ध मनहो पवित्रताका कारण है, आप लोग अपनी बुद्धिको पवित्र और सबकी मित्र बनाकर तीर्थोंको जाइये, जब आपलोग शरीरके नियम और व्रतोंसे शुद्ध होंगे और पूर्वोक्त देवव्रत धारण करेंगे, तब तीर्थोंका यथायोग्य फल पावेंगे। अनन्तर द्रौपदीके सहित पाण्डवोंने प्रतिज्ञा करी कि हम ऐसाही करेंगे, तब देव-ऋषि और ब्राह्मणलोग स्वस्ति पाठ करने लगे, हे राजेन्द्र! अनन्तर वीर पाण्डवोंने लोमश, व्यास, नारद और पर्व्वतके चरणोंमें प्रणाम किया, अनन्तर अगहन मास समाप्त होतेही धौम्य ऋषि और उन वनवासी ऋषियोंके सहित चले, जटा और मृगचर्म्मधारी पाण्डवलोग न टूटने योग्य कवच पहन और लाठी हाथमें लेकर चले, उनके सङ्ग पन्द्रह रथ थे, और इन्द्रसेन आदिक सारथी, रसोइये, सेवक और प्रधान प्रधान कर्म्मचारीभी सङ्ग थे, हे जनमेजय! वे सब लोग शस्त्र लिये, कवच बान्ध बाण भरे, तूणीर लगाये पूर्व्वको ओर मुह करके चले।

६३ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे मुनिसत्तम! यद्यपि हम ऐसे दुःखमें पड़े हैं, कि दूसरे राजाको कभी ऐसा दुःख न हुआ होगा तोभी हम अपनेको उत्तम गुणोंसे हीन नहीं समझते, हे लोमश! हम जानते हैं, कि हमारे शत्रुलोग अधर्म्मी और गुणहीन हैं, तोभी न जाने उनकी बृद्धि क्यों होती जाती है। श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! हे कुन्तीपुत्र! अधर्म्मी पुरुष अधर्म्महीसे बढ़ते हैं, इसमें आपको कदापि दुःख न करना चाहिये, क्योंकि यह नियम है, कि पुरुष पहले अधर्म्मसे बढ़ता है, फिर उसी

सुख मिलता है, पश्चात् वह शत्रुओंको जीतता है, तब उसके पीछे जड़के सहित नष्ट हो जाता है. हे पृथ्वीनाथ ! मैंने अनेक राक्षस और दैत्योंको देखा है, कि पहले वह अधर्म्मसे बढ़े और नष्ट होगये। हे नाथ ! मैंने पहले सतयुगमें देखा था कि देवतोंने धर्म्मको धारण किया और राक्षसोंने धर्म्मको छोड़ा, हे भारत ! देवता लोग तीर्थोंमें गये और राक्षस लोग न गये, उनको अधर्म्मका अभिमान पहलेही हो गया था. अहङ्कारसे अभिमान, अभिमानसे क्रोध, क्रोधसे निर्लज्जता, निर्लज्जतासे दुष्कर्म्मोंमें प्रवृत्ति और दुष्कर्म्म करनेसे उनका सर्व्वनाश होगया, उन अधर्म्म, निर्लज्ज और मिथ्या व्रतधारियोंको लक्ष्मी और धर्म्मने शीघ्रही छोड़ दिया, अनन्तर लक्ष्मी देवतोंके यहां और दरिद्र राक्षसोंके यहां वास करने लगा, अनन्तर अभिमानसे नष्ट चित्तवाले लक्ष्मीहीन दैत्य और दानवोंके यहां कलियुगने वास किया, उन लक्ष्मी रहित, कलिसहित अभिमानसे नष्ट, कृपा और बुद्धिहीन राक्षसोंका शीघ्रही नाश होगया, राक्षस लोगोंका यश हीन होनेसे सर्व्वनाश होगया, तब देवता लोग समुद्र, नदी, और तालाव आदि पवित्र स्थानोंमें तीर्थ करनेको गये क्योंकि देवता लोग धर्म्मवान थे, हे पाण्डव ! देवता लोगोंने तप, यज्ञ, दान और आशिर्व्वादोंसे अपने सब पापोंको दूर किया और अनेक आनन्दोंको प्राप्त किया इसी प्रकारसे देवता लोग आनन्दके सहित विहार करने लगे वे लोग तीर्थोंमें घूमने लगे इसीसे उनको उत्तम लक्ष्मी मिली, हे राजेन्द्र ! इसी प्रकारसे भाइयोंके सहित तीर्थोंमें स्नान करके उसही लक्ष्मीको प्राप्त कीजियेगा । हे राजन् ! जैसे नृग, शिवि औशीनर, भगीरथ, वसुमना, जय, और पुरुरवा आदि राजोंने क्लेश रहित होकर तपस्या करी थी और तीर्थ और महात्माओंके दर्शनसे पवित्रहुए थे, तैसेही आपभी पवित्र हूजियेगा, हे प्रजानाथ ! जिस प्रकारसे उनको लक्ष्मी यश और पुण्य मिले थे वैसेही आपको बहुत लक्ष्मी मिलेगी, जैसे इक्ष्वाकुने पुत्र और बान्धवोंके सहित आनन्द किया था, जैसे मुचकुन्द, मान्धाता और राजा मरुतने पवित्र कीर्त्तिको लाभ किया था और जैसे तपस्याके बलसे देवता और देवर्षि लोग आनन्द करते हैं, तैसेही आप भी आनन्द कीजियेगा, जैसे राक्षस लोग नष्ट होगये, तैसेही धृतराष्ट्रके पुत्रभी अधर्म्म और मोहके वशमें होनेसे निःसन्देह शीघ्रही नष्ट होंगे ।

९४ अध्याय समाप्त ।

वैशम्पायन मुनि बोले, वीर पाण्डव लोग सब पुरुषोंके सहित इस प्रकार क्रमसे जहां तहां वसते हुए नैमिषारण्य तीर्थमें पहुंचे। हे भारत ! हे राजन् ! हे जनमेजय ! पाण्डव लोगोंने उस तीर्थमें जाकर गोमतीमें स्नान किया और अनेक गौ तथा बहुत धन दान किया। अनन्तर कन्या तीर्थ, अश्वतीर्थ, गौ तीर्थ, कालकोटि और विषप्रस्थ पर्व्वतमें जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करी तथा ब्राह्मणोंको बहुत दान देकर तृप्त किया, हे पृथ्वीनाथ ! वहांसे चलकर उन लोगोंने बाहुदा नदीमें स्नान किया । हे पृथ्वीनाथ ! वहांसे देवतोंके यज्ञ स्थान प्रयागमें पहुंचे, वहां जाकर स्नान करके व्रत और उत्तम तप किया, सत्यवादी पाण्डवोंने गङ्गा और यमुनाके सङ्गममें स्नान करके ब्राह्मणोंको बहुत धन दान किया वहांसे महात्मा पाण्डव लोग मुनि सेवित प्रजापतिकी वेदी पर गये, हे राजन् ! हे भारत ! उस स्थानमें ब्राह्मणोंके सहित पाण्डवोंने जाकर निवास और उत्तम तप किया, हे राजन् ! इस प्रकार ब्राह्मणोंको वनचारी पशुओंके मांस और उत्तम अन्नसे सन्तुष्ट करते

हुए पाण्डव लोग गयामें पहुंचे, जहां धर्म्मज्ञ महात्मा राजागयने पर्व्वतका संस्कार किया है, हे महातेजस्विन्! वहीं राजर्षि पुण्यात्मा राजागयने अपने नामसे गयसिर नामक तीर्थ स्थापन किया है, वहीं बेत्र वृक्षोंसे शोभित उत्तम घाटवाली रमणीय फल्गु नामक महा नदी है, जहां पवित्र शिखावाला उत्तम दिव्य पर्व्वत है, वहीं पर मुनि सेवित उत्तम ब्रह्मसर नामक तीर्थ है, जहांसे भगवान अगस्त्य मुनि सूर्य्यके पास गये थे, हे पृथ्वीनाथ। वहीं पर सनातन धर्म्मराज युधिष्ठिरने बास किया उसके पासही सब नदियोंका एक सोता है, जहां पर साक्षात पिनाकधारी महादेव सदा वास करते हैं, वहां वीर पाण्डवोंने वर्ष भर वास किया, उस स्थान पर रहकर महात्मा युधिष्ठिरने ऋषि यज्ञ किये, जहां महा अक्षयबट है, जिसका फल अक्षय है, जहां यज्ञ करनेसे अक्षय पुण्य होता है उसी स्थानमें युधिष्ठिरने वहां यज्ञ किया था और सब लोगोंने स्थिर मन होकर व्रतभी करे थे, उस समय उस देशके तपोधन सहस्रों ब्राह्मण युधिष्ठिरके पास आये थे, उस समय महाराज युधिष्ठिरने वेदोक्त विधिके अनुसार उस यज्ञकी समाप्त करके तेज और तपसे भरे हुए सब वेदोंके जाननेवाले ब्राह्मणोंसे महात्माओंकी सभामें बैठकर पवित्र वार्त्तालापभी किया था, उस सभामें विद्या और व्रतसे पूर्ण ब्रह्मचारी समठ मुनिने अमूर्त्तरयसके पुत्र राजा गयकी कथा इस प्रकार कही, समठ बोले, हे भारत! राजा अमूर्त्तरयस के पुत्र राजर्षिश्रेष्ठ राजा गयने जो जो पुण्यकर्म्म किये थे, सो मैं आपसे कहता हूं आप सुनिये, हे राजन्! राजा गयने यहां पर बहुत अन्न और दक्षिणाके सहित यज्ञ को थी, जिसमें पहाड़के समान सैकड़ों अन्नके ढेर लगे थे, जहां घीव और दहीकी सैकड़ों नहर बह रही थीं, जहां बहु मूल्यवाले पके हुए अन्नोंके प्रवाह बह रहे थे; हे राजन्! वह राजा रोज रोज ऐसाही दान प्रति दिन देता था हे भारत! जब वह दक्षिणा देते थे तो वेदका शब्द आकाश तक पूरित हो जाता था, उस समय वेदके शब्दके सिवाय और कुछ नहीं सुनाई देता था, हे राजन्! उस पवित्र शब्दसे आकाश और दशों-दिशा पूरित होजाती थीं, यह अद्भुतकर्म्म वे नित्यही करते थे। हे भरतकुल सिंह! जिसके अन्न और पानसे तृप्त होकर सब देशोंमें पुरुष लोग उनहीको वार्त्ता करते थे, कि गयके यज्ञमें कौनसे पुरुषको खानेकी इच्छा रह गई? बचे हुए भोजनके इक्कीस पहाड़के समान ढेर पड़े हैं, यहां तेजस्वी राजर्षि गयने जैसी यज्ञ करी, वैसी न किसीने की और न करेगा। राजा गयको यज्ञमें देवता लोग ऐसे तृप्त हुए कि दूसरी यज्ञमें भोजन करनेकी इच्छा उनको न रही, जैसे बालूके, कनके, जैसे आकाशके तारे और जैसे बरसते हुए मेघकी धाराको कोई नहीं गिन सकता, तैसेही राजा गयके दक्षिणाओंको भी कोई नहीं गिन सकता है। हे कुरुनन्दन! इसीप्रकारसे राजा गयने इस तालाबके तटपर अनेक यज्ञ करी हैं।

९५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर बहुत दक्षिणा देनेवाले कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर वहांसे चले और अगस्त्याश्रममें पहुंचकर दुर्ज्जयास्थान (जहां अगस्त्यने वातापीको माराथा) में ठहरे, वहीं कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! धर्म्मराजने लोमशसे प्रश्न किया कि अगस्त्य मुनिने इस स्थान पर वातापीको क्यों मारा था? कहिये उस मनुष्योंके नाश करनेवाले राक्षसमें क्या शक्ति थी? और महात्मा अगस्त्य मुनिको किस निमित्त क्रोध हुआ था? श्रीलोमश मुनि बोले, हे कौरवनन्दन! इस मणिमति पुरीमें पहले

समयमें इल्वल नामक राक्षस हुआ था, वातापी उसका पुत्र था,उसने एक तपस्वी ब्राह्मणसे कहा कि हे भगवन्! आप इसे आशिर्व्वाद दीजिये कि जिससे मेरे इन्द्रके समान बेटा हो, परन्तु उस ब्राह्मणने उसको इन्द्रके तुल्य बेटा न दिया, इससे राक्षसने ब्राह्मणके ऊपर महा क्रोध किया। हे राजेन्द्र! उसी दिनसे ब्राह्मणभक्षी इल्वल राक्षसने यह उपाय किया कि अपने भाईको मायासे बकरा बनाया, वह वातापी नामक राक्षस उसी समय बकरा बन गया, तब इल्वलने उसको काटकर भोजनमें बनाकर ब्राह्मणोंको खिला दिया, उसके खानेसे सब ब्राह्मण मर गये, उसको यह आशीर्व्वाद था कि जिस मरे हुए पुरुषका नाम लेकर वह पुकारे सो फिर शरीरधारण करके जीता हुआ बोलने लगता था, अनन्तर एक दिन उसने अपने भाईको बकरा बनाकर उसे भोजनमें सिद्धकर उसी ब्राह्मणको खिला दिया, भोजनके पश्चात इल्वलने अपने भाई वातापीका नाम लेकर ऊंचे स्वरसे पुकारा तब वह ब्राह्मण कण्टक, बलवान, मायावी वातापी अपने भाईका ऊंचा स्वर सुनकर उस ब्राह्मणका पेट फाड़कर उसी समय बाहर निकल आया, हे राजन्! हे प्रजानाथ! वह महा असुर वातापी ब्राह्मणके पेटसे बाहर निकलकर हंसने लगा, हे राजन्! इस प्रकार वह दुष्ट इल्वल प्रति दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उनका नाश करने लगा। एक दिन भगवान् अगस्त्य मुनिने देखा कि सब पितर लोग नीचा मुख किये गढ़ोंमें पड़े हैं, तब उन्होंने पूछा कि आप लोगोंकी यह क्या दशा है? वेदपाठी पितरोंने कांपते हुए कहा कि हमारी सन्तान नष्ट हो गई इसी लिये हम इस आपत्तिमें पड़े हैं। हे अगस्त! हम तुम्हारे पितर हैं, तुम्हारे कोई पुत्र नहीं है, इसीसे हम इस गढ़ेमें टंगे हैं यदि तुम पुत्र नहीं उत्पन्न करोगे तो हम नर्कसे न छूटेंगे, इस लिये तुम पुत्र उत्पन्न करो। सत्यवादी तेजस्वी अगस्त्य मुनिने कहा कि हे पितर लोगो! हम आप लोगोंकी आज्ञा पालेंगे, आप लोग अपने मानसिक दुःखको दूर कीजिये, अनन्तर भगवान् अगस्त्यने बिचारा कि मैं कौनसी स्त्रीसे बिवाह करूं? उन्होंने पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त कोई स्त्री अपने समान न पाई, उन्होंने सतोगुणके सब भागोंको लेकर, उन्हीं उन्हीं शरीरोंसे एक स्त्री रची, उसको रचकर महा तपस्वी अगस्त्य मुनिने उस स्त्रीको तप करते हुए विदर्भराजको अपने निमित्त दे दिया, हे राजन्! वह कन्या बिजुलीके समान सुन्दर शरीर वाली और उत्तम मुखारविन्दवाली राजाके घरमें उत्पन्न हुई, राजा विदर्भने उसको उत्पन्न हुई देख प्रसन्नतापूर्व्वक सब ब्राह्मणोंसे कह सुनाया। हे पृथ्वीनाथ! यह सुन सब ब्राह्मण बहुत प्रसन्न हुए और उस कन्याका नाम लोपामुद्रा रक्खा। हे राजन्! यह सुन्दर रूपवाली कन्या अपने पिताके घरमें ऐसे बढ़ने लगी, जैसे जलमें कमलिनी और अग्निमें ज्वाला। जब वह यौवन अवस्था प्राप्त हुई तो अलङ्कार सहित सौ कन्या और सौ उत्तम दासी उसके संग रहने लगीं। वह तेजस्विनी लोपामुद्रा उन सौ कन्या और सौ दासियोंके बीचमें ऐसी शोभित हुई जैसे आकाशमें रोहिणी, हे महाराज! उस शील पवित्र और आचारसे भरी हुई कन्याको यौवन अवस्था आने परभी महात्मा अगस्त्यके भयसे किसीने अपनी स्त्री न बनाया, उस सत्यवती लोपामुद्राने अपने रूपसे अप्सराओंको और शीलसे अपने पिता और वंशके पुरुषोंको प्रसन्न किया, अपनी पुत्रीको यौवन अवस्थामें देख विदर्भ राजने विचार किया कि इसे किसको दूं।

९६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले, जब अगस्त्य मुनिने देखा कि लोपामुद्रा गृहस्थीके योग्य हुई तो विदर्भ राजके पास जाकर ऐसा बोले। हे राजन्! पुत्र उत्पन्न होनेकी इच्छासे मैं विवाह करना चाहता हूं, इसी निमित्त आपके यहां आया हूं, आप लोपामुद्राको मुझे दे दीजिये, मुनिके ऐसे वचन सुनकर राजा चेतना रहित होगये और कुछ उत्तर न दे सके, राजाने मुनिको लोपामुद्रा देना स्वीकार न किया, अनन्तर राजाने अपनी स्त्रीसे सब समाचार कह सुनाया और यहभी कहा कि यदि मुनीश्वर क्रोध करेंगे तो सबको भस्म कर देंगे। माता पिताको इस प्रकार दुःखी देख। लोपामुद्रा बोली कि हे पितः! आप मेरे निमित्त कुछ दुःख मत कीजिये मुझे अगस्त्यको देकर अपना उद्धार कीजिये! हे प्रजानाथ! पुत्रीके वचन सुन विदर्भराजने विधिपूर्व्वक लोपामुद्राका विवाह अगस्त्यके सङ्ग कर दिया। अगस्त्य मुनिने लोपामुद्रा को प्राप्त करके उससे ऐसे वचन कहे कि तुम बहुत मूल्यवाले वस्त्र और भूषणोंको उतार दो, उसने अपने पतिके वचन सुनकर सुन्दर और बहुत मूल्यवाले वस्त्र एवं भूषण उतार दिये, अनन्तर उस कमलनैनोको लेके लम्बे केश शोभायमान जङ्घावाली लोपामुद्राने वकलेके वने हुए वस्त्र और हरिनकी खालको ओढ़ा, वह विशालनैनो ठीक अपने पतिके समान रूपवाली वन गई। अनन्तर महात्मा अगस्त्य मुनि अपनी अनुकूल स्त्रीके सहित गङ्गाद्वारमें जाकर महा घोर तप करने लगे, लोपामुद्राभी अपने पतिसे परम मान पाकर उनकी सेवा करने लगी तैसेही भगवान अगस्त्यभी अपनी स्त्रीसे परम प्रेम करने लगे। इस प्रकार बहुत समय वीतने पर भगवान अगस्त्य मुनिने तपसे भरी हुई लोपामुद्राको एक समय ऋतुके पश्चात् स्नान किये हुए देखा, भगवान अगस्त्य मुनि उसकी सेवा, पवित्रता, इन्द्रियनिग्रह, शोभा और रूपसे प्रसन्न होकर उससे मैथुन करनेकी इच्छा करने लगे, तब लोपामुद्राने हाथ जोड़कर लज्जा में भरकर नम्र भावसे भगवान अगस्त्यसे ऐसे वचन कहे कि निःसन्देह पति सन्तानहोके निमित्त स्त्रीका विवाह करता है, और जो आपकी इच्छा है, सो काम आप मेरे सङ्ग कर सकते हैं, परन्तु हे विप्र! मैं अपने पिताके घरमें बहुत अच्छे स्थानमें रहती थी आप वैसेही स्थान और शय्या पर मेरे सङ्ग मैथुन करनेको योग्य हैं, मेरी इच्छा है, कि उत्तम भूषणोंसे भूषित, उत्तम मालाधारी आपके सङ्ग मैंभी दिव्य आभूषण पहनकर इच्छानुसार विहार करूं, अन्यथा यह गेरुके रङ्गे कपड़े पहनकर मैं आपके संग विहार नहीं करूंगी, हे विप्र ऋषे! यह वस्त्र और आभूषण समयके योग्य नहीं हैं। श्रीअगस्त्य मुनि बोले कि हे लोपामुद्रे! हे कल्याणि! हे सुमध्यमे! मेरे और तेरे घरमें इतना धन नहीं है, कि जितना तेरे बापके घरमें था। लोपामुद्रा बोली, हे तपोधन! आप अपने तपके बलसे जगतका जितना धन है, उस सबको एक क्षण भरमें लिआ सकते हैं। श्रीअगस्त्य मुनि बोले, यह तुम्हारा कहना सत्य है, परन्तु ऐसा करनेसे मेरा तप क्षीण हो जायगा, इस लिये ऐसा उपाय बतलाओ जिसमें मेरा तप नष्ट न हो। लोपामुद्रा बोली हे तपोधन! मेरी ऋतुका बहुत थोड़ा समय बाकी रहा है, और दूसर प्रकारसे मैं तुम्हारे पास आनेकी कदापि इच्छा नहीं करती हूं और तुम्हारे धर्मकोभी नष्ट करना नहीं चाहती हूं, इस लिये मैंने जो कहा सो पूर्ण कीजिये श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे सुभगे! हे कल्याणि! यदि तुमने अपने मनमें ऐसाही निश्चय किया है, तो मैं धन लेनेको जाता हूं, तुम यहां रहो।

९७ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कौरव्य ! अनन्तर अगस्त्य मुनि राजा श्रुतपर्वाको सब राजोंसे अधिक जान उन्होंके यहां धन मांगनेको गये, राजा श्रुतपर्वाने जब सुना कि अगस्त्य मुनि आये हैं, तो अपने मन्त्रियोंके सहित राज्यके अन्तमें सत्कारपूर्व्वक उनको लेनेको गये, राजाने विधिपूर्व्वक उनकी पूजा करके हाथ जोड़ बूझा कि कहिये आपने कैसे कृपा करी ? श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे राजन् ! हम आपके यहां धन मांगनेकी इच्छासे आये हैं, जिससे दूसरेको दुःख न हो इतना धन आप अपनी शक्तिके अनुसार हमको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले, तब उस राजाने अपनी प्राप्ति और व्यय अगस्त्य मुनिसे कह सुनाई और कहा कि हे विद्वन् ! यदि इसमेंसे आप उचित समझैं तो धन ले जाइये । अनन्तर अगस्त्य मुनिने उसका आय और व्यय समान जानकर किसीको दुःख देना उचित न जाना अनन्तर राजा श्रुतपर्वाको अपने संग ले राजा, व्रध्नस्वके यहां गये । राजा व्रध्नस्वने इन दोनोंको विधिपूर्व्वक अपनी सीमापर आकर ग्रहण किया, पूजा करनेके पश्चात् राजा व्रध्नस्वने दोनोंसे कहा कि कहिये क्या आज्ञा है, और कैसे आप लोगोंने कृपा करी है ? श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ ! हम दोनों आपके यहां धनकी इच्छासे आये हैं, सो शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरेको हानि न हो उतना धन आप हम दोनोंको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर राजा व्रध्नस्वने अपनी प्राप्ति और व्ययको पूर्ण दिखलाकर कहा कि यदि आप लोगोंकी इच्छा हो तो इसीमेंसे ले जाइये । तब सम बुद्धिवाले अगस्त्य मुनिने विचारा कि किसी प्राणीको दुःख देना उचित नहीं, अनन्तर वे तीनों पुरुष धन लेनेकी इच्छासे पुरुकुत्सके पुत्र त्रसदस्यु राजाके यहां गये, राजा त्रसदस्युने अगस्त्य मुनि, राजा श्रुतपर्वा और राजा व्रध्नस्वको आया हुआ सुन सीमा पर उनके पास जाकर पूजा करी, अनन्तर महा मनस्वी इक्ष्वाकु वंशीय राजा त्रसदस्युने तीनोंके आनेका कारण पूछा । श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ ! हम सब लोग धनकी इच्छासे आपके यहां आये हैं, सो अपनी शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरेको हानि न हो इतना धन आप हमको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले तब राजाने अपना लाभ और व्यय पूरा सुना दिया और कहा कि यदि आप लोग उचित समझें तो इसी धनमेंसे ले जाइये, तब अगस्त्य मुनिने उनका लाभ और व्यय समान देखकर अपने मनमें विचारा कि इस धनमेंसे कुछ लेनेसे सब प्राणियोंको दुःख होगा । अनन्तर सब राजोंने परस्पर विचार कर महामुनि अगस्त्यसे कहा कि हे ब्राह्मण ! इस जगत्में इल्वल नामक राक्षस ही धनवान है अतएव चलिये हम सब लोग उसीके पास धन लेनेको चलें, श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर उन सबने यही निश्चय किया कि विना इल्वलके पास चले धन नहीं मिल सकता, तब वे सब लोग इकट्ठे होकर इल्वल राक्षसके पास गये ।

९८ अध्याय समाप्त ।

श्रीलोमश ऋषि बोले, जब इल्वल राक्षसने सुना कि महामुनि अगस्त्यके सहित तीन राजा लोग आते हैं, तो अपने मन्त्रियोंके सहित अपनी सीमापर आकर उनकी पूजा करी अनन्तर राक्षसोंमें श्रेष्ठ इल्वलने उन चारोंका सत्कार किया, अनन्तर अपने भाईको काटकर खूब अच्छा भोजन बनाया, अनन्तर वे तीनों राजर्षिलोग उस राक्षसको बकरारूप बनकर कटते हुए देख बहुत घबराये और चेतना रहित होगये ? अनन्तर ऋषियोंमें श्रेष्ठ अगस्त्य मुनिने तीनों राजोंसे कहा कि आप लोग कुछ सन्देह न कीजिये मैं इस राक्षसको खाजाऊंगा । अनन्तर महामुनि अगस्त्य धुरी आसनसे बैठे और इल्वल राक्षस भी

हंसता हुआ उनको भोजन परोसने लगा, एकही अगस्त्य मुनिही वातापीके सब मांसको खा गये। खानेके पश्चात् इल्वलने वातापीका नाम लेकर पुकारा, अनन्तर महात्मा अगस्त्य मुनिको एक अधोवायु (पाद) हुआ। हे तात! उसका ऐसा शब्द हुआ जैसे मेघ गर्जता हो। हे राजन्! इल्वलने फिर पुकारा कि हे वातापी! तुम इस ब्राह्मणके पेटसे निकल आओ, तब अगस्त्य मुनिने हंस कर कहा कि अब वह राक्षस कहां निकल सकता है, वह तो मेरे पेटमें पच गया। इल्वल अपने भाईको पचा हुआ देख बहुत घबराया और मन्त्रियोंके सहित हाथ जोड़ कर बोला, कहिये आप सब लोग यहां किस प्रयोजनके लिये आये हैं? हम आपलोगोंका कौनसा कार्य्य करें? तब हंसते हुए अगस्त्य मुनि इल्वल से बोले, हे असुर! हम तुमको बहुत धनवान समुझते हैं और हम धनकी इच्छा रखनेवाले हैं, यह तोनों राजा अधिक धनी नहीं हैं, और मुझको बहुत धनकी इच्छा है, सो तुम अपनी शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरोंको दुःख न हो उतना धन हमको दो। तब इल्वल राक्षसने अगस्त्य मुनिसे कहा कि यदि आप यह कह सकें कि मैं आपको कितना धन देना चाहता हूं, तो मैं आपको धन दूं। श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे असुर! तेरे मनमें एक एक राजाको दस दस हजार गौ और उतनाही सुवर्ण देनेकी इच्छा है। हे महासुर! तैंने मुझे इन सबसे दुगुना धन,एक सोनेका रथ और दो घोड़े देने-का विचार किया है। कहो मैंने जान लिया कि नहीं? अब तुम जल्दी सोनेका रथ लाओ तब राक्षस बहुत घबराया और उससे भी अधिक धन अगस्त्य मुनिको दिया उस रथमें सुराव और विराव नामक दो घोड़े लगे थे,वे सब धन और अगस्त्यके सहित तीनोंराजा अगस्त्यके आश्रमको चले: अनन्तर वे तीनों राजा और अगस्त्य मुनि आश्रम पर पहुंचे, वहांसे अगस्त्यकी आज्ञानुसार राजालोग अपने अपने घरोंको चले गये, अगस्त्य मुनिने उस धनसे लोपामुद्रा की सब इच्छा पूरी करी, लोपामुद्रा बोली, हे भगवन्! आपने मेरी सब इच्छा पूर्ण करी, इस लिये अब मुझमें एक वीर्य्यवान पुत्रको उत्पन्न कीजिये। श्रीअगस्त्य मुनि बोले हे कल्याणि! हे सुन्दरि! हम तुम्हारे चरित्रसे बहुत सन्तुष्ट हुए हैं पुत्र उत्पन्न करनेमें जो मेरा बिचार है सो तुमसे कहता हूं सुनो, कहो तुम्हारे हजार पुत्र हों, या हजारके समान सौ हों, या कि सौके समान इक्कीस हों, वहा हजारके समान एकही हो? लोपामुद्रा बोली, [illegible]तपोधन हमको हजार पुत्रके समान एकही पुत्र हो, क्योंकि हजार दुष्टपुत्रोंसे एक महात्मा विद्वान् पुत्र अच्छा होता है। अगस्त्य मुनिने उस वचनको स्वीकार करके श्रद्धावती लोपामुद्राका सङ्ग किया। अनन्तर लोपामुद्राने गर्भको धारण किया और अगस्त्य मुनि बनको चले गये, उनके जानेके पश्चात् लोपामुद्राने सात वर्ष तक गर्भको धारण किया, सातवें वर्ष उसके गर्भसे अग्निके समान तेजस्वी महाकवी दृढ़स्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुए, वे उत्पन्न होतेही अंग और उपांगोंके सहित चारों वेदोंको पढ़ने लगे। अगस्त्यके पुत्र महा तेजस्वी और महा-तपस्वी हुए, महातेजस्वी दृढ़स्यु बालक अवस्था-हीमें पिताके घरमें ईन्धनका बोझ उठाने लगे थे इसीसे उनका नाम इध्मवाह हुआ। हे राजन्! ऐसे उत्तम पुत्रको देख कर मुनि बहुत प्रसन्न हुए। हे भारत! इस प्रकार उन्होंने उत्तम पुत्रको उत्पन्न किया, तब उनके पितर इच्छानुसार लोकोंमें गये, उसी दिनसे इस स्थानका नाम अगस्त्याश्रम है। इस प्रकार प्रह्लाद गोत्रोत्पन्न वातापी दैत्यको अगस्त्य मुनिने नाश किया, यह गुणोंसे भरा हुआ और रमणीय स्थान उसी अगस्त्य मुनिका

है। हे युधिष्ठिर ! यह पवित्र गङ्गा पृथ्वीमें ऐसी विराजमान है, जैसे वायुसे उड़ती हुई ध्वजा आकाशमें शोभित होती है। हे राजन् ! जैसे नागराजकी स्त्री शिखर, ऊंचे स्थान और शिलाओं पर विराजनेसे शोभित होती है, तैसेही गंगाभी विराजमान है, यह दक्षिण दिशाकी माताके समान रक्षा करती है, यही पहले शिवकी जटासे निकली थी, यह समुद्रकी प्यारी स्त्री है, इस पवित्र नदीमें आप इच्छानुसार स्नान कीजिये। हे युधिष्ठिर ! हे महाराज ! यही देव और ऋषिसेवित तीन लोक विख्यात भृगु मुनिका आश्रम है, जिसका स्पर्श करनेसे रामका गया हुआ तेज प्राप्त हुआ था। हे पाण्डव ! तुम यहां स्नान करो, यहां स्नान करनेसे जो तेज तुम्हारा दुर्य्योधनने ले लिया है, सो सब प्राप्त होगा, ऐसेही राम-कोभी पुनः तेज मिल गया था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय ! वहां पर महाराज युधिधिष्ठिरने द्रौपदी और अपने भाइयोंके सहित स्नान करके पितर और देवतोंका तर्पण किया, उसमें स्नान करतेही युधिष्ठिरका तेज बहुत बढ़ गया और शत्रुओंसे जीतने योग्य न रहे, तब कुरुनन्दन युधिष्ठिरने लोमश मुनिसे प्रश्न किया कि हे भगवान् ! पहले समयमें परशुरामका तेज क्यों नष्ट होगया था, और फिर उनको तेज क्यों प्राप्त हुआ था ? श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजेन्द्र ! आप परशुराम और रामकी कथाको सुनिये, महात्मा दशरथके पुत्रका नाम राम था, वे रावणके नाश करनेके वास्ते साक्षात् विष्णुका अवतार, थे, हमने उनको अयोध्यामें दशरथके घरमें उत्पन्न होते देखा था, और परशुराम भृगुवंशमें ऋचीकके वीर्य्यसे रेणुकाके गर्भमें उत्पन्न हुए थे, वे क्लिष्टकर्म्मकारी दशरथपुत्र रामके अनेक कर्म्म सुनकर आश्चर्य्ययुक्त होकर अयो॰ाको गये, और उस धनुषको अपने संग लिये गये, जिससे उन्होंने क्षत्रियोंका नाश किया था, उन्होंने अपने मनमें विचार लिया था कि आज वह रामचन्द्रके बलकी परीक्षा करेंगे। जब राजा दशरथने सुना कि परशुराम हमारी सीमा पर आये हैं; तब उन्होंने अपने बड़े पुत्र रामको उनको लेनेके लिये भेजा, परशुरामने देखा कि राम अस्त्र शस्त्रोंको धारण किये हुए खड़े हैं। हे कौन्तेय ! तब परशुरामने हंसकर रामचन्द्रसे ऐसा कहा, हे राजेन्द्र ! मैंने बहुत रोजतक इस धनुषको धारण किया है, यदि आपको कुछ सामर्थ्य हो तो इसको बहुत यत्नसे चढ़ाओ, उनके वचन सुनकर रामने कहा कि हे भगवन् ! हम आप-के ऊपर आक्षेप नहीं कर सकते और हमभी क्षत्रियोंके धर्म्ममें कुछ नीच नहीं हैं, विशेषतः इक्ष्वाकुवंशीय क्षत्रिय तो बाहुबलसेही प्रसिद्ध हैं। उनके ऐसे वचन सुन, परशुराम बोले, कि हे राघव ! बकने से कुछ नहीं होगा, यदि शक्ति हो तो धनुषको चढ़ा लो, अनन्तर क्षत्रियोंके नाश करनेवाले परशुरामके हाथसे रामने क्रोधमें भरकर धनुष ले लिया, हे भारत ! बलवान् रामने खेलके समान धनुष पर रोदा चढ़ा कर सबको आश्चर्य देते हुए टङ्कार करा, उस वज्रके समान धनुषके शब्दको सुनकर सब प्राणी डरगये, अनन्तर दशरथकुमार रामने परशुरामसे कहा कि हे ब्राह्मण ! हमने यह धनुष चढ़ा लिया, अब कहिये आपका हम कौनसा काम करें ? तब यमदग्निके पुत्र महा-तेजस्वी परशुरामने रामको एक बाण दिया और कहा कि इसको कानतक खींचो, श्रीलोमश मुनि बोले, परशुरामके ऐसे वचन सुन क्रोधमें भरकर राम कहने लगे कि, हे भार्गव ! हमने सुना है, कि आप अभिमानसे भरे हुए हैं, और क्षमाशील हैं, ब्रह्माके प्रसादसे तुम्हें क्षत्रियों-का विशेष तेज प्राप्त हुआ है, निश्चय इसी कारण तुम हमसे विवाद करते हो, देखो हम

तुमको दिव्य दृष्टि देते हैं, तुम हमारे रूपको देखो। तब परशुरामने रामके शरीरमें सूर्य्य, वसु, रुद्र, साध्य, वायु, पितर, अग्नि, तारे ग्रह, गन्धर्व्व, राक्षस, यक्ष, नदी, तीर्थ ऋषी, वालखिल्य, सनातन ब्रह्मभूत, सब देवर्षि, समुद्र, पर्व्वत, उपनिषदोंके सहित यज्ञ, शरीर धारी सामवेद, धनुर्वेद, मेघोंके समूह, बिजुली, और वर्षा देखे। तब भगवान रामस्वरूपी विष्णुने उस बाणको चढ़ाकर छोड़ दिया, उसके छोड़तेही सब जगत् सूखे वज्र, बिजुली, धूला और मेघोंके वर्षासे पूरित होगया, उसी समय पृथ्वी कांपने लगी, घोर शब्द होने लगे, उसी समय रामने परशुरामका तेज छीन कर उनको बिकल कर दिया, बाण रामके हाथसे छूटतेही प्रकाशित होने लगा, उसी समय परशुरामको मूर्छा होगई, थोड़े समयके पश्चात् परशुराम चैतन्य हुए, परन्तु उन्होंने अपनेमें विष्णुका तेज न पाया अनन्तर रामकी आज्ञा से वे महेन्द्र पर्व्वतको चले गये, अनन्तर महातपस्वी परशुराम लज्जित और भीत होकर वहीं वास करने लगे, अनन्तर एक वर्ष बीतनेके पश्चात् तेज रहित, दुःख सहित, परशुरामसे पितर लोग कहने लगे, पितर बोले, हे पुत्र! तुमने विष्णुके पास जाकर यह काम अच्छा नहीं किया, क्योंकि वे सदासे पूजनीय और माननीय हैं। हे पुत्र! अब तुम पवित्र वधूसर नामक नदीमें स्नान करो, वहां स्नान करनेसे तुम्हे फिर वही तेज मिल जायगा, वहां तप्तोदक नामक कुण्ड है, वहीं तुम्हारे पड़दादा भृगुने महा तप किया था। हे कुन्तीनन्दन! हे पाण्डुपुत्र! परशुरामने अपने पितरोंके वचन सुनके वैसाही किया, तब इस तीर्थ में स्नान करनेसे उन्हें फिर वही तेज प्राप्त होगया। हे महाराज! इस प्रकार शुद्ध कर्म्मवाले परशुरामने स्नान करके रामसे छीने हुए तेजको प्राप्त किया था।

९९ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे द्विजोत्तम! मैं महाऋषि अगस्त्य मुनिके कर्म्मोंको विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहता हूं। श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजा! यह अद्भुत अमानुषी दिव्य कथा आप सुनिये, हे महाराज! अनन्तर तेजस्वी अगस्त्यके चरित्रको हम कहते हैं। सत्युगमें महा योद्धा, घोर, परम दारुण, कालकेय नामक राक्षस उत्पन्न हुए थे उन सबोंने वृत्रासुरको अपना राजा बनाया, फिर अनेक शस्त्र और अस्त्र लेकर इन्द्र आदिक देवतोंके ऊपर चढ़ाई करी, तब देवतोंनेभी इन्द्रको अगाड़ी करके वृत्रासुरके मारनेका यत्न किया, अनन्तर सब देवता लोग ब्रह्माके पास गये, उनको हाथ जोड़े और स्तुति करते हुए देख ब्रह्मा बोले, कि हे देवतो! आप लोगोंने जो कुछ काम करनेकी इच्छा करी है, सो हम सबही समुझ गये हैं, हम वह उपाय बतलाते हैं, जिससे तुम वृत्रासुरको मारोगे। एक उदार बुद्धिवाला दधीच नामक ऋषि है, तुम सब लोग इकट्ठे होकर उसके पास जाकर वर मांगो, वह मुनि परम धर्म्मात्मा है, इस लिये प्रसन्न होकर तुन्हें वर देंगे, तब तुम सब लोग इकट्ठे होकर विजयकी इच्छा करके दधीच मुनिसे कहना कि आप तीनों लोकके हितके निमित्त अपनी हड्डी हमको दीजिये, वे अपने शरीरको छोड़कर हड्डी तुमको देंगे, तब तुम लोग उन्हीं हड्डियोंसे दृढ़ और महा घोर वज्र बनाना, वह वज्र महाशत्रुओंका नाश करनवाला होगा उसमें छःकोने होंगे, उसका शब्द बड़ा भयानक होगा, उसही वज्रसे इन्द्र वृत्रासुरको मारेंगे, हमने सब उपाय तुमसे कह सुनाया तुम लोग इसको शीघ्रही करो। देवता लोग ब्रह्माके वचन सुन उनकी आज्ञा ले नारायणको अगाड़ीकर दधीचके आश्रम पर गये, वह आश्रम सरस्वती पार अनेक वृक्ष और लताओंसे शोभित था, उसमें भौंरे गंजते फिरते, जहां

कोकिल आदिक अनेक पक्षी और जन्तु बोल रहे थे, भैंसे सूअर, हरिन चमरी और शार्दूल आदि सब जन्तु विना भय जहां एकही संग चरते थे, जहां मतवारे हाथी हथिनियोंके समेत तलावों में क्रीड़ा और शब्दकार रहे थे, जहां सिंह और व्याघ्रादिकोंके शब्दसे एक गुञ्जार उठती थी, जहां गुफा और कन्दराओंमें रहनेवाले जन्तुओंके शब्दोंसे वन गुञ्जार रहा था, जो वन किसी किसी स्थानमें स्वर्गके समान सुन्दर था उस दधीचके आश्रम पर देवता लोग आये, उन्होंने तेज और लक्ष्मीसे भरे हुए दधीचकी ब्रह्मा और सूर्य्यके समान प्रकाशमान देखा। हे राजन्! देवतोंने उनके चरणमें प्रणाम करके अपना अपना नाम सुनाया और ब्रह्माके कहे हुए वरदानकी मांगा। अनन्तर दधीचने बहुत प्रसन्न होकर ऐसा कहा, हे देवतो! जो वरदान तुम लोगोंने मांगा, हम बहुत प्रसन्न होकर वही तुमको देते हैं, हम अपनी इच्छासे अपने शरीरको छोड़ते हैं। पुरुषोंमें श्रेष्ठ जितेन्द्रिय महात्मा दधीचने प्राणको उसी समय छोड़ दिया, तब देवतोंने ब्रह्माके उपदेशके अनुसार उनकी हड्डियोंको ग्रहण किया, देवतोंने प्रसन्न होकर अपने विजय का निश्चय कर लिया, अनन्तर उन्होंने विश्वकर्म्माको जाकर हड्डी दी और शस्त्र बनानेको कहा, विश्वकर्म्माने उन हड्डियोंसे यत्नपूर्व्वक शस्त्र बनाया, उस शस्त्रका नाम वज्र रक्खा, अनन्तर उस उग्ररूप वज्रको विश्वकर्म्मा लेकर इन्द्रके पास गये और प्रसन्न होकर ऐसा कहने लगे, हे देव! इस वज्र शस्त्रसे आप उस उग्र राक्षसको भस्म कीजिये, राक्षसोंके मरनेके पश्चात् आप आनन्दपूर्व्वक सब वस्तुवोंके सहित स्वर्गका राज्य कीजिये। विश्वकर्म्माके वचन सुन इन्द्रने प्रसन्न होकर वज्रको ग्रहण किया।

१०० अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर इन्द्रने वज्रको धारणकर और बलवान देवतोंसे रक्षित हो, नगर द्वार पर पड़े हुए वृत्रासुरसे युद्ध करनेको चले, वृत्रासुरके संग शस्त्रधारी महाशरीरवाले राक्षस ऐसे दिखे बड़े थे, जैसे शिखरधारी पर्व्वत होते हैं। हे भरतश्रेष्ठ! उस समय देवता और दानवोंका एक क्षणभर महा घोर लोकभयङ्कर युद्ध हुआ, उस समय वीरलोगोंके हाथसे चलते हुए और शत्रुओंके शरीर पर गिरते हुए खड्गोंका और दूसरे खड्गके लगकर टूटनेका महा घोर शब्द हुआ हे राजन्! उस समय जो सिर कट कटकर आकाशसे पृथ्वी पर गिरते थे, उनको शोभा ऐसी भान होती थी, जैसे ताड़के फल गिरनेसे शोभा होती है, कालकेय राक्षस लोग सोनेके कवच पहनकर परिघ आदि अस्त्रोंको लेकर देवतोंको ओर ऐसे दौड़े जैसे जलती आगवाले पर्व्वत, देवता लोग इनको अभिमानके साथ और वेगसे दौड़ते हुए देख उनके वेगको न सह सके और भयसे इधर उधर भागने लगे, उनको भयसे इधर उधर भागते हुए और राक्षसोंको बढ़ते हुए देखकर सहस्रनेत्र इन्द्रको महा दुःख हुआ और स्वयम् इन्द्रभी वृत्रासुरके भयसे घबराकर नारायणकी शरण गये, सनातन परमेश्वरने इन्द्रको डरा हुआ देख उनमें अपना तेज दिया, उस तेजसे इन्द्रका बहुत बल बढ़ गया। इन्द्रको विष्णुके तेजसे युक्त देखकर सब देवता और निर्म्मल महर्षियोंनेभी अपना अपना तेज इन्द्रको दे दिया। इन्द्र विष्णु, देवता और महाभाग ऋषियोंके तेजको प्राप्त करके बहुतही बलवान हुए, जब वृत्रासुरने देखा कि इन्द्र बलसे भरकर हमारे सामने युद्धमें आया है, तो महाशब्दसे गर्जने लगा, उसके घोर शब्दसे पृथ्वी, दिशा, आकाश और सब पर्व्वत हिलने लगे। उस घोर शब्दको सुनकर और भयसे व्याकुल होकर इन्द्रने

उसे मारनेको वज्र छोड़ा, हे राजन्! वह सोनेकी मालाधारी राक्षस वज्र लगनेसे मरकर महा पर्व्वतके समान पृथ्वीमें ऐसा गिरा जैसे विष्णुके छूटकर मन्दराचल गिरा था। उस महा राक्षसके मरनेके पश्चात् इन्द्र डरसे तालावमें घुसनेको भागे, उन्होंने न अपने हाथसे वज्रको छूटते और न वृत्रासुरको मरते जाना। अनन्तर सब देवता और महर्षियोंने इन्द्रकी प्रसन्न होकर स्तुतिकी और वृत्रासुरके मरनेसे दुःखी राक्षसोंको मार डाला। अनन्तर राक्षस लोग देवतोंके भयसे समुद्रमें घुस गये, जल और जलजन्तुओंसे भरे हुए समुद्रमें जाकर राक्षस लोग तीनों लोक विनाश करनेकी सम्मति करने लगे, उनमें जो जो वुद्धिमान दैत्य थे, वे अच्छे उपायोंका विचार करने लगे, वहां पर समय और प्रारब्धके वशसे उन दैत्योंकी सम्मतिमें यही घोर वात निश्चय ठहरी कि पहले विद्या और तपसे भरे हुए मुनियोंका नाश करना चाहिये, क्योंकि सब लोक तपस्याहीसे स्थिर हैं, अतएव पहले तपनाश करनेका शीघ्र उपाय करना चाहिये। जो कोई जगत्में तपस्वी, धर्म्मज्ञ और धर्म्मके जाननेवाले हैं, पहले उन्हींका नाश करना चाहिये, क्योंकि उनके मरनेहीसे सब जगत्का नाश हो जायगा, उन निर्वुद्धि लोगोंने इस प्रकार जगतके नाशका निश्चय किया और वहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर समुद्रके वीचमें किला वनाकर उसही वरुणके स्थान रत्नाकरमें रहने लगे।

१०१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! कालिय दैत्य लोग जलके स्थान समुद्रमें रहकर जगत्का विनाश करने लगे। वे राक्षस लोग क्रोधसे भरकर मुनियोंके पवित्र आश्रम और तीर्थोंमें जाकर क्रोधसे भरकर प्रति रात्रि सात मुनियोंका नाश करने लगे, उन दुष्टात्माओंने वशिष्ठ मुनिके आश्रममें जाके एक सौ अठ्ठासी ऋषियोंको खा लिया और नव तपस्वियोंको और नाशकर दिया, ब्राह्मण सेवित च्यवन मुनिके पवित्र आश्रममें जाकर राक्षस लोग फल मूल भक्षी सौ मुनियोंको खा गये। इसी प्रकार भरद्वाज मुनिके आश्रम पर जाकर नियमधारी, ब्रह्मचारी, वायु भक्षी वीस ऋषियोंको खा गये, इस प्रकार वे लोग रात्रिको मुनियोंको खाकर दिनमें समुद्रमें घुस जाते थे। इस प्रकार भुजवलसे उन्मत्त राक्षस लोग रात्रिमें सब आश्रमोंमें जाकर वाधा करने लगे। वे कालिय लोग कालके वशमें होकर अनेक ब्राह्मणोंका नाश करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! उन मुनियोंके मारनेवाले दैत्यको कोई पुरुष नहीं जानता था, परन्तु मुनिलोग प्रातःकाल होनेसे देखते थे कि अनेक तपस्वी पृथ्वीमें मरे हुए पड़े हैं। मरे हुए मुनि मांस, रुधिर, मज्जा और आंतोंसे रहित पृथ्वीमें पड़े रहते थे, उस समय उन मुनियोंकी हड्डीयोंसे पृथ्वी ऐसी शोभित हुई, जैसी शङ्खोंके ढेरसे, उस समय टूटे हुए कलश स्रुवे अग्नि भ्रष्ट अग्निहोत्रोंसे पृथ्वी भर गई। कालिय राक्षसोंके भयसे पीड़ित जगत् वेद पाठ, वषटकार, यज्ञ, क्रिया और उत्सोंवोंसे रहित हो गया। हे नरनाथ! इस प्रकार ऐसा कर्म्म होनेसे पुरुष लोग कम होने लगे, तब भयसे पूरित होकर अपने वचावके निमित्त मनुष्य इधर उधर भागने लगे, कोई गुफामें, और कोई झरनोंमें घुस गये तथा कोई मरनेके भयसे अपने प्राणोंको छोड़ने लगे, कोई महावीर धनुषधारी परम प्रसन्न होकर राक्षसोंके ढूढ़नेमें यत्न करने लगे, परन्तु उनको वे समुद्रवासी राक्षस न मिले, अनन्तर थककर वैठ रहे, वहुतसे नष्टभी होगये। हे नरनाथ! इस प्रकार जगत्में आपत्ति आनेसे सब यज्ञ

और उत्सव नष्ट होगये, तब देवतोंको बहुत दुःख हुआ, तब भयसे व्याकुल होकर इन्द्रादिक देवतोंने सम्मति करी, अनन्तर यह सब शरण देनेवाले देवतोंके देव जगत् पति नारायणकी शरण गये, तब सब देवतोंने अपराजित मधु नामक नारायणसे ऐसे वचन कहे। हे प्रभो! हमारे और सब जगत्के उत्पन्न करनेवाले पालन करनेवाले और नाश करनेवाले हैं, यह सब चर और अचर जगत आपहीका बनाया हुआ है, हे कमलनेत्र! पहले जब पृथ्वी समुद्रमें डूब गई थी, तब आपने सूकरका रूप बनाकर उसका उद्धार किया था। हे पुरुषोत्तम! आपने पहले नरसिंह रूप बनाकर आदि दैत्य महा बलवान हिरण्य कशिपुको मारा था, जिस बली नामक महा असुरको कोई प्राणी नहीं मार सकता था, उसको आपने वावन रूप धारण करके तीन लोकसे भ्रष्ट कर दिया था, जो महाशस्त्रधारी यज्ञोंका नाश करनेवाला जम्भ नामक राक्षस था, उसकोभी आपहीने मारा था, हे मधुसूदन! आपने इसको आदि लेकर औरभी अनेक कर्म्म ऐसे किये हैं, आप डरे हुए देवतोंकी गति हैं हे देवदेवेश! अब जो कार्य्य उपस्थित हैं, सो हम लोग आपसे निवेदन करते हैं, आप देवता इन्द्र और सब लोगोंको महा भयसे रक्षा कीजिये।

१०२ अध्याय समाप्त।

देवतालोग बोले, हे प्रभो! आपकी कृपासे चार प्रकारकी प्रजा बढ़ती हैं, वे बढ़कर हव्य और कव्योंसे देवतोंकी पूजा करते हैं, इस प्रकार एक दूसरेके आश्रयसे लोक बढ़ते हैं, आपको कृपा और रक्षा करनेसे सब जन्तु सुखी रहते हैं। अब सब लोगोंको महा भय उपस्थित हुआ है, हम नहीं जानते कि रात्रिमें आकर कौन ब्राह्मणोंको मार जाता है? ब्राह्मणोंके नाश होनेसे पृथ्वीका नाश और पृथ्वीके नाश होनेसे स्वर्गका नाश हो जायगा। हे महाबाहो! हे जगत्पते! केवल आपकी कृपासे सब लोग बच सक्ते हैं। जब आप रक्षा करेंगे, तब कोईभी नष्ट नहीं होगा। विष्णु बोले, हे देवतो! प्रजाके नाशका कारण हमने जान लिया, तुम लोगोंसे कहते हैं, तुम लोग सुखी होकर सुनो, जो परम कठोर कालेयक नामक राक्षसोंका एक दल प्रसिद्ध है, जिसने वृत्रासुरका आश्रय लेकर सब जगतको दुःख दिया था, वेही लोग इन्द्रसे वृत्रासुरको मरा हुआ देखकर अपने जीवनकी रक्षाके निमित्त समुद्रमें घुस गये हैं, वेही लोग घोर वक्र और ग्राहोंसे भरे हुए समुद्रमें रहते हैं, वेही रात्रिको निकलकर ऋषियोंका नाश करते हैं, उन लोगोंका नाश नहीं हो सकता क्योंकि वे लोग समुद्रके बीचमें रहते हैं, इस लिये तुम लोगोंको समुद्रके नाश करनेका उपाय करना चाहिये, और अगस्त्यके सिवाय समुद्रको कोई नहीं सोख सकता है और बिना समुद्र सूखे राक्षसोंका नाश होना असम्भव है। देवता लोग विष्णुके ऐसे वचन सुन ब्रह्माकी आज्ञा ले अगस्त्यके आश्रम पर गये वहां जाकर उन्होंने वरुणके पुत्र महातेजस्वी अगस्त्यको ऋषियोंके सहित बैठा हुआ देखा, देवता लोग मित्रावरुणके पुत्र महात्मा तपके समूह अपने कर्मोंसे प्रशंसनीय अगस्त्यको देख बहुत प्रसन्न हुए और स्तुति करते हुए कहने लगे। देवता बोले, जब नहुषके पुत्रसे जगत् अत्यन्त दुःखित हुआ था तब आपहीने शरण दी थी, और उस लोक कण्टकको आपहीने स्वर्गसे गिराया था, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ विन्ध्याचल सूर्य्यके क्रोधसे अत्यन्त बढ़ने लगा था, परन्तु अब आपके वचनको ग्रहण करके नहीं बढ़ता है। जब प्रजा अन्धकार और मृत्युसे नष्ट होने लगती है, तब आपही स्वामी होकर

इसकी रक्षा करते हैं। हरे हुए देवतोंकी सदासे आपही गति हैं। हम लोग आपसे वरदान मांगनेको आये हैं, क्योंकि आप वरदान देनेमें समर्थ हैं।

१०३ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे महामुने! आप इस कथाको विस्तारपूर्व्वक कहिये कि, विन्ध्याचल एकदम क्रोध करके इतना क्यों बढ़ गया था? इस कथाको सुननेकी मेरी बहुत इच्छा है। श्रीलोमश मुनि बोले हे महाराज! जब विन्ध्याचल पर्व्वतने देखा कि सूर्य्य उदय और अस्तके समय सुवर्णमय पर्व्वतराज मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं, तब सूर्य्यसे कहा कि हे सूर्य्य! जैसे तुम प्रतिदिन मेरुकी प्रदक्षिणा करते हो, तैसे हमारीभी प्रदक्षिणा किया करो। पर्व्वतराजके ऐसे वचनको सुन सूर्य्य बोले, कि हम कुछ अपनी इच्छासे मेरुकी प्रदक्षिणा नहीं करते हैं, वरन जिस परमेश्वरने इस जगतको बनाया है, उसीने हमारे निमित्त यह मार्गभी बना दिया है। सूर्य्यके ऐसे वचन सुन विन्ध्याचलको महाक्रोध हुआ और चन्द्रमाके मार्ग रोकनेकी इच्छा करी, अनन्तर सब देवता लोग मिलकर पर्व्वतोंके महाराज विन्ध्याचलके पास आये, उन्होंने अनेक उपाय करे कि जिससे विन्ध्याचल न बढ़े, परन्तु विन्ध्याचलने उनका कोई भी वचन न माना। अनन्तर वे सब देवता लोग तपस्वी और धर्म्म धारियोंमें श्रेष्ठ अद्भुत बलवाले आश्रममें बैठे हुए अगस्त्य मुनिके पास जाकर अपना प्रयोजन सुनाने लगे। देवता बोले, हे द्विजोत्तम! यह पर्व्वतराज विन्ध्याचल अत्यन्त क्रोधके वशमें होकर सूर्य्य, चन्द्रमा और नक्षत्रोंके मार्गोंको रोकना चाहते हैं। हे महाभाग! आपके सिवाय इनका और कोई भी नहीं निवारण कर सकता है, इस लिये आपही इनको रोकिये।

अगस्त्य मुनि देवतोंके वचन सुनकर अपनी स्त्रीके सहित विन्ध्याचलके पास गये, विन्ध्याचल भी उनके दर्शनको आये, तब अगस्त्य मुनिने विन्ध्याचलसे कहा कि हे पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ! हम किसी विशेषकार्य्यसे दक्षिण दिशाको जाना चाहते हैं, इस लिये तुम हमको मार्ग दो और जबतक मैं उधरसे लौटकर आऊं तबतक तुम ऐसेही रहकर हमारा मार्ग देखना। हे पर्व्वतराज! जब मैं इधरसे लौट कर आऊंगा तब तुम अपनी इच्छानुसार बढ़ना। हे शत्रुनाशन! अगस्त मुनि इस प्रकार विन्ध्याचलसे प्रतिज्ञा करा कर अबतक भी दक्षिण देशसे लौट कर नहीं आये, हमने जिस प्रकार विन्ध्याचल नहीं बढ़ता है, सो सब कथा आपसे कही। जो तुमने हमसे अगस्त मुनिका प्रभाव पूछा था, सो हमने कहा। अब जिस प्रकार अगस्त्य मुनिके वरदानसे देवतोंने कालेय राक्षसोंका नाश किया सो कथा सुनिये; हे महाराज! देवतोंके पूर्वोक्त वचन सुन मित्रावरुणके पुत्र अगस्त्य मुनिने कहा कि तुम लोग हमारे पास क्यों आये हो? कहो हमसे कौन वरदान मांगना चाहते हो? मुनिके ऐसे वचन सुनकर देवता लोग बोले। हे महात्मन्! हम लोग चाहते हैं कि आप समुद्रका पीकर हमारा कार्य्य कीजिये, आपके ऐसा करनेसे हम लोग देवतोंके शत्रु कालेय दैत्योंको परिवारके सहित नाश कर देंगे। देवतोंके वचन सुनकर अगस्त्य मुनिने कहा कि हम ऐसाही करेंगे। अगस्त्य मुनि बोले कि जिसमें लोकोंका उपकार हो सो आप लोगोंका काम हम सुख पूर्व्वक करेंगे, ऐसा कहकर अगस्त्य मुनि सिद्ध, ऋषि और देवतोंके सहित नदियोंके पति समुद्रके पास गये। हे उत्तम व्रतधारी! उनके पीछे मनुष्य, सर्प, गन्धर्व्व, यक्ष, और किन्नर चले। महात्मा अगस्त्यके सङ्ग उनका अद्भुत कर्म्म देखनेकी इच्छासे सब लोग इकट्ठे होकर घोर शब्दवाले

समुद्रके तटपर पहुंचे, उन्होंने समुद्रको ऐसा देखा मानो तरङ्गोंसे नाच रहा है, वायुसे घूम रहा है, और फेनोंके समूहोंसे हंस रहा है, जिसकी तरङ्ग कन्दराओंमें भर रही हैं, अगस्त्यके सहित देवता, गन्धर्व्व महासर्प, और महाभाग ऋषिलोग ग्राह, मगर और अनेक पक्षियोंसे भरे हुए समुद्रके तट पर पहुंचे।

१०४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, कि वरुणके पुत्र भगवान अगस्त्य मुनि जब समुद्रतट पर पहुंचे, तब सब देवता और ऋषियोंसे कहने लगे, देखो हम सब लोकके हितके निमित्त समुद्रको पीते हैं। आपलोगोंको जो कुछ काम करना हो, सो शीघ्र कीजिये, मित्रावरुणके पुत्र अमर अगस्त्य मुनिने ऐसा कहकर सब जगत्के आगे क्रोधमें भरकर समुद्रको पीलिया, जब इन्द्र आदिक देवतोंने देखा कि अगस्त्य मुनि सब समुद्रको पीगये तो परम आश्चर्य करके स्तुति और पूजा करने लगे। देवता कहने लगे, हे लोकभावन! तुम हमारे रक्षा करनेवाले और धारण करनेवाले हो, तुम लोकोंके स्वामी हो तुम्हारीही कृपासे जगत नष्ट नहीं होता है, इस प्रकार महात्मा अगस्त्यकी देवता लोग पूजा करने लगे और गन्धर्व्व लोग सब और अपने बाजे बजाने लगे, दिव्य फूलोंकी वर्षाहोने लगीं, तब अगस्त्य मुनिने समुद्रको जलसे रहित कर दिया, समुद्रको जलसे रहित देखकर महा बलवान देवतोंने परम प्रसन्न होकर दिव्य शस्त्र धारण करके राक्षसोंको मारना आरम्भ किया। वेगवान महात्मा स्वर्गवासी बलवान देवतोंसे पीड़ित होकर दानव लोग उनके बलको न सह सके, पहले तो वे लोग तपस्वी मुनियोंके तपसे नष्ट हुए थे, फिर जो कुछ यत्न करके बचभी गये थे उनको देवतोंने नाश कर दिया, सोनेके आभूषण, कुण्डल, और बाजू बन्द धारी दानव लोग मरते समय ऐसे शोभित हुए जैसे फूले हुए टेसू। हे पुरुषश्रेष्ठ! जो कुछ दानव मरनेसे बचे, वे सब पृथ्वीको फाड़कर पातालमें चले गये। जब दानव लोग नष्ट हो गये, तब अगस्त्य मुनिकी स्तुति कर देवता लोग बोले, हे महाबाहो! आपकी कृपासे हम लोगोंने जगतमें बहुत सुख प्राप्त किया, आपहोंके तेजसे घोर पराक्रमी कालेय दानवोंका नाश हुआ। हे लोक भावन! आपने जो समुद्रका जल पिया है, उसको फिर छोड़ दीजिये जिसमें समुद्र भर जाय, उनके बचन सुन मुनियोंमें श्रेष्ठ भगवान अगस्त्य मुनि बोले, हे देवतो! वह सब जल हमको पच गया, अब तुम लोग कोई दूसरा उपाय सोचो, आपलोग कोई ऐसा उपाय कीजिये जिसमें समुद्र भर जाय। महात्मा अगस्त्य मुनिके ऐसे बचन सुन सब देवता लोगोंको बहुत आश्चर्य और दुःख हुआ, आपसमें सम्मति करके मुनीश्वरको प्रणामकर सब लोग अपने अपने घरको चले गये। हे महाराज! विष्णुके सहित सब देवता लोग समुद्रको पूरा करनेका विचार करते हुए ब्रह्माके यहां गये; जाकर हाथ जोड़ समुद्रकी सब कथा सुना दी।

१०५ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले, सब देवतोंसे लोकके पितामह ब्रह्मा ऐसा बोले, हे देवता लोगो! तुम सब लोग अपने अपने लोकोंको चले जाओ। समुद्र थोड़े दिनमें आपही भर जायगा, उसके भरनेका कारण अपने जातिके निमित्त महाराज भगीरथ होंगे। ब्रह्माके वचन सुनकर सब देवता लोग अपने अपने घरको चले गये और समुद्र पूर्ण होनेके समयको प्रतीक्षा करने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे मुने! हे ब्राह्मन्! जाति कैसी और कारण क्या? तथा भगीरथके आश्रयसे समुद्र कैसे भर गया था? हे

तपोधन ! हम इस राजाके उत्तम चरित्रको आपसे विस्तारपूर्व्वक सुनना चाहते हैं। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा धर्म्मराजके ऐसे वचन सुन ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ लोमश मुनि महात्मा समुद्रका महात्म्य इस प्रकार कहने लगे। श्रीलोमश मुनि बोले, इक्ष्वाकुलवंशमें प्रताप रूप, तेज और बलसे भरे हुए सगर नामक राजा हुए। उनके कोई पुत्र न थे। उन्होंने हैहय-वंशो और और तालजङ्घवंशी चत्रियोंको जीतकर सब राजोंको अपने वशमें किया और अपने राज्यका पालन करने लगे। हे भरतकुल सिंह ! उनकी जो स्त्रियां थीं, वे दोनों रूप और यौवनके अभिमानसे भरी रहती थीं। एकका नाम वैदर्भी और दूसरीका नाम शैव्या था, राजा अपनी स्त्रियोंके सहित पुत्रकी इच्छासे कैलाश पर्व्वत पर जाकर महा तप करने लगे; हे राजेन्द्र ! महात्मा राजा सगर महातप और महायोग करने लगे, तब तीन नेत्रधारी त्रिपुरासुरके मारनेवाले शङ्कर, जगतके स्वामी, पिनाक और शूलधारी, तीन नेत्रवाले उग्र, सबके स्वामो अनेक रूपधारी पार्व्वतीनाथ शिव उसके पास आये। महाराजने वरदान देनेवाले शिवको देखतेही अपनी स्त्रियोंके सहित प्रणाम किया और हमको पुत्र हो, यह वरदान मांगा। अनन्तर राजोंमें श्रेष्ठ सगरसे प्रेम सहित शिव महाराजने कहा, हे नरनाथ ! तुमने हमसे इस समय पुत्र होनेका वरदान मांगा, इस लिये हम प्रसन्न होके तुम्हें यह वरदान देते हैं कि तुम्हारी केवल एक स्त्रीसे अभिमानसे भरे हुए महा शूरवीर साठ हजार पुत्र होंगे; वे सब लोग एकही दिन एकही स्थानपर नष्ट हो-जायंगे। और एक स्त्रीके वंशकी रचा करनेवाला महा शूरवीर एक पुत्र होगा। सगरसे ऐसा कहकर भगवान शिवजी वहीं अन्तर्द्धान होगये और राजा सगरभी अपने नगर को चले गये, अपनी दोनों स्त्रियोंके सहित घरमें जाकर आनन्द करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ ! राजा सगरकी कमलनैनी वैदर्भी और शैव्या दोनों स्त्रियोंके गर्भ रह गया, अनन्तर समय पूरा होने पर वैदर्भी स्त्रीने एक तूम्बी उत्पन्न करी, और शैव्यास्त्रीके देवतों के समान रूपवाला एक पुत्र उत्पन्न हुआ, तब राजा सगरने उस तूम्बीको फेंक देनेका विचार किया उसी समय आकाशसे गम्भीर स्वरवाली एक वाणी हुई, कि हे राजन ! आप ऐसा साहस मत कीजिये ; इस तूम्बीके भीतर पुत्र है और इस तूम्बीके भीतरसे जो बीज निकले, उनकी यत्नसे रचा कीजिये ; आप इस तून्बीके बीजोंको घीसे भरे हुए किसी पात्रमें रखिये, तब आपको साठ हजार पुत्र मिलेंगे ; हे महाराज ! शिवजीने जो तुमको साठ हजार पुत्र होनेका आशीर्व्वाद दिया था, वे सब इसी तूम्बीमें हैं।

१०६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन ! जब राजा सगरने यह आकाशवाणी सुनी, तो श्रद्धा पूर्व्वक वैसाही काम किया; अर्थात् राजाने एक एक बीजको अलग अलग करके उन सब भागोंको घीके बर्त्तनोंमें पृथक पृथक रख दिया और पुत्रोंकी रचाके निमित्त एक एक धाय सब बर्त्तनोंके समीप रख दी। फिर बहुत काल बीतनेके पश्चात् महा तेजस्वी महावली साठ हजार पुत्र हो गये। हे राजन ! वे सगरके सब पुत्र शिवजोकी कृपासे हुए। वे सब बड़े कठोर, क्रूरकर्म्म करनेवाले, और आकाशमें घूमने वाले हुए। युद्ध करनेवाले, महावीर सगरपुत्र देवता गन्धर्व्व और राचसोंको दुःख देने लगे। उनसे पीड़ित होकर सब जगत्के प्राणी देवतोंके सहित ब्रह्माकी शरणमें गये, सब लोकोंके पितामह ब्रह्माने उन सबसे कहा, कि हे देवता लोगो ! तुम सब प्राणियोंके सहित

अपने अपने स्थान को चले जाओ, थोड़ेही समयमें सगरके सब पुत्रोंका अपने किये हुए कर्म्मोंके अनुसार सर्व्वनाश हो जायगा। हे पृथ्वीनाथ! ब्रह्माके ऐसे वचन सुनके ब्रह्माकी आज्ञा ले सब देवता लोग अपने अपने घरको चले गये। हे भरतकुल सिंह! बहुत समय बीतनेके पश्चात् बलवान राजा सगरने अश्वमेध यज्ञ करना आरम्भ किया और घोड़ा छोड़ा, वेही साठ हजार पुत्र उस घोड़ेकी रक्षा करने लगे। वह घोड़ा सब भूमिमें घूमने लगा, जब घोर दर्शन वाले जल-रहित समुद्रके तट पर आया तो अत्यन्त यत्नसे रक्षा करने परभी वहीं अन्तर्धान होगया, हे तात! जब सगरके पुत्रोंने उस घोड़ेको न देखा, तो अपने पिताके पास आकर उसके गुप्त होने और छिप जानेके सब वृत्तान्त कह सुनाये। राजा सगरने आज्ञा दी कि तुम सब दिशाओंमें घोड़ेकी खोज करो। हे महाराज! वे लोग पिताकी आज्ञा सुन सब दिशाओंमें और सब पृथ्वीमें घोड़ेको ढूंढ़ने लगे; परन्तु उन सबने अत्यन्त ढूंढ़ने पर भी घोड़े और घोड़ेके चोरको न पाया। तब अपने पिताके पास आ हाथ जोड़ कहने लगे कि हे नरनाथ! हम लोगोंने समुद्र, बन, द्वीप नदी, नद, कन्दरा, पर्व्वत और वनोंके सहित सब पृथ्वीको आपकी आज्ञानुसार ढूंढ़ा परन्तु न कहीं घोड़ा और न कहीं घोड़ेका चोर मिला। यह वचन सुनतेही राजाको क्रोध हुआ। हे राजन्! प्रारब्ध वशसे राजा सगरने अपने पुत्रोंसे कहा कि तुम लोग घोड़ेको ढूढ़नेको फिर अगम्य देशोंमें जाओ, हे पुत्रो! बिना उस घोड़ेको लिये तुम लोग यहां मत आना। अपने पिताके वचनको स्वीकार कर दूसरी बार घोड़ा ढूढ़नेके निमित्त सगरके पुत्र सब पृथ्वीमें घूमने लगे। अनन्तर उन्होंने एक स्थान पर पृथ्वीको फटी हुई देखा, तब वे सब वीर लोग उस बिलको खोदने लगे। वह बिल समुद्र था। अनन्तर सगरके पुत्रोंने कुदार और गधालोंसे उसको यत्नपूर्व्वक खोदना आरम्भ किया। उस समय खुदनेसे वरुणके स्थान समुद्रको बड़ा दुःख हुआ, चारों ओरसे समुद्र खुदनेसे उसमें रहनेवाले असुर, सर्प राक्षस और अनेक प्रकारके जन्तु सगर पुत्रोंसे पीड़ा पाकर घोर शब्द करने लगे। उस समय सैकड़ों सहस्रों जन्तु शिर, देह, चर्म्म और सन्धियोंसे नष्ट भ्रष्ट दीखने लगे। इस प्रकार समुद्र खोदते खोदते सगरके पुत्रोंको बहुत समय बीत गया; परन्तु घोड़ा कहीं न मिला। अनन्तर सगरके पुत्रोंने महाक्रोध किया, तब उत्तर और पातालके कोनेमें खोदना आरम्भ किया, और पाताल तक खोदते चले गये, वहां देखा कि, घोड़ा पृथ्वीमें घूम रहा है और उसके पासही ज्वालाके सहित जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी महात्मा कपिलजी भी बैठे हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! वे उस घोड़ेको देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उनके रोम खड़े होगये। अनन्तर महात्मा कपिलजीका निरादर करके कालके वशमें होकर महाक्रोधके सहित घोड़ा पकड़नेको दौड़े। हे महाराज! उनका यह व्यवहार देख महात्मा कपिल मुनिको महा क्रोध हुआ। जिन कपिल मुनिको जगत्के पुरुष कृष्ण कहते हैं, उन्होंने अपने नेत्र खोल सगरके पुत्रोंपर अपना तेज छोड़ा। उसके लगतेही सगरके मन्दबुद्धि पुत्र भस्म होगये; उनके भस्म होतेही महा तपस्वी नारद मुनि सगर राजाके घर गये और उसका वह सब वृत्तान्त कह सुनाया। राजा सगरने मुनिके मुखसे वह सब वृत्तान्त सुनकर कुछ समयतक शोक करके शिवके वचनका स्मरण किया। अनन्तर सगरने असमञ्जसके पुत्र अपने पोते अंशुमानको बुलाकर कहा कि हे तात! हमारे

जो परम तेजस्वी साठ हजार पुत्र थे, सो सब हमारी आज्ञानुसार काम करनेके कारण कपिल मुनके तेजसे नष्ट होगये। और तुम्हारे पिताको हमने पहलेही निकाल दिया है। हे पापरहित! उसके निकाल देनेसे मैंने धर्म्मको रक्षा और नगर निवासियोंका हित साधन किया था।

युधिष्ठिर बोले, हे तपोधन! राजसिंह सगरने दुःखसे छोड़ने योग्य वीरपुत्रको किस लिये घरसे निकाल दिया था? श्रीलोमश मुनि बोले, कि राजा सगरकी शैव्या नामक स्त्रीसे असमञ्जस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, वह नगरवासियोंके दुर्ब्बल लड़कोंका गला और शरीर पकड़कर नदीमें फेंकने लगा। तब नगरके लोग शोक और भयसे पीड़ित होकर राजा सगरके पास आ हाथ जोड़ कहने लगे, कि हे महाराज! आप दूसरे राजोंसे तथा और डरोंसे हम लोगोंकी रक्षा करने-वाले हैं, अतएव असमञ्जसके घोर भयसे हम लोगोंको रक्षा कीजिये। नगरनिवासियोंके घोर वचन सुन राजोंमें श्रेष्ठ सगर क्षणमात्र दुःख करके अपने मन्त्रियोंसे बोले, कि तुम लोग हमारे पुत्र असमञ्जसको इसी समय नगरसे निकाल दो। हे मन्त्रियो! यदि आप लोग हमारा कुछ प्रिय कार्य्य करना चाहते हैं, तो इस कामको शीघ्रही करें। हे पृथ्वीनाथ! राजा सगरके वचन सुन मन्त्रियोंने असमञ्जसको उसही समय नगरसे निकाल दिया। हे नर-नाथ! महात्मा राजा सगरने प्रजाके हितकी इच्छासे जिस प्रकार अपने पुत्र असमञ्जसको नगरसे निकाल दिया था, सो सब कथा हमने तुमसे कही; अब राजा सगरने महा धनुष-धारी अंशुमानसे जो कुछ कहा, सो सब कथा हम आपसे कहते हैं, आप सुनिये। सगर बोले, हे पुत्र! तेरे पिताके निकालने, साठ हजार पुत्रोंके मरने और घोड़ेके न मिलनेसे मेरा शरीर भस्म हुआ जाता है। हे पौत्र! दुःखसे सन्तप्त और यज्ञमें विघ्न होनेसे दुःखित मेरा घोड़ा लाकर नरकसे उद्धार करो।

अंशुमान महात्मा सगरके वचन सुन एवमस्तु कह परम दुःखके सहित उस स्थानको गये, जहां सगरके पुत्रोंने पृथ्वी खोदी थी; वे उसी मार्गसे पातालको चले गये। जाकर महात्मा कपिल और घोड़ेको देखा, उन्होंने तेजके समूह ऋषि-योंमें श्रेष्ठ बूढ़े कपिल मुनि को देख शिरसे प्रणाम किया और अपना प्रयोजन कह सुनाया। हे महाराज! हे भारत! धर्म्मात्मा कपिल मुनि अंशुमानसे बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि तुम्हारी जो इच्छा हो वही वरदान हमसे मांगो। तब उन्होंने यज्ञ पूर्ण होनेकी इच्छासे पहले घोड़ा मांगा, और दूसरा यह वरदान मांगा कि हमारे पितर लोग पवित्र होजायं। तब मुनियोंमें श्रेष्ठ महा तेजस्वी कपिल मुनिने अंशुमान से कहा कि, हे पापरहित! तुम्हारा कल्याण हो, तुमने जो कुछ मांगा सो हमने दिया। तुममें सत्य, क्षमा और धर्म्म स्थिर है, तुमसे सगर पवित्र और पिता पुत्रवान हुए, तुम्हारेही इस प्रभावसे सगरके पुत्र स्वर्गको जायंगे और तुम्हाराही पोता स्वर्गसे गङ्गाको लावेगा। हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम्हारा पोता सगरके पुत्रोंको पवित्र करनेके निमित्त शिवजीको प्रसन्न करके गङ्गा लावेगा, तुम्हारा कल्याण हो, इस यज्ञके घोड़ेको यहांसे ले जाओ, हे तात! महात्मा सगरके यज्ञको समाप्त करो। अंशु-मान, महात्मा कपिलके ऐसे वचन सुनकर घोड़ेको ले महात्मा सगरकी यज्ञशालामें आये, और महात्मा सगरके चरणोंमें प्रणाम कर उनके पुत्रोंके मरनेका वृत्तान्त जैसा देखा और सुना था, कह सुनाया। सगरनेभी अंशुमानका माथा सूंघा। राजा सगर उस घोड़ेको लेकर यज्ञशालामें आये और उन सब वृत्तान्तोंको सुनकर उन्होंने अपने पुत्रोंका शोक छोड़ दिया

और अंशुमानका सम्मानकर यज्ञको समाप्त किया, अनन्तर यज्ञ समाप्तकर राजा सगरने सब देवतोंकी सम्मतिसे वरुणके स्थान समुद्रको अपना पुत्र बनाया। हे कमलनेत्र! इस प्रकार राजा सगरने बहुत दिन राज्य करके अपने पोते अंशुमानको राज्यका भार दे स्वर्ग-यात्रा करी, धर्म्मात्मा अंशुमानभी सागरान्त पृथ्वीका वैसेही राज्य करने लगे, जैसे इनके दादा करते थे। राजा अंशुमानके पुत्र दिलीप हुए। दिलीप परम धर्म्मज्ञ थे, राजा अंशुमान दिलीपको राज्य देकर स्वर्गको चले गये। राजा दिलीप अपने पुरुषोंका इस प्रकार मरना सुनकर और उनकी गतिको विचारकर दुःखसे जलने लगे, और गङ्गाके लानेके लिये परम यत्न करने लगे। परन्तु बलके अनुसार बहुत यत्न करने परभी गङ्गाको पृथ्वीमें न ला सके। उनके भगीरथ पुत्र हुए, ये महा श्रीमान् धर्म्म करनेवाले, सत्यवादी और द्वेष रहित थे, राजा दिलीप भगीरथको राज्य दे आप वनको चले गये। हे भरतर्षभ! वनमें जाकर राजा दिलीप कुछ समयके पश्चात् सिद्धि और योगके बलसे अपने शरीरको छोड़कर स्वर्गको गये।

१०७ अध्याय समाप्त।

———

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! राजा भगीरथ महा धनुषधारी महारथ और चक्रवर्त्ती राजा हुए। उनको देखकर सब जगतके मन और नेत्रोंको आनन्द होता था। महाबाहु भगीरथने जब सुना कि हमारे पितृ लोगोंको महात्मा कपिलने भस्म किया था, और उनको स्वर्ग नहीं मिला, तब दुःखित मन होकर अपना राज्य मन्त्रीको दे आप हिमाचलको चले गये। हे नरनाथ! उन्होंने अपने मनमें विचारा, कि हम तपसे पापोंको जलाकर गंगाकी आराधना करेंगे। हे नरश्रेष्ठ! उन्होंने जाकर अनेक धातु सहित शृंगोंसे भूषित, वायुसे चले हुए मेघोंसे चारो ओर भीगे हुए, नदी, कुञ्ज और नितम्बोंसे शोभित गुफाओंमें बैठे हुए सिंह और व्याघ्रोंसे सेवित विचित्र शरीर और अनेक प्रकारके शब्दवाले पक्षियोंसे विराजमान, भौंरे, हंस, सारस जल कुक्कुट, मोर, शतपत्र, कोयल, चकोर, असिता-पांग और पुत्रप्रिय आदि पक्षि-योंके शब्दोंसे शोभित, तलावोंमें पद्मोके समूहसे विराजमान, सारसोंके मीठे वचनोंसे भूषित, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ हिमाचलको देखा जिसकी शिलाओंपर किन्नर और अप्सरा आनन्द कर रहे थे, जहांके वृक्ष दिग्गजोंके दांतोंसे घिर गये थे, जहां विद्याधर लोग आनन्द कर रहे थे, जो अनेक रत्न और विष से भरे हुए दोजीभ वाले सर्पोंसे प्रकाशित हो रहा था, जो हिमा-चल कहीं सोनेके कहीं चांदीके और कहीं अञ्जनके समान वर्णवाला था। उस पर महा-राज भगीरथ पहुंचे, वहां जाकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथने फल मूल और जल भक्षण करके एक सहस्र वर्षतक घोर तप किया, जब दिव्य सहस्र वर्ष बीत गया तब महानदी गंगाजी अपना स्वरूप धारण करके भगीरथके सम्मुख आईं। गंगाजी बोली, हे महाराज! तुम हमसे क्या चाहते हो? जो तुम कहो सोही हम करें और जो तुम कहो सोही हम दें। गंगाजीके ऐसे बचन सुन हिमाचलकी पुत्रीसे भगीरथ बोले, हे वरदेनेवाली महानदी! मेरे पितामह लोग घोड़ेको ढूढ़ते ढूढ़ते महात्मा कपिलके समीप गये थे, उन्होंने उनको नष्ट कर दिया; सगर महात्माके साठ हजार पुत्र भगवान् कपिलके क्रोधसे क्षणभरमें भस्म हो गये; इस प्रकार नष्ट हुए सगर पुत्रोंको स्वर्गमें वास भी न मिला; हे महानदी! जब तक आप उनके शरीरोंको अपने जलसे स्नान न करावेंगी, तब तक सगरके पुत्रोंको स्वर्ग न होगा; हे महानदी! हे महाभागे! सगरके पुत्र हमारे पुरुषोंको स्वर्गमें पहुंचाइये; यही वरदान

हम आपसे मांगते हैं। श्रीलोमश मुनि बोले, लोकपूजिता गंगाजीने राजाके वचन सुन प्रसन्न हो भगीरथसे कहा हे महाराज! हम निःसन्देह तुम्हारे वचनको करेंगी, परन्तु हमारा वेग बहुत घोर है उसे धारण करनेको पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे नरनाथ! उसको नीलकण्ठ-शिवजीही धारण कर सकते हैं; हे महाबाहो! तुम वर देनेवाले शिवजोको तपस्यासे प्रसन्न करो, वही महादेव स्वर्गसे गिरी हुई हमको अपने सिर पर धारण करेंगे। वह पितरोंके हितके निमित्त तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे। हे राजन्! महाराज भगीरथने गंगाजीके वचन सुन कैलाश पर्व्वतमें जा घोर तपस्या करके शिवजीको प्रसन्न किया। तब राजा भगीरथने अपने पितरोंके स्वर्गमें जानेके निमित्त शिवसे यही वरदान मांगा, कि आप गंगाजीको अपने सिर पर धारण कीजिये।

१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! राजा भगीरथके वचन सुन देवतोंकी प्रिय कामनासे भगवान शिवजीने उनके वचनको स्वीकार करके कहा, कि हे महाभाग! हे राजोत्तम! हम स्वर्गसे गिरती हुई कल्याणपवित्र देवनदीको तुम्हारे हितके निमित्त धारण करेंगे; हे महाबाहो! शिवजी भगीरथसे ऐसे वचन कह नानाशस्त्रधारी गणोंके संग हिमाचल पर पहुंचे। वहां आकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथसे बोले कि, हे महाबाहो! अब तुम पर्व्वतराजपुत्री गंगाकी प्रार्थना करो, जब वे नदियोंमें श्रेष्ठ गंगा स्वर्गसे गिरेंगी तो हम धारण करेंगे। शिवजीके वचन सुन अपने मनको स्थिर और विनीत कर भगीरथने गंगाजीका ध्यान किया, उनके ध्यान करतेही और शिवजीको बैठे हुए देख पवित्र जलवाली रमणीय गंगा स्वर्गसे गिरीं। गंगाको गिरते हुए देख देवता, महाऋषि, गन्धर्व्व, सर्प, और यक्ष लोग देखनेकी इच्छासे आये। उसी समय हिमाचलकी पुत्री गंगा स्वर्गसे गिरीं। जिसमें बड़ी बड़ी तरंग उठती थीं, जो मकरी और ग्राहोंसे भरी हुई थी, हे राजन्! उस गंगाको शिवजीने अपने शिर पर भूषणके समान धारण किया। हे राजन्! वह तीन धारावाली गंगाजी शिवजीके शिर पर मोतीकी मालाके समान शोभित होने लगीं। जो गंगाजी समुद्रमें जानेवाली, फेनोंसे भरी हुई, जलसे पूर्ण हैं, सो ऐसी विराजमान हुई, जैसी हंसकी पंक्ति, कहीं भौंरोंसे कुटिल, कहीं कहीं जलसे भरी हुई, उस समय गंगाजीकी फेनरूपी कपड़ा पहननेसे ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सुन्दरी स्त्रीकी। कहीं जलका घोर शब्द होने लगा, इस प्रकार आकाश से गिरती हुई गंगाकी शोभा बढ़ी। अनन्तर पृथ्वीमें आकर गंगाजीने भगीरथसे कहा, कि हे पृथ्वीनाथ! हे महाराज! मैंने तुम्हारे लिये पृथ्वीमें औतार लिया है, कहो अब मैं कौनसे मार्गसे चलूं? राजा भगीरथने लोक पूजित शिवजीके सिरमें गंगाजीको स्थापन करके अपने पुरखोंको पवित्र जलसे स्नान करानेके निमित्त उधरही चले जिधर महात्मा सगरके साठ हजार पुत्र मरे पड़े थे। अनन्तर शिवजीभी देवतोंके सहित गंगाजीको धारण करके पर्व्वत श्रेष्ठ कैलाशको चले गये। अनन्तर राजा भगीरथने गंगाको समुद्रतक पहुंचा दिया, गंगाने वरुणके स्थान समुद्रको अपने जलसे पूर्ण कर दिया, राजा भगीरथने गंगाको अपनी पुत्री बनाया और मनोरथ पूरा करके अपने पुरखोंको जलदान किया। हे महाराज! आपने जो हमसे गंगाका वृत्तान्त पूछा था, सो हमने आपसे सब कहा। इस प्रकार स्वर्ग मर्त्त और पातालमें जाने वाली गंगा समुद्रको पूर्ण करनेके निमित्त पृथ्वीमें आयी थीं और इस प्रकार महात्मा अगस्त्यने समुद्रको पीया था और इस प्रकार वातापी राक्षसका नाश

हुआ था। अब आप जो हमसे पूछें सो हम कहें।

१०९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह जनमेजय! तब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर क्रमसे चलते पाप भयका नाश करनेवाली नन्दा और परम नन्दा नदीके तट पर पहुंचे, वहांपर सुन्दर हेमकूट नामक पर्व्वत पर जाकर राजा युधिष्ठिरने अनेक अद्भुत भावोंको देखा। जहां सहस्रों मेघ और ओले वायुके वशसे स्थिर थे जिनके भयसे पुरुष ऊपर नहीं जा सकते थे, इसीसे पुरुषोंको महा दुःख होता था जहां सदाही वायु चलता था और सदाही जल बरसता था, जहांके शब्द सुनाई देते थे, परन्तु पढ़नेवालेका रूप नहीं दीखता था, जहां सन्ध्याको और भोरको भगवान अग्निके दर्शन होते थे, जहां तपके नाश करनेवाली मक्खी पुरुषोंको काटती थीं, जहां जानेसे चित्तको बहुत ग्लानि होती थी, जहां जानेसे घरके पुरुषको स्मरण करते थे, महाराज युधिष्ठिरने ऐसी ऐसी अनेक विचित्र बातोंको देख लोमश ऋषिसे इसका कारण पूछा। श्रीलोमश मुनि बोले, हे शत्रुनाशन! हमने इस विषयकी जैसा सुना है, वैसाही आपसे कहते हैं, आप एकाग्रचित्त होकर सुनिये। इस ऋषभकूट नामक पर्व्वतमें एक ऋषभ नामक मुनि हुये थे, उनकी कई सौ वर्षकी अवस्था थी; परन्तु वे परम क्रोधी थे। उन्होंने किसीके वचन सुनकर महाक्रोधसे पर्व्वतसे कहा कि जो कोई यहां आकर कुछ बोलेगा उसके ऊपर हिम बरसेगा, अनन्तर मुनिने क्रोध करके वायुसे कहा कि शब्द मत करो, जो यहां बोलेगा उसका मेघका शब्द निवारण करेगा। हे महाराज! इस प्रकार उस महाऋषिने क्रोधके वशमें होकर अनेक अद्भुत कर्म्म किये और अनेक कर्म्मोंको रोक दिया। हे राजन्! हमने सुना है, कि पहले समयमें देवता लोग नन्दापर गये थे और मनुष्य लोगभी उनके दर्शनकी इच्छासे उनके पीछे गये थे। वहां इन्द्रादिक देवतोंने पुरुषोंको दर्शन देना नहीं चाहा। तब यह विघ्नरूपी दुर्ग बनाया है। यह देश इसके बीचमें है, हे कुन्तीनन्दन! तबहींसे मनुष्य लोग इस पर्व्वतको देखभी नहीं सकते हैं और चढ़नेकी तो कथाही क्या है? हे कुन्तीनन्दन! विना तप किये हुए, इस महा पर्व्वतको कोईभी पुरुष नहीं देख सकता है, अतएव तुम सावधान हो जाओ। हे भारत! इसही स्थान पर देवतोंने उत्तम उत्तम यज्ञ किये हैं, जिनके चिह्न अभीतक दीखते हैं, देखो यह कुशाके समान घास, बिछौनेके समान भूमि और यूपके समान अनेक वृक्ष लगे हैं। हे पृथ्वीनाथ! हे भारत! यहांपर अबभी अनेक देवता और ऋषि बसते हैं, उनहीके अग्निहोत्रकी अग्नि प्रातःकाल और सन्ध्या समय दीखती है। हे कुन्तीनन्दन! यहां स्नान करनेसे उसही समय पाप नष्ट हो जाता है, इस लिये हे कुरुश्रेष्ठ! आप अपने भाइयोंके सहित यहां स्नान कीजिये, यहां स्नान करनेके पश्चात् तुमको कौशिकी नदी मिलेगी, जहां विश्वामित्र मुनिने घोर तप किया था। राजा युधिष्ठिरने अपने पुरुषोंके सहित नन्दामें स्नान किया, वहांसे पवित्र, रम्य, सुन्दर, शीतल जलवाली कौशिकी नदीको चले। श्रीलोमश मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह यही पवित्र देवनदी कौशिकी है, यही विश्वामित्र मुनिका रमणीय आश्रम है, और यह महात्मा काश्यप मुनिका पवित्र आश्रम है। यहीं जितेन्द्रिय तपस्वी काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था, जिन्होंने अपने तपके प्रभावसे जल बरसाया था, जिनके भयसे अकालमें इन्द्रने वर्षा करी थी, वह काश्यपके

पुत्र तेजस्वी शृंगी ऋषि हरनीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, यह अद्भुत वार्त्ता लोमपाद राजाके राज्यमें हुई थी, जिनको जल वरसनेके पश्चात् राजा लोमपादने अपनी पुत्री शान्ता इस प्रकार दान करी थी जैसे सूर्य्यने सावित्री। राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मन्! काश्यप मुनिके वीर्य्य और हरिनीके गर्भसे ऋष्यशृङ्ग मुनिका जन्म किस प्रकार हुआ? क्योंकि यह योनि सम्बन्धके विरुद्ध जान पड़ता है, कैसे कैसे उन्होंने तप किया? और अकालके समयमें उस बुद्धिमान बालकके भयसे वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने क्यों जल बरसाया था? और जिसने उस हरिनरूपी महामुनिके चित्तको लुभाया था, वह व्रत धारिणी राजपुत्री शान्ता कैसी रूपवती थी, हमने सुना है, कि राज ऋषि महाराज लोमपाद परम धार्म्मिक थे, तब उनके राज्यमें इन्द्रने क्यों नहीं पानी बरसाया था? हे भगवान! इस सब कथाको आप हमसे विस्तारपूर्व्वक और ठीक ठीक कहिये हमको सुननेकी बहुत इच्छा है, श्रीलोमश मुनि बोले हे महाराज! तपसे आत्मदर्शी प्रजापतिके समान तेजवाले अमोघ वीर्य्य विभाण्डक नामक ऋषिके जिस प्रकार प्रतापवान ऋष्यशृङ्ग पुत्र हुए सो कथा हम आपसे कहते हैं, सुनिये। तेजस्वी काश्यप मुनिके पुत्र शृङ्गी ऋषि बालक होने परभी बूढ़ोंके समान थे, देवतोंके समान तेजस्वी काश्यप मुनि एक बड़े तड़ागके तट पर बैठकर तप करते थे, एक दिन उन्होंने जलमें स्नान करते उर्व्वशी अप्सराको देखा, देखतेही उनका वीर्य्य स्खलित होगया, हे राजन्! उस वीर्य्यको एक हरिणी पी गई, वह हरिणी बहुत प्यासी थी, इस लिये गर्भिणी हो गई। वह हरिणी पहले जन्ममें देवकन्या थी, ब्रह्माके शापसे हरिनी बनी थी और ब्रह्माने यहभी कह दिया था, कि जब तेरे गर्भसे मुनिका जन्म होगा तबही तू इस योनिसे छूटेगी, ब्रह्माका वचन अमोघ होनेके कारण और होनेवाले कार्य्यके अवश्य होनेके कारण उस हरिणीके गर्भसे महामुनि ऋष्यशृङ्ग का जन्म हुआ; ऋष्यशृङ्ग तप करनेके निमित्त सदा वनहीमें रहने लगे। हे राजन्! महात्मा ऋष्यशृङ्ग मुनिके सिर पर दो सींग थे; इसी लिये उनका नाम ऋष्यशृङ्ग हुआ। हे नरनाथ! उन्होंने अपने जन्ममें पिताके सिवाय दूसरे पुरुषोंको नहीं देखा था, इस लिये उनकी इच्छा ब्रह्मचारीही होनेमें रही। उसही समय महाराज दशरथने यज्ञ क्रिया था। उस समय अङ्गदेशके राजा का नाम लोमपाद था उस लोमपाद ने बुद्धिके भ्रमसे एक ब्राह्मणको कहा कि हम तुमको दान देंगे परन्तु फिर नहीं दिया, इस लिये महाराज लोमपादको [illegible] दिया. [illegible] [illegible]र पुरोहितोंके दोषसे उसके राज्यमें नौ वर्ष तक वर्षा न हुई, तब प्रजाको महा दुःख हुआ, तब राजा लोमपादने जल बरसानेमें समर्थ तपस्वी और महात्मा ब्राह्मणोंसे पूछा कि जिस उपायसे जल बरसे सो कहिये। तब पण्डित लोगोंने अपनी बुद्धिके अनुसार सम्मति बताई। उस सभामें एक मुनिने राजासे कहा कि हे राजेन्द्र! आपसे ब्राह्मण लोग क्रुद्ध होगये हैं, इसका प्रायश्चित्त कीजिये। हे पृथ्वीनाथ! आप काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गको बुलाइये वह केवल ब्रह्मचारी हैं, वे स्त्रियोंके सुखको कुछभी नहीं जानते और वनवासी हैं, यदि महात्मा ऋष्यशृङ्ग आपके राज्यमें आवें तो उसही समय वर्षा होय, इस बातमें कोईभी सन्देह नहीं है। हे युधिष्ठिर! राजा लोमपादने ब्राह्मणोंके ऐसे वचन सुन पवित्र स्थानमें जाकर अपना प्रायश्चित्त किया और ब्राह्मणोंको प्रसन्न कर फिर अपने घरमें आये, जब प्रजाने सुना कि महाराज आगये तो बहुतही आनन्द माना, अनन्तर अंगराज लोमपादने मन्त्र जाननेवाले मन्त्रियोंको बुलाकर उनसे बूझ ऋष्यशृङ्ग

मुनिके बुलानेका यत्न किया, उन्होंने शास्त्र जाननेवाले सब अर्थोंके पण्डित नीति निपुण मन्त्रियोंकी सम्मतिसे ऋष्यशृंगके बुलानेका उपाय स्थिरकर मुख्य वेश्याओंको बुलाया, अनन्तर राजाने प्रवीण वेश्याओंसे कहा कि तुम किसी यत्नसे ऋषिपुत्र ऋष्यशृंगको यहां ले आओ हे सुन्दरि! उनके चित्तको लुभाकर विश्वास देकर हमारे राज्यमें ले आओ। वेश्याओंको राजाके वचन सुन इधर राजाका और उधर ऋषिका भय हुआ, अनन्तर सब वेश्याओंने मलीन वर्ण और दुःखित होकर कहा कि हे महाराज! यह काम होनेके योग्य नहीं है, तब एक बूढ़ी स्त्री राजासे बोली, कि हे महाराज! मैं उस तपोधन ऋषिके लानेका उपाय करूंगी, परन्तु आप आज्ञा दीजिये कि जो मेरी इच्छा हो वही करूं, तब मैं ऋषिपुत्र ऋष्यशृङ्गको ला सकूंगी। राजाने उसके मनका सब अभिप्राय जानकर उसको बहुत धन और अनेक प्रकारके रत्न दिये, हे राजन्! वह बूढ़ी स्त्री रूपसे भरी हुई नवीन यौवनवाली स्त्रियोंका संगमें ले शीघ्रही वनको चली गई।

११० अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! उस बूढ़ी स्त्रीने राजाकी आज्ञा मान उनकी कार्य्यसिद्धके निमित्त अपनी बुद्धि और राजाकी आज्ञासे अनेक फूले फले बनाये हुए वृक्षोंसे शोभित अनेक प्रकारके गुल्मोंके सहित मीठे फूल और फलोंसे भरा हुआ, परम रमणीय विचित्र दर्शनवाला एक नावोंका स्थान बनाया, और उस नावको शृङ्गऋषिके आश्रमके समीपही बांध दिया और आश्रमसे समीपही पुरुषोंके संग अनेक प्रकारके विहार करने लगी। एक दिन काश्यप मुनिका एकान्तमें बैठे देख अपनी बुद्धिमती पुत्रीको सब कार्य्य समझा उनके पास भेजा, वह बुद्धिमती वेश्या नित्य तप करनेवाले मुनिके आश्रममें जाकर काश्यप मुनिके पुत्र शृङ्गीऋषिको देखकर कहने लगी। वेश्या बोली, हे मुने! कहिये आपके आश्रममें कुशल तो है? आपके यहां फल मूल तो उत्पन्न हुए हैं? कहिये आप आनन्दसे विहार तो करते हैं? मैं आज आपको देखनेहीको यहां आई हूं, कहिये आपके आश्रमके तपस्वी लोग तो अच्छे हैं न? कहिये, उनका तप तो आनन्दसे होता है? परम तेजस्वी आपके पिता काश्यप मुनि आपसे प्रेम करते हैं न? हे ऋष्यशृङ्ग! आपका वेदपाठ तो होता है?

श्रीऋष्यशृङ्ग मुनि बोले, हम तुमको ज्योतिके समान प्रकाशमान देखकर प्रणाम करनेके योग्य जानते हैं, हम धर्म्मके अनुसार पाद्य, अर्घ्य, फल और मूल देते हैं, यह कुशका आसन पड़ा है, और इस पर यह काले हरिनका चमड़ा बिछा है, इस पर आप सुखसे बैठिये। हे ब्रह्मन्! आपका कहां आश्रम है? और आपका क्या नाम है? और कौनसा देव समान व्रत तुमने धारण किया है? वेश्या बोली, हे काश्यप पुत्र! हमारा रमणीय आश्रम इस पर्व्वतके पास यहांसे बारह कोस है, हमको प्रणाम करना आपका धर्म्म नहीं है, और हम जलकाभी स्पर्श नहीं करेंगे, हे ब्रह्मन्! हम आपको प्रणाम करने योग्य हैं, परन्तु आप हमको प्रणाम करने योग्य नहीं हैं। आपका परम धर्म्म हमसे लपटनाही है। श्रीऋष्यशृंग मुनि बोले, हम तुमको पके हुए भिलावें, आमले, इंगदी, धन्वन और पीपलके फल देते हैं, आप सुखसे भोजन कीजिये। श्रीलोमश मुनि बोले, उस वेश्याने उन सबको परित्याग करके ऋष्यशृंग मुनिको उत्तम उत्तम भोजन दिये। मुनि उसके रूपको देख और भक्षणकर बहुत प्रसन्न हुए, तब उस वेश्याने उनको सुगन्धसे भरी हुई माला विचित्र प्रकाशमान वस्त्र और पीनेकी उत्तम उत्तम चीज दई,

फिर प्रसन्न होकर हंसने और खेलने लगी। अनन्तर एक गेंद लेकर फली हुई लताके समान अनेक हाव भाव दिखाती हुई वहीं खेलने लगी, कभी मुनिके शरीरोंमें अपने शरीरको रगड़ती और कभी उनसे लपट जाती थी, कभी लज्जाहीन और मतवाली होकर शाल, अशोक, और फूले हुए तिलोंके फूलोंसे खेलती थी, इस प्रकार उसने महर्षि काश्यपके पुत्र ऋष्यशृङ्गको लुभा लिया। अनन्तर ऋष्यशृङ्गको विकार सहित देख उनके शरीरोंको वार वार मल उनकी ओर देखती हुई अग्निहोत्रका छल करके धीरे धीरे चली गई। उसके जानेके पीछे ऋष्यशृङ्ग कामदेवसे उन्मत्त होगये। एकान्तमें बैठ करके केवल उसहीका ध्यान करने लगे, और रोगीके समान सांस लेने लगे, उसही समय पिङ्गलवर्ण नेत्रवाले नखूनतक रुआंसे घिरे हुए, वेदपाठी, समाधि करनेवाले कश्यप मुनिके पुत्र विभाण्डक मुनि आये, उन्होंने अपने पुत्रको विपरीत एकान्तमें बैठे ध्यान करते, वार वार स्वास लेते केवल ऊपरको देखते हुए देख बूझा, हे पुत्र! तुम आज समाधि क्यों नहीं लाते हो? तुमने अपने अग्निहोत्रको आज क्यों, भुला दिया? क्या आज तुमने स्रुक और स्रुवेका स्पर्श नहीं किया? क्या तुमने आज गौके पास बछड़ेको नहीं छोड़ा? हे पुत्र! हम आज तुमको और दिनके समान न देख कर केवल चिन्तारत देखते हैं, आज तुम इतने दीन क्यों हो? हमारे पीछे आज यहां कौन आया था?

१११ अध्याय समाप्त।

श्रीऋष्यशृङ्ग मुनि बोले, यहां आज एक जटाधारी आये थे, न बहुत बहुत लम्बे और न बहुत छोटे थे, उनका रङ्ग सोनेके समान नेत्र कमलके समान थे, भूषणोंसे साक्षात् देवता जान पड़ते थे, महा रूपवान सूर्य्यके समान तेजस्वी, चिकने और गोरे शरीरवाले थे, उनके नेत्र काले, जटा सुगन्धसे भरी काली बहुत लम्बी और सोनेकी रस्सियोंसे गुही थीं, उनके कण्ठमें एक भूषण ऐसा प्रकाशित था जैसे आकाशमें बिजुली, और हृदयमें दो पिण्ड थे, वे बहुत मनोहर और रोमरहित थे, उनका नाभिदेश बहुतही सुन्दर था, उनकी कमर अत्यन्त पतली मानो शरीरमें थीही नहीं और उनके वस्त्रोंके भीतर एक सोनेकी करधनी अत्यन्त शोभित थी और एक विचित्र वस्तु उनके पैरमें थी जिससे शब्द होता था, उनके हाथोंमें बजनेवाली नौगरी इस प्रकार शोभित थीं, जैसी मेरी यह कमलमाला। जब वह चलते थे तो वे सब भूषण ऐसे बजते थे, जैसे तालावमें मतवाले हंस बोलते हैं। उनके वस्त्र ऐसे सुन्दर थे, जैसे हमारे नहीं हैं, उनका मुख ऐसा सुन्दर था कि जिसको देखकर मेरा चित्त बहुत प्रसन्न हुआ, उनकी कोकिलके समान वाणी सुनकर मेरा हृदय व्यथित हो गया। उसका स्वास ऐसा सुगन्धित था जैसे वसन्त ऋतु की वायु। हे तात! वह ब्रह्मचारी उत्तम गन्ध और वायुसे सेवित होकर बहुत सुन्दर भान होता था, उनकी जटा अत्यन्त संस्कार करी हुई और माथेके सामने से दोभाग दिखाई देती थीं, उनके कान पर अत्यन्त रूपवाले समान दो आभूषण थे, वे ब्रह्मचारी एक बेगनके फलको दक्षिण हाथमें लेकर वार वार उस भूमिकी ओर फेंकते और अद्भुत रूपसे उछालते थे, हे तात! उसको वार वार मारकर वे इस प्रकार कांपते थे जैसे वायु लगने से वृक्ष कांपता है, उस देव पुत्रके समान ब्रह्मचारीको देख मेरे हृदयमें परम प्रेम और आनन्द उत्पन्न हुआ है, उसने मेरे शरीरसे अपने शरीरको मिलाकर मेरे मुह पर अपनी जटाओंको डाला, अनन्तर अपने मुखसे मेरे मुखको मिलाकर कुछ शब्द कहा, उससे

मुझको बहुत आनन्द हुआ, मैंने पाद्य और यह फल उनको दिये, परन्तु उन्होंने ग्रहण नहीं किये, और कहा कि हम ब्रत करते हैं, अनन्तर उन्होंने मुझको कुछ खानेकी वस्तु दई, मेरे लाये हुए फलमें उनके फलोंके समान स्वाद नहीं थे, जैसे उन फलोंके बकले थे, ऐसे इन फलोंके नहीं हैं। उस सुन्दर रूपवाले ब्रह्मचारीने मुझको बहुत स्वादवाला जल पीनेको दिया, जिसके पीतेही मुझको अत्यन्त आनन्द हुआ और मुझे जान पड़ा कि, पृथ्वी चल रही है, उन्होंने मुझको गन्धसे भरी हुई, रेशममें गुही हुई विचित्र रूपवाली माला दई है, जो तपसे प्रकाशमान ब्रह्मचारी यहां आये थे, उनके जानेसे मेरा चित्त उन्मत्तके समान हो गया है, और शरीर जले जाते हैं, मेरी इच्छा है कि या तो मैंही उनके आश्रमको शीघ्र चला जाऊं या वेही यहां आकर सदा रहैं। हे तात! मैं अब उनके आश्रमको जाता हूं देखूं उन्होंने कौनसा ब्रह्मचर्य्य धारण किया है? मेरी इच्छा है कि उन आर्य्यधर्म्मवाले ब्रह्मचारीके सङ्ग रह कर वैसाही तप करूं जैसा वे करते हैं। हे तात! उनके सङ्ग रहने और वैसेही काम करनेकी मेरी इच्छा हृदयको दुःखित कर रही है।

११२ अध्याय समाप्त।

श्रीविभाण्डक मुनि बोले, हे पुत्र! अनेक राक्षस लोग ऐसाही बहुत रूप धारण करके बनोंमें घूमा करते हैं, वे लोग बहुत बलवान रूपवाले और तपस्यामें विघ्नकारी होते हैं। हे तात! वे परम सुन्दर रूपवाले राक्षस अनेक उपाय करके मुनियोंको लुभा लेते हैं, उन उत्तम रूपवालोंसे लोभित होकर कामसुख और लोकसे मुनि लोग नष्ट हो जाते हैं। स्थिर मनवाले कल्याणकी इच्छा करनेवाले मुनीश्वर लोग अत्यन्त प्रार्थना करने पर यदि उनकी सेवा करने लगते हैं, तो लोग तपमें विघ्न करके मुनिको कामको ओर झुका देते हैं, इस लिये उन्हें नहीं देखना चाहिये। हे पुत्र! यह जो माला तुमको उसने दई थी और पीनेकी वस्तु तुम्हें दी थी, ये सब पापियोंके योग्य हैं, वह जल नहीं बरन मद्य था, यह उत्तम गन्ध और परम प्रकाशवाली माला मुनियोंके योग्य नहीं है। इस प्रकार अपने पुत्रके मनमें उस स्त्रीको राक्षसरूप स्थिर करके उसको ढूंढ़ने लगे, जब तीनदिन ढूंढ़ने पर न पाया तो अपने आश्रमको चले गये, जब चौथे दिन विभाण्डक मुनि बेदोक्त विधिके अनुवार फल लेनेको गये, तब खूब सुन्दर बेष बनाकर वह बेश्या ऋष्यशृङ्ग मुनिको लुभानेके निमित्त आश्रम पर आई, उसको देखतेही ऋष्यशृङ्ग मुनि प्रसन्न होगये और उसी समय पृथ्वीमें गिर पड़े और उससे कहने लगे कि तुम जल्दी आओ जबतक हमारे पिता यहां न आवें तभीतक तुम्हें यहां रहना होगा, अनन्तर उस बेश्याने काश्यपके पुत्र ऋष्यशृङ्गको अपने सङ्ग लेकर उस नावमें बिठा दिया और उनको अनेक उपायोंसे प्रसन्न करती हुई राजा लोमपादके घरमें पहुंची। अनन्तर उस बेश्याने सुन्दर नावको ऐसे स्थान पर खड़ा किया, जहांसे आश्रम दीखता था, अनन्तर ऋष्यशृङ्गको नावसे उतार वैसेही नावके आश्रम और विचित्र बनमें विठाया। राजा लोमपाद विभाण्डक मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गको अपने रानवासमें ले गये, उन्होंने वहां जाकर देखा कि मेघ प्रवेश हुआ, और सब जगत् जलसे पूर्ण हो गया, अनन्तर राजा लोमपादने सब काम सिद्ध करके ऋष्यशृङ्ग मुनिको अपनी शान्ता नामक पुत्री दई और जिसमें उनका क्रोध शान्त हो, इस लिये अनेक गो और वाहन दिये, अनन्तर राजाने अनेक पशु देकर वीर पशुपालोंसे कहा कि जब विभाण्डक मुनि अपने आश्रम पर

आकर तुमसे अपने पुत्रके समाचार पूछें तो, हाथ जोड़कर कहना कि, हे भगवान्! यह सब पशु और वाहन आपके पुत्रहीके हैं, हम सब आपके दास और वचनसे बंधे हैं, कहिये आपका कौनसा काम करें। अनन्तर महाक्रोधी विभाण्डक मुनि मूल और फल ले अपने आश्रम पर आकर अपने पुत्रको ढूढ़ने लगे, जब न पाया, तो महा क्रोध किया, उन्होंने क्रोध करके विचारा कि अवश्य राजाने कुछ विधान किया है, उस समय मुनिको ऐसा क्रोध हुआ मानो पृथ्वीको फाड़ डालेंगे। अनन्तर चम्पापुरी, अङ्गराज अङ्गदेश और राजाके नगरोंको भस्म करनेकी इच्छासे चले, मार्गमें काश्यप मुनि अत्यन्त थक गये और भूखसे बहुत व्याकुल हो गये, तब ऋद्धियोंसे भरे हुए अनेक गोपालोंको देखा, उन ग्वालोंने उनकी राजाके समान पूजा करी और विभाण्डक मुनि रातभर उन्होंके सङ्ग रहे, मुनीश्वरने उनसे अत्यन्त सत्कार पाकर पूछा कि ये सब गो और गोपाल किसके हैं? उन्होंने कहा कि यह सब धन आपहीका है, आपहीके पुत्रने उपार्जन किया है। इसी प्रकार विभाण्डक मुनि स्थान स्थान पर पूजा पाते और मीठी वाणी सुनते हुए चले इससे उनका क्रोध भी शान्त होगया। अनन्तर वे राजाके नगरमें पहुंचे, राजाने उनकी बहुत पूजा करी, जब विभाण्डक मुनिने अपने पुत्र ऋष्यशृङ्गको स्वर्गमें इन्द्रकी समान राजाके भवनमें विराजमान देखा और अपने पुत्रकी स्त्री शान्ताकोभी बिजुलीके समान रूपवती देखा। हे नरनाथ! विभाण्डक मुनि पुत्रवधु शान्ता, पुत्रके धन और गांवोंको देख अत्यन्त प्रसन्न हुए और उनका क्रोधभी शान्त हो गया, वे राजाकी प्रशंसाभी करने लगे। अनन्तर सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी विभाण्डक मुनि अपने पुत्रको वहीं रहनेकी आज्ञा देकर बोले कि जब तुमको पुत्र उत्पन्न होजाय और इस राजाके सब काम कर चुको, तब वनहीको चले आना, अनन्तर ऋष्यशृङ्ग मुनिने वैसाही किया और जहां इनके पिता थे वहींको चले गये। हे नरेन्द्र! जिस प्रकार आकाशमें रोहिनी चन्द्रमाकी सुन्दरी, अरुन्धती वशिष्टकी, लोपामुद्रा अगस्त्यकी, दमयन्ती नलकी, और नारायणी तथा इन्द्रसेना मुद्गलकी सेवा करती, थीं तैसेही अनुकूलाचारिणी शान्ता भी प्रीतिके सहित वनवासी ऋष्यशृङ्गकी सेवा करने लगी। हे अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधिष्ठिर! यह पुण्य कीर्त्तिवाला तालाब उनहीका है। हे राजन्! इसमें स्नान करके कृतकृत्य और शुद्ध होकर दूसरे दूसरे तीर्थोंको चालिये।

११३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर वहांसे कौशिकी पर गये, वहांसे क्रमसे सब तीर्थ और देवस्थानोंमें जाते हुए गङ्गा और समुद्रके सङ्गममें पहुंचे, उन्होंने पांच सौ नदियोंके सङ्गममें स्नान किया, अनन्तर महाराज वीर युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित कालङ्ग देशको और समुद्रके तटसे चले। श्रीलोमश मुनि बोले हे कुन्तीनन्दन! यही कालङ्ग देश है, यही वैतरणी नदी है; यहीं धर्म्मने देवतोंकी शरण लेकर यज्ञ करी थी। यहां ऋषियोंके सहित यह यज्ञवाला पर्व्वत शोभित है, इसके उत्तर ओर अनेक ब्राह्मण लोग रहते हैं। यह पर्व्वत स्वर्ग जानेवाले पुरुषोंका विमानके समान है, इसी स्थानमें पहले ऋषियोंने अनेक यज्ञ किये थे। हे राजेन्द्र! यहीं पर शिवजीने यज्ञके निमित्त पशुको मारा था, अनन्तर उस पशुको लेकर शिवजीने कहा कि यह हमारा भाग है; जब वह पशु गुप्त हो गया तो, देवतोंने शिवजीसे कहा कि तुम दूसरेके धनको अपना मत बतलाओ, सब धर्म्मका नष्ट मत

करी। अनन्तर सब देवतोंने शिवजीको स्तुति करी; अनन्तर वह यज्ञ समाप्त हुआ तब देवतोंने उनका तर्पण और मान किया; तब उन्होंने उस पशुको छोड़ विमान पर चढ़ स्वर्गयात्रा करी। हे युधिष्ठिर! उसी दिनसे शिवका यज्ञमें भाग स्थिर हुआ, और देवतोंने शिवके भयसे यह सङ्कल्प किया कि, यह भाग सब भागोंसे उत्तम होगा। इस स्थानमें जो पुरुष इस कथाको कहकर जलको छूता है, उसको देवलोकका मार्ग दीखने लगता है, श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर द्रौपदीके सहित महाभाग पाण्डव लोग वैतरणीके पार उतर पितरोंका तर्पण करने लगे। युधिष्ठिर बोले हे लोमश! हम इस जलको स्पर्श करते-ही तपके बलसे मनुष्य स्वभावसे छूट गये। हे सुव्रत! अब आपकी कृपासे हमको सब लोक दीखने लगे, जप करनेवाले महात्मा वैखानस मुनियोंका शब्द सुनाई देता है। श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! हे पृथ्वीनाथ! जो शब्द आपको सुनाई देता है, सो यहांसे तीन लाख योजन पर है, अतएव आप चुप रहिये। हे पृथ्वीनाथ! हे राजेन्द्र! यह जो वन दीखता है, सो ब्रह्माका है। इसीमें प्रतापवान विश्वकर्म्माने यज्ञ किया था, उसी यज्ञमें ब्रह्माने महात्मा कश्यपको पर्व्वत और वनोंके सहित पृथ्वी दे दी थी। हे कुन्तीनन्दन! कश्यप मुनिके पास जातेही पृथ्वी रोने लगी और क्रोध करके ब्रह्मासे बोली हे भगवन्! आप मुझको किसी पुरुषको मत दीजिये, मैं आपके इस अमोघ दानसे रसातलको चली जाऊंगी। हे पृथ्वीनाथ! पृथ्वीको रोते हुए देख, भगवान कश्यप मुनि उसको प्रसन्न करने लगे। हे पाण्डव! पृथ्वी उनके तपसे प्रसन्न होकर पुनः जलसे निकली और यज्ञकी वेदीके समान शोभित होने लगी, हे राजन्! इसी लिये यह पृथ्वी वेदीके समान दीखती है आप इस पर बैठिये तो आपको बहुत बल होगा। हे राजन्! यह वेदी समुद्रमेंसे निकली है, आप इसके ऊपर बैठकर अकेलेही समुद्रको पार हो जाइये और हम ऐसा स्वस्ति मन्त्र पढ़ेंगे जिससे आप इसके ऊपर बैठ सकें। हे आजमीढ़! यह वेदी पुरुषके छूनेहीसे समुद्रमें चली जाती है। हे देवेश! आप जगतके रक्षक और स्वामी हैं, हम आपको प्रणाम करते हैं, आप इसे खारे जलके समुद्रमें रक्षा कीजिये। अग्नि, मित्र योनि, जल, देवी, विष्णु ये सब अमृतकी नाभी हैं। हे पाण्डव! आप इस मन्त्रको पढ़कर इस वेदी पर बैठिये। हे पाण्डव! पुरुषको उचित है, कि आगे लिखे हुए मन्त्रको पढ़कर समुद्रमें जाय। मन्त्र यह है, "हे समुद्र! अग्नि तुम्हारी योनि, और यज्ञ तुम्हारा देह है, तुम विष्णुके वीर्य्यको धारण करते हो, तुम मोक्षके साधन हो। हे पाण्डव! इस प्रकार सत्यवादी पुरुष नदियोंके पति समुद्रमें जाय। हे कुरुश्रेष्ठ! इस मन्त्रके विना पढ़े जलके स्वामी समुद्रको कुशासेभी नहीं छूना चाहिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महात्मा युधिष्ठिर स्वस्ति मन्त्र सुनकर समुद्रमें गये, और लोमशकी आज्ञानुसार महेन्द्र पर्व्वत पर एक रात्रि रहे।

११४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने वहां एक रात वास करके भाइयोंका बहुत सत्कार किया और लोमश मुनिने युधिष्ठिरसे वहांपर भृगुवंशी, अङ्गिरावंशी वशिष्टवंशी और कश्यपवंशी ऋषियोंका वर्णन किया। उन ऋषियोंके पास जाकर राजर्षि युधिष्ठिरने हाथ जोड़के प्रणाम किया। परशुरामके अनुचर अकृतव्रण वीरसे कुशल प्रश्न किया, आप कब भगवान परशुरामका दर्शन ऋषियोंको करावेंगे? उसी उत्सवमें मैं भी भृगुवंशी रामके दर्शन करना चाहता हूं। अकृतव्रण बोले, अन्तर्यामी भगवान परशुरामने

आपको आते हुए जान लिया है, आपमें परशुरामकी बड़ी प्रीति है, वह आपको शीघ्रही दर्शन देंगे। चतुर्दशी, और अष्टमीको ऋषि लोग परशुरामका दर्शन करते हैं, आजकी रात्रि बीतने पर कल चतुर्दशी होगी। युधिष्ठिर बोले आप भगवान यमदग्नि-पुत्र परशुरामके सङ्ग रहनेवाले हैं, आपने उनके पहले कर्म्मोंको प्रत्यक्ष देखा है, सो आप अब यह कहिये परशुरामने क्षत्रियोंको युद्धमें क्यों और कैसे जीता? अकृतव्रण बोले, हे राजशार्दूल! मैं आपसे महा उत्तम इतिहास भृगुवंशी यमदग्निके पुत्र परशुरामके चरित्रोंका वर्णन करता हूं, कि कैसे हैहयवंशी कृतवीर्य्यके पुत्र अर्ज्जुन को परशुरामने मारा था। हे पाण्डव! उस अर्ज्जुनके हजार हाथ थे। दत्तात्रेयकी कृपासे उसको सुवर्णका विमान, हजार हाथ और सब ऐश्वर्य्य प्राप्त हुआ था, उनके रथकी गति कहीं नहीं रुकती थी, वह रथ पर चढ़के सर्व्वत्र घूमता था। वरदानके अभिमानसे देवता, यक्ष और ऋषियोंको तथा सम्पूर्ण प्राणियोंको चारों ओर पीड़ा देने लगा, तब सब देवतोंने इकट्ठे होके देवतोंके देवता असरारि सत्यपराक्रमी विष्णुसे विनय की। हे भगवन्! संसारकी रक्षाकेवास्ते अर्ज्जुनको मारिये, वह हैहयवंशका स्वामी दिव्य विमान पर बैठके सचीके स्वामी इन्द्रको दुःख देता है। ऐसा सुनके भगवान विष्णु कार्त्तवीर्य्य अर्ज्जुनके नाश करनेका इन्द्रसे विचार करने लगे। देवपति इन्द्रने संसारके कल्याणका विचार बताया; उसको सुनके संसारके पूजने योग्य विष्णु अपने पवित्र आश्रम बदरिकारण्यको चले गये। हे युधिष्ठिर! उसी समयमें एक महाबली राजा कन्नौज देशमें था। जिसका गाधी नाम जगत्में प्रसिद्ध था। वह राजा वनमें बसनेके वास्ते गया और वनहीमें उसके अप्सराके समान एक कन्या उत्पन्न हुई, भृगुवंशी ऋचिकने उस कन्याको राजासे मांगा। गाधी ऋचिकसे बोले हे सत्यव्रती ब्राह्मण! हमारे कुलके अनुसार पुरुषोंने रीत बांध दी है कि, जो तुम हजार स्यामकर्ण घोड़े मुझे देओ, तो मैं अपनी कन्याका तुमसे विवाह करूं, अन्यथा मैं तुमको कन्यादान नहीं कर सकता हूं। ऋचिक बोले, कि मैं आपको एक हजार स्यामकर्ण घोड़े दूंगा, आपकी कन्या मेरी स्त्री हो। अकृतव्रण बोले हे युधिष्ठिर! ऐसी प्रतिज्ञा करके ऋचिकने वरुणसे जाकर कहा, एक हजार पाण्डु रङ्गके स्यामकर्ण घोड़े मुझे दीजिये, मैं इन्हें देकर अपना विवाह करूंगा। वरुणने ऋचिकको एक हजार स्यामकर्ण घोड़े दिये। कन्नौज देशमें गङ्गाके तटपर जहां वे घोड़े आकर खड़े हुए, उसका नाम अश्वतीर्थ हुआ। तब राजा गाधीने अपनी सत्यवती नामकी कन्या ऋचिकको देदी। हे राजन्! इस विवाहमें देवता लोग बरात आये थे। देवतोंको देख, हजार घोड़े दे, ऋचिक मुनि धर्म्मके सहित उस कन्यासे विवाह करके स्वेच्छासे विहार करने लगे। हे राजन्! भृगुवंशश्रेष्ठ भृगु मुनिने जब सुना कि ऋचिकका व्याह होगया, तो उनको देखनेको आये। अपने पुत्रको स्त्रीके सहित देखके बहुत प्रसन्न हुए। जब ऋचिक मुनिने देखा कि हमारे पिता आये, तो दोनों स्त्री पुरुष खड़े होगये और प्रीतिके सहित देव पूजित पिताकी पूजा करी; उनको बिठलाकर दोनो हाथ जोड़के खड़े रहे। तब भगवान भृगु मुनिने प्रसन्न होकर बहूसे कहा, हे सुभगे! तुम्हारी जो इच्छा हो हमसे सोई वरदान मांगो, हम देनेको उपस्थित हैं। सत्यवतीने अपने ससुरको प्रसन्न करके कहा कि हे भगवन्! आप हमको यह वरदान दीजिये कि हम और हमारी माता पुत्रवती हों। श्री भृगुमुनि बोले, जिस दिन तुम्हारा और तुम्हारी माताका ऋतुस्नान हो और पुंसवनका दिन आवे, उस दिन तुम्हारी माता पीपलसे और